अमृतवाणी

ब्रह्मलीन सिद्ध परम संत

श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

अर्थ एवं व्याख्या

न्यायमूर्ति श्री शिवदयाल जी श्रीवास्तव

(रिटायर्ड चीफ जस्टिस, मध्य प्रदेश)

अमृतवाणी

ब्रह्मलीन सिद्ध परम संत

श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

अर्थ एवं व्याख्या

न्यायमूर्ति श्री शिवदयाल जी श्रीवास्तव

(रिटायर्ड चीफ जस्टिस, मध्य प्रदेश)

भक्त श्री हंसराज जी विज

पोस्ट गोहाना

जिला सोनीपत (हरियाणा)

पं० राम अवतार शर्मा

अशोक भवन, ग्वालियर – १

श्री बनवारी लाल गुप्ता

राम निकेत, खेड़ापति रोड, ग्वालियर – २

॥ श्रीराम ॥

अमृतवाणी

रचयिता

ब्रह्मलीन परम सन्त

श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

अर्थ एवं व्याख्या

न्यायमूर्ति श्री शिवदयाल जी श्रीवास्तव

(रिटायर्ड चीफ जस्टिस, मध्य प्रदेश)

प्रथम संस्करण – १९६९
प्रकाशक:
पं० रामअवतार शर्मा,
भू० पू० संसद सदस्य,
अशोक भवन, दाल बाजार, ग्वालियर – १
मूल्य: २१,००० लिखित राम नाम

नूतन परिवर्धित डिजिटल संस्करण – २०२६
प्रकाशक – श्री राम परिवार

प्राक्कथन

(प्रथम संस्करण)

आज विश्व में सर्वत्र अशांति व्याप्त है। परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, अशांति और विफलता दिखाई देती है। ज्यों ज्यों विज्ञान का विकास होता जा रहा है वैसे वैसे विश्व में असंतोष बढ़ता जा रहा है। विज्ञान की अपार शक्ति विश्व की समस्याएं' हल करने में असफल सिद्ध हुई है। करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति मानव जगत के विनाश के लिये खर्च की जा रही है। इन सब का मूल कारण है मानव के प्रति प्रेम और विश्वास का अभाव। मनुष्य अहंकार, परिग्रहण और वासनाओं का शिकार है। भौतिकवाद की ओर तेजी से बढ़ते हुए मानव को भौतिक समृद्धि भले ही मिल जाय किन्तु चिरन्तन सुख और शांति से वह दूर होता जाएगा। मानव जीवन के आध्यात्मिक स्वरूप का मनन, चिंतन करना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य का जीवन निष्कलुष एवं लौकिक विघ्न, बाधाओं से तभी दूर हो सकता है जब वह आध्यात्मिक शांति की ओर प्रेरित हो। जीवन को मंगलमय एवं सुखमय बनाने के लिये यह आवश्यक है कि वह साधु सन्त एवं महात्माओं के जीवन एवं उनकी अमृतमयी वाणी का श्रवण एवं मनन करें।

सन्त की महिमा अपार है। सन्त की वाणी का प्रभाव अलौकिक है। महापुरुषों के सत्संग से मनुष्य संसार की क्षुद्रता का परित्याग कर अनिर्वचनीय सुख अनुभव करता है। परम सन्त श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज ऐसे ही महापुरुष हैं जिन्होंने उपनिषद्, गीता, रामायण आदि जैसे महान ग्रन्थों की (हिन्दी में) रचना की। उनकी **अमृतवाणी** भी एक श्रेष्ठ रचना है। इसमें उनकी अनुभूतियों का निचोड़ भरा हुआ है। यह पुस्तक आकार में छोटी होते हुए भी 'गागर में सागर' के समान

है। **अमृतवाणी** का नित्य पाठ करने से निस्सन्देह ही भव-सागर से पार होना सम्भव है।

इस दृश्यमान जड़ चेतन लोक को 'जग' की संज्ञा इसलिए दी गई है कि हम जागें और 'संसार' इसलिये कि हम जीवन का संसार पहचाने। लेकिन मनुष्य के पूर्व संस्कार और वर्तमान लोक भौतिक वातावरण का प्रबल प्रभाव मनुष्य को इतना अधिक दबाये रखता है कि वह व्यावहारिक एवं लौकिक जीवन में जीवन के सार तत्व को ही विस्मृत कर देता है और वह विभिन्न आसक्तियों एवं कामनाओं में इस बुरी तरह फँस जाता है कि न तो वह कोई धार्मिक अथवा आध्यात्मिक चिन्तन कर सकता है और न ही कर्तव्य पथ पर सफलता के साथ अग्रसर हो पाता है। परन्तु भले-बुरे, गुण-अवगुण सभी विधि के उपजाए हुए हैं :–

जड़ चेतन गुन दोष मय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार॥

'अमृतवाणी' में **परम पूज्य स्वामी जी महाराज** ने **'राम नाम'** के महामंत्र का निर्वचन किया है। संत श्रेष्ठ श्री महाराज ब्रह्मलीन होने के समय तक सम्प्रदायवाद, जातिभेद तथा मत-मतान्तर की संकुचित सीमाओं से ऊपर उठकर सदैव इसी मंत्र का उपदेश करते हैं :–

मिथ्या है वाद-विवाद विरोध। मिथ्या है वैर निन्दा हठ क्रोध॥
मिथ्या द्रोह दुर्गुण दुख खान। राम नाम जप सत्य निधान॥

पूज्य महाराज जी के अनन्य सेवक **स्वर्गीय श्री भगवान दास जी कात्याल** को श्री रामाज्ञा हुई कि यह **'अमृतवाणी'** को सुन्दर सुसज्जित पुस्तक रूप में प्रकाशित करायें ताकि कल्याण एवं मुक्ति के पिपासु भक्तजनों को श्री रामामृत प्राप्त करने की इच्छा पैदा हो। इस पुस्तक के माध्यम से कोटि जन राम-नाम की महिमा समझकर उसका रसास्वादन कर सके, यही उनकी आकांक्षा थी।

जब 'अमृतवाणी' वर्तमान रूप में प्रकाशित होकर आई तो उस समय **श्री कात्याल जी** ऑल इन्डिया मेडिकल इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली में रुग्णावस्था में थे। उसकी एक प्रति उन्हें दिखाई गई तो वह आत्मविभोर हो उठे थे। उस समय मैं भी उनके समीप उपस्थित था।

'अमृतवाणी' वस्तुतः सुन्दर ढंग से पिरोई गई राम नाम की मणिमाला है। उसकी प्रत्येक शब्द-मणि का गूढ़ार्थ आत्मसात् कर जाप करने की आवश्यकता है। इसी कारण से 'अमृतवाणी की अर्थ सहित टीका' तैयार करने की आवश्यकता, उसके उपरोक्त रूप में प्रकाशित होने के समय से अनुभव की जा रही थी। स्वयं **स्व० लाला भगवान दास** का भी यही विचार था कि इस परम पावन 'अमृतवाणी' का अर्थ सहित पारायण करके साधक को अपूर्व लाभ हो सकता है।

अतः मुझे यह श्री रामाज्ञा हुई कि **'अमृतवाणी'** की सुन्दर, सरल एवं सुबोध अर्थ-सहित व्याख्या तथा टीका तैयार कर राम नाम के प्रसार में योगदान करूँ। परन्तु मैंने अपने आप को इस भगीरथ प्रयास करने के योग्य नहीं समझा।

अतः मैंने श्री महाराज के अनन्य भक्त और राम नाम में अटूट श्रद्धा रखने वाले अपने प्रिय बन्धु **माननीय मुख्य न्यायाधिपति म० प्र० श्री शिव दयाल जी** को यह कार्य भार सौंपा। यह उन्हीं का अथक परिश्रम तथा राम नाम में अटूट निष्ठा का परिणाम है कि आज **'अमृतवाणी'** अर्थ एवं व्याख्या सहित श्रद्धालु भक्त जनों के पास पहुँच रही है। इसका सारा श्रेय भाई **शिव दयाल जी** को है, मेरा योगदान तो नगण्य है।

यहाँ संक्षेप में **परम सन्त श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज** का परिचय देना असंगत न होगा। आपका जन्म पश्चिमी पंजाब के एक गांव में हुआ। अल्प आयु में ही आपके माता पिता का निधन हो गया था। आप संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित

थे। प्रारम्भ में आप जैन धर्म से अत्यधिक प्रभावित हुए। बाद में आर्य समाज की विचारधारा का आप पर प्रभाव पड़ा। विभिन्न धर्मों की पुस्तकों का आपने गहन अध्ययन किया। एक दिन आंतरिक प्रेरणा के वशीभूत आप सहसा ही हिमालय की गोद में स्थित डलहौजी की ओर प्रस्थान कर गए। वहीं एकांतवास में तपस्या प्रारम्भ कर दी। आपकी अन्तरात्मा 'राम' नाम की दिव्य ज्योति से आलोकित हो उठी। आपने उसी समय जन-जन को 'राम' महामन्त्र देने का संकल्प कर लिया और महाप्रयाण के समय (रविवार, १३ नवम्बर १९६०) तक इसी संकल्प को निभाया।

इस महान विभूति के बहुमुखी व्यक्तित्व के विषय में कुछ भी कहना 'सूर्य को दीपक दिखाने' के समान है। जिन्होंने उनके लोकोत्तर व्यक्तित्व की झांकी देखी है, वही उन्हें समझ सकते हैं। हम ग्वालियर वासियों को उनके दर्शन का सौभाग्य मुरारवासी **स्व॰ श्री देवेन्द्र सिंह बैरी जी** के निवास स्थान पर सन् १९४८ में प्राप्त हुआ था। उनके दर्शन तथा संपर्क से जीवन सचमुच ही कृतकृत्य हो गया।

अन्त में मैं केवल इतना ही निवेदन करना चाहता हूँ कि **'अमृतवाणी'** अलौकिक जीवन शक्ति का स्रोत है। उसके प्रत्येक शब्द का अर्थ समझ कर उसे हृदयंगम कर नित्य प्रति पाठ करने से हृदय में राम नाम अनाहत रूप से निनादित होने लगता है। इससे आत्मिक शक्ति का विकास होकर भौतिक एवं पारलौकिक जीवन सार्थक एवं सफल होगा।

राम नाम हो सदा सहायक । राम नाम सर्व सुखदायक ॥
राम नाम प्रभु राम की टेक । शरण शांति आश्रय है एक ॥

विनीत :

राम अवतार शर्मा

॥ सर्वशक्तिमते परमात्मने श्रीरामाय नमः ॥

भूमिका

अमृतवाणी एक अति पावन प्रेरणादायक, पथ-प्रदर्शक और सिद्ध ग्रंथ है। इसका प्रभाव और महात्म्य अनिर्वचनीय है। इस ग्रंथ के मुख्य प्रतिपादित विषय है राम-कृपा और राम नाम की महिमा। रामोपासक का लक्ष्य है श्रीराम की प्राप्ति, श्रीराम का दर्शन।

(१)

(१) सर्वप्रथम प्रकरण अर्थात् ग्रंथ के आरम्भ में ही **'राम-कृपा अवतरण'** शीर्षक से १६ पदों में ग्रन्थकार ने साधना दर्शन के सार तत्व और महात्म्य का निरूपण किया है। यथार्थ में वह एक अनुभव युक्त घोषणा है। श्रीराम का श्रेष्ठ सुन्दर रूप है राम-कृपा अतः राम-कृपा की प्राप्ति श्रीराम की प्राप्ति है, राम-कृपा का दर्शन श्रीराम का दर्शन है, राम-कृपा का अवतरण श्रीराम का अवतरण है। श्रीराम का अवतार-रूप अपनी आंखों से देखने के योग्य हम भले ही न हों, श्रीराम-कृपा के अवतरण के लिए हम साधना अवश्य कर सकते हैं और करनी ही चाहिए (यदि मानव जीवन पाकर उसको सार्थक और सरस बनाना है तो)।

राम-कृपा अवतरण की साधना है राम का ध्यान, आराधना, नाम जप। राम मंत्र में श्रीराम सदा विराजते हैं। राम (नाम) और राम (नामी) अभिन्न हैं। राम नाम का जप (१) अचल निश्चय, (२) ध्रुव धारणा और (३) विधि से होना चाहिये। नाम जप से राम-कृपा अवतरण सुनिश्चित है। साधना विज्ञान के इस वर्णन में शब्दों का जो विलक्षण चयन है वह ग्रंथकार का कला-कौशल है। साधना-विज्ञान को समझ कर हृदयंगम कर लेना अत्यन्त लाभप्रद है।

(२) दूसरा प्रकरण है **'नमस्कार सप्तक'** जो यथार्थ में साधक की साधना के लिये विशेष तैयारी है। इन ७ पदों में साधक अपने आराध्य देव श्रीराम को सीधा सम्बोधन करके बार बार नमस्कार करता है। इन नमस्कारों में जो गूढ़ भावनाएं हैं उनके माध्यम से साधक अपना उत्थान करता है, उसका शक्ति और उत्साह बढ़ता है, साधक अपने को तीनों मूल दोषों (अहंकार, आसक्ति और कामना) से मुक्त करके (अपने में शांति स्थापित करके, स्वयं को साधना का सुपात्र बनाकर) नमस्कार का प्रताप और प्रभाव चित्त में बसाने योग्य बनाता है।

(३) उपर्युक्त तैयारी के पश्चात् श्रीराम का **'चिंतन'** होता है। उसके चिन्तन की यह रीति है कि उसके ऐसे विशेषणों का स्मरण किया जाय जो उसके प्रमुख गुणों के द्योतक हैं। यह चिन्तन बड़ा ही सार गर्भित है, जिसके मनन से निश्चय और विश्वास दृढ़ होते हैं।

(४) **'वास्तविक साधना'** का अर्थ है श्रीराम और राम नाम को हृदय में ऐसी दृढ़ता से बसाना कि साधक का वह सर्वस्व हो जाय और साधक उसमें तल्लीन रहे। राम नाम को अपने में ऐसा बसाना है कि जिस समय जिह्वा से जप न हो उस समय (जैसे, सोते में अथवा पढ़ते-लिखते या बोलते में) भी अजपा जप होता रहे।

(२)

श्री स्वामी जी महाराज ने किसी प्रवचन में अपने अनुभूत निष्कर्ष को इन शब्दों में व्यक्त किया था :–

"जब राम नाम का जप भीतर स्वयमेव होने लगे (अजपा जप) तब समझ लेना चाहिये कि राम नाम महामंत्र उसकी आत्मा में बस गया है, उसकी आत्मा जग

गई है, उसका मंत्र सिद्ध हो चुका है और उस पर राम-कृपा अवतरित हो आई है। यह अजपा जप की भूमिका योग की ऊंची भूमिका है।"

उक्त अवस्था की प्राप्ति के लिये राम का निरंतर (रात दिन) सुमिरन होना चाहिये।

1. एकान्त में श्रीराम (राम नाम) के रूप अथवा गुणों का '**ध्यान**' किया जा सकता है।
2. नाम का '**जप**' लेटे, बैठे, चलते, कार्य करते हुए किया जा सकता है।
3. सोते में या पढ़ते, लिखते, बोलते में जिह्वा से जप करना कठिन है परन्तु "मैं तेरा, मेरा तू" यह '**अनुभूति**' निरन्तर रखी जा सकती है।
4. राम सर्वत्र, सर्वदा है, यह '**स्मृति**' निरन्तर रखी जा सकती है।
5. राम सर्वज्ञ, सर्वसमर्थ, सर्व दयालु है, यह '**विश्वास**' रखा जा सकता है; (कुछ करना नहीं पड़ता)। इस प्रकार से रात दिन निरन्तर सुमिरन हो सकता है।

राम नाम का जप सुख, शांति और आनन्द प्रदान करता हैं। राम नाम जापक अनाथ नहीं, श्रीराम उसके नाथ है। वह अकेला नहीं, श्रीराम उसके साथ हैं, स्वामी, सखा, मित्र बन कर।

इसके लिए यह परम आवश्यक है कि राम-कृपा और राम नाम के महात्म्य का नित्य मनन किया जाय। यही स्पष्ट उद्देश्य '**अमृतवाणी**' का है।



सच्चे संत की शरण में, बैठ मिले विश्राम ।
मन माँगा फल तब मिले, जपे राम का नाम ॥

अतिशय मंगल स्वरूपाय
परम कल्याण कारिणे।

सर्वशक्तिमद्देवाय
श्रीरामाय नमो नमः॥

सांकेतिक तालिकाएं

उदाहरणार्थ संकेत :–

अव० = रामकृपा अवतरण का पद, **नम०** = नमस्कार सप्तक का पद,

चि० = चिन्तन वाक्य, **पद** = मूल ग्रंथ अमृत वाणी का पद

१. श्रीराम के विशेषण, गुण, स्वभाव

२. राम नाम क्या है?

३. राम नाम जप विधि

४. नाम जप क्या प्रदान करता है?

५. नाम जप क्या नाश करता है?

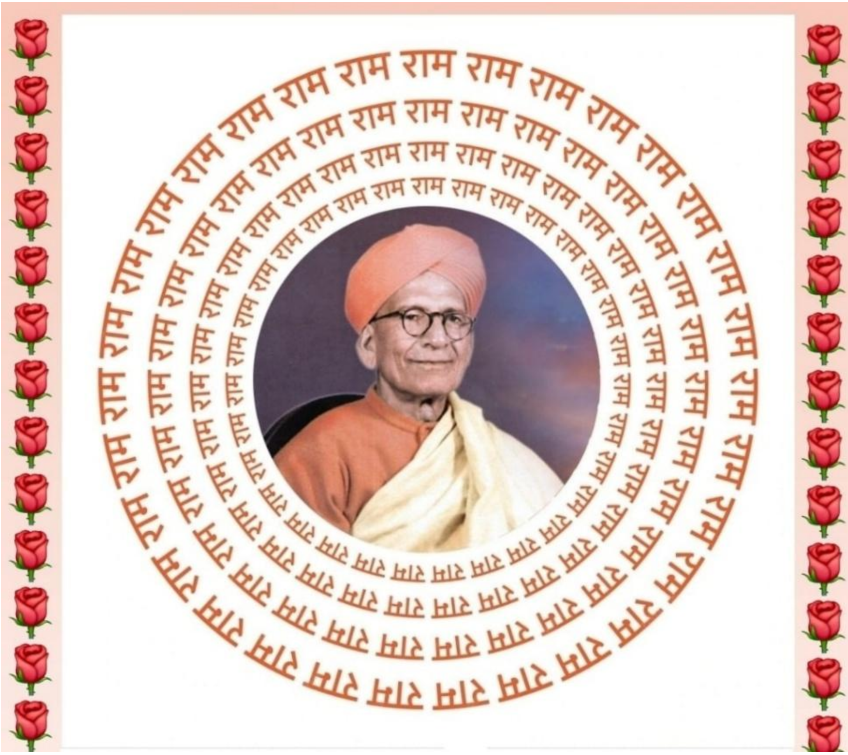
६. नाम जप में अन्य साधनों का समावेश

७. श्रीराम नाम की महिमा किसने समझी और कौन नाम जप करते हैं?

८. मिथ्या है

९. राम नाम के बिना थोथे हैं

१०. साधना के बिना वृथा है



श्री स्वामी जी महाराज की वाणी, इस शीर्षक से (इस पुस्तक में) स्थान-स्थान पर श्री स्वामी सत्यानन्द जी महाराज की तत्प्रसंग संबंधी अनुभूतियाँ और उनके उपदेश, जो उन्होंने समय-समय पर प्रवचनों में व्यक्त किये थे, "**प्रवचन पीयूष**" से उद्धृत हैं।

पारायण पाठ तालिका

पाक्षिक पाठ	मासिक पाठ	प्रकरण	पद
१	१	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ १-२
१	२	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ ३-५
२	३	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ ६
२	४	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ ७
३	५	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ ८-१०
३	६	१. रामकृपा अवतरण	अव॰ ११-१६
४	७	२. नमस्कार सप्तक	नम॰ १
४	८	२. नमस्कार सप्तक	नम॰ २-३
५	९	२. नमस्कार सप्तक	नम॰ ४
५	१०	२. नमस्कार सप्तक	नम॰ ५-७
६	११	३. चिन्तन	प्रातः पाठ
६	१२	४. अमृतवाणी - अमृत	१-८
७	१३	५. अमृतवाणी – मंगलकार्य	९-१३
७	१४	६. अमृतवाणी – सुकृत	१४-१८
८	१५	७. अमृतवाणी – आश्रय	१९-२३
८	१६	७. अमृतवाणी – आश्रय	२४-२९
९	१७	८. अमृतवाणी - योग, साधन आदि	३०-३५
९	१८	९. अमृतवाणी – शक्ति	३६-४१
१०	१९	१०. अमृतवाणी – जापक	४२-४८
१०	२०	११. अमृतवाणी – सत्	४९-५४
११	२१	१२. अमृतवाणी – असत्	५५-६०
११	२२	१३. अमृतवाणी - निरन्तर जप	६१-६८
१२	२३	१४. अमृतवाणी – रामकृपा	६९-७७
१२	२४	१५. अमृतवाणी - महादान की मांग	७८-८४
१३	२५	१६. अमृतवाणी – प्रसाद	८५-९३
१३	२६	परिशिष्ट - साधना सत्संग की एक झांकी – जीवन कला	(१)-(२)
१४	२७	परिशिष्ट - मानव जीवन का अध्ययन	(३)
१४	२८	परिशिष्ट - जीवन कला के सार तत्व – १	(४)
१५	२९	परिशिष्ट - जीवन कला के सार तत्व – २	(४)
१५	३०	परिशिष्ट - आन्तरिक साधना	
	३१	प्रार्थना, स्तुति (भक्ति प्रकाश से एक चयन)	

प्रकरण १
राम-कृपा अवतरण



संगति

इस प्रकरण में साधना-दर्शन के सार तत्व और महात्म्य का सूक्ष्मतम और सारगर्भित निरूपण है। प्रत्येक साधक को सर्वप्रथम साध्य, साधक, साधना और साधन का अर्थ समझ लेना चाहिये। **श्रीराम अथवा राम-कृपा साध्य है। नाम-जापक साधक है। सुमिरन साधना है। मन, नेत्र और जिह्वा साधन हैं।**

श्रीराम का श्रेष्ठ सुन्दर रूप राम-कृपा है। नाम और नामी अभिन्न है। नाम जप उच्चतम और श्रेष्ठतम साधना है। साथ ही यह सुगम, सुखद और सरस भी है। प्रभाव तुरन्त और वहीं पर होता है।

इस प्रकरण में सोलह पद हैं।

पद १ में श्रीराम का सूक्ष्मतम वर्णन है। श्रीराम परम प्रभु, जन पावन, परमात्मा, परम पुरुष, सुखधाम, परम कृपा स्वरूप हैं।

पद २ में श्रीराम-कृपा का सूक्ष्मतम वर्णन है। वह सुखदा, शुभा, शक्ति स्वरूप, शांति स्वरूप, ज्ञानमयी, आनन्दमयी है।

पद ३ में राम मंत्र का सूक्ष्मतम वर्णन है। राम नाम परम पुण्य का प्रतीक, परमेश्वर का नाम, तारक मंत्र, बीजाक्षर और शक्ति का केन्द्र है।

पद ४ में निरूपण है कि श्रीराम और राम नाम अभिन्न है, यह निश्चय धारणा करके साधना करना चाहिये।

पद ५ में इष्टदेव को मंत्रमय, नाम और नामी का ऐक्य, राम नाम को राम का देवालय बताया है।

पद ६, ७ और १० का विषय है आराधना, जो दृढ़ता और विधि से होनी चाहिये। राम-कृपा का अवतरण राम नाम से होता है। इस भावना से राम नाम की आराधना हो। अचल निश्चय से जाप हो। नाम शक्ति का धाम है। ध्रुव धारणा रख कर मंत्र की आराधना हो।

पद ८ और ९ में उपमाओं के द्वारा मंत्र की महिमा का सूक्ष्मतम वर्णन है जिस प्रकार जल, रज और ऋतु का संयोग पाकर बीज से वृक्ष खड़ा होता है, उसी

प्रकार मंत्र से योग का विकास होता है। जिस प्रकार परमाणु में विद्युत-कोष के समान शक्ति होती है उसी प्रकार मंत्र में शक्ति निहित है।

पद ११, १२ और १३ में जप के प्रभाव का उपमाओं सहित वर्णन है। जैसे खिड़की खोलते ही पवन और तेज आते हैं, जिस प्रकार बटन दबाने से बिजली आती है, जिस प्रकार नल खोलने से जल बहता है, वैसे ही जप के प्रभाव से उसी समय और उसी स्थान पर कृपा का अवतरण होता है, उसमें न देरी है न दूरी।

पद १४ और १५ में राम शब्द की इस महिमा का वर्णन है कि राम शब्द को तारक मंत्र मानकर ध्यान करने से स्वशक्ति सत्ता जागृत होती है, दशम द्वार से राम-कृपा का अवतरण होता है।

पद १६ में यह बताया है कि श्रीराम कृपा से सत्पुरुष (सद्गुरु) का संयोग होता है, जिससे भक्ति जागृत होती है, स्वशक्ति और सहस्र कमल का मिलाप होता है, और सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

राम-कृपा अवतरण – १

परम कृपा सुरूप है, परम प्रभु श्रीराम ।
जनपावन परमात्मा, परम पुरुष सुखधाम ॥ १ ॥

परम-	श्रेष्ठतम, उत्कृष्ट
कृपा-	अनुग्रह, दया, करुणा
सुरूप-	श्रेष्ठ रूप, सुन्दर रूप
प्रभु-	भगवान, स्वामी
जनपावन-	भक्त को पवित्र करने वाला, पापों से मुक्त वाला
परमात्मा-	परमेश्वर
पुरुष-	आत्मा, विष्णु, प्रकृति से भिन्न अपरिणामी, अकर्ता, असंग, चेतन पदार्थ
सुखधाम-	आनन्द सदन, सभी सुखों का निवास स्थान

अर्थ

श्रीराम श्रेष्ठतम स्वामी हैं, परमेश्वर हैं, विष्णु हैं। भक्त को पवित्र करने वाले और सभी सुखों के धाम हैं। श्रेष्ठतम कृपा उनका सुन्दर रूप है।

व्याख्या

श्रीराम ब्रह्म हैं, चिन्मय (ज्ञान स्वरूप) हैं, अविनाशी हैं, सब उपाधियों से रहित हैं और सबके हृदय में निवास करते हैं। [१] श्रीराम अर्थात जो सब में रमे हैं और सब को अपने में रमाये हैं, जो अनन्त, सत्य, आनन्द और चिद् रूप हैं। यह जगत प्रकाश्य है और श्रीराम इसके प्रकाशक हैं। वह ज्ञान तथा गुणों के धाम हैं उन्हीं की सत्ता से मोह की सहायता पाकर जड़ माया भी सत्य सी भासित होती है।

श्रीराम समस्त विश्व के एकमात्र स्वामी हैं। श्रीराम लीलामय (कौतुकी) हैं, वह शरणागत का हित करते हैं, सबके दुःख हरते हैं, सहज ही प्रसन्न हो जाते हैं। [२] श्रीराम आनन्द के समुद्र और सुख की राशि हैं। उन आनन्द सिन्धु के एक कण से तीन लोक सुखी होते हैं। वह सुख के धाम और सम्पूर्ण लोकों को शांति देते हैं। [३] श्रीराम परम कृपालु हैं, शरणागत वत्सल हैं, अपने जन पर बड़ी ममता और कृपा रखते हैं, जिस पर एक बार कृपा कर दी उस पर से कभी कृपा नहीं हटाते। जो एक बार उन्हें अपना हाथ पकड़ा देता है (अर्थात् एक बार शरण जाता है) उसका हाथ वह कभी नहीं छोड़ते। [४] श्रीराम दीनबन्धु और बिना कारण दया करने वाले है। [५] हितकारी और शोभा के धाम हैं। [६] श्रीराम का स्वभाव है कि पहले आश्रितों को सुखी करके तब स्वयं सुखी होते हैं।

श्रीराम की परम कृपा श्रीराम का श्रेष्ठ और सुन्दर रूप है। अर्थात् राम-कृपा का अवतरण श्रीराम का अवतरण है और श्रीराम-कृपा का दर्शन श्रीराम का दर्शन है।

संदर्भ नोट

१. राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी। सर्व रहित सब उर पुर वासी॥

२. प्रभु कौतुकी प्रणत हितकारी। सेवत सुलभ सकल दुःखहारी॥

३ जो आनन्द सिन्धु सुखरासी। सीकर तें त्रैलोक सुपासी॥
सो सुखधाम राम असनामा। अखिल लोकदायक विश्रामा॥

४. शरण गहे की राम ने, कबहु न छाँड़ी बांह।

५. अस प्रभु दीनबन्धु हरि, कारण रहित दयाल।
तुलसीदास सठ तेहि भजु. छाँड़ि कपट जंजाल॥

६. बिनु कारण दीन दयाल हितं, छबि धाम नमामि रमा रमणं।

राम-कृपा अवतरण – २

सुखदा है शुभा कृपा, शक्ति शान्ति स्वरूप।
है ज्ञान आनन्दमयी, राम-कृपा अनूप ॥ २ ॥

सुखदा-	सुख देने वाली
शुभा-	कल्याण करने वाली
कृपा-	अनुग्रह
शक्ति-	बल, पराक्रम
स्वरूप-	आकृति, तुल्य
ज्ञान-	वस्तुओं और विषयों का बोध
आनन्दमयी-	आनन्द से ओत-प्रोत या परिपूर्ण
अनूप-	जिसकी उपमा न हो, सर्वश्रेष्ठ

अर्थ

श्रीराम-कृपा सर्वश्रेष्ठ है, कल्याणकारी और सुख देने वाली है, शक्ति और शांति स्वरूप है, ज्ञान और आनन्द से परिपूर्ण है। उसकी कोई उपमा नहीं है।

व्याख्या

राम-कृपा का अवतरण श्रीराम का ही अवतरण है। अतः श्रीराम-कृपा की अनुभूति श्रीराम की अनुभूति है। श्रीराम-कृपा का दर्शन श्रीराम का दर्शन है। श्रीराम-कृपा की प्राप्ति श्रीराम की प्राप्ति है। श्रीराम-कृपा की महिमा का यहां सूक्ष्मतम निरूपण है जो साधक में पवित्रता, आस्था, विश्वास और दृढ़ता स्थापित करता है।

श्रीराम की कृपा-शक्ति सब शक्तियों से बड़ी है। ऐश्वर्याधिष्ठात्री और माधुर्याधिष्ठात्री आदि महाशक्तियां कृपाशक्ति के वशीभूत होकर कार्य करती हैं।

श्रीराम की कृपा के तीन रूप हैं-भक्त की रक्षा, पाप का नाश, और मित्र भाव। [२] श्रीराम-कृपा तीनों रूपों में भक्त का हित करने में कभी नहीं अघाती। [३]

दरिद्री को पारसमणि मिल जाने से जो सुख हो, गूंगे को मुख में श्रीसरस्वती जी के विराजमान होने से जो सुख हो, अन्धे को सुन्दर नेत्रों का लाभ होने से जो सुख हो, सदा के रोगी को अमृत मिलने से जो सुख हो, शूरवीर को युद्ध-विजय से जो सुख हो, योगी को परम तत्व की प्राप्ति में जो सुख हो, इन सुखों से करोड़ों गुना सुख श्रीराम या श्रीराम-कृपा की प्राप्ति होने में अथवा उनका दर्शन होने में है।

श्रीराम-कृपा सुख पुंज है, वह स्वतः सब दुःख दूर कर देती है। [४] श्रीराम जिसके रक्षक हों उसकी मर्यादा कोई भंग नहीं कर सकता। [५]

भक्त के जीवन में सब कुछ राम-कृपा पर ही अवलंबित है। मनुष्य शरीर मिला है यह 'राम-कृपा' है। जब सत्संग मिले, राम कथा सुनने को मिले, राम गुणगान हो, तो इसे 'राम की विशेष कृपा' समझना चाहिये और जब भक्त श्रीराम के मार्ग पर चले अर्थात् अपने आचार-विचार को उसके अनुरूप बनाने लगे अर्थात् जीवन साधनामय होने लगे तब समझना चाहिए कि 'राम की अतिकृपा' हो रही है। [६]

संसाररूपी रात्रि में सोये हुए मानव को श्रीराम-कृपा जगाती है, जगत का भ्रम मिटाती है, जो क्रिया-सिद्ध नहीं है, कृपा-साध्य है। राम-कृपा से दुख दूर होता है। सत्संग के बिना विवेक नहीं जागता। श्रीराम-कृपा के बिना सत्संग सहज में नहीं मिलता। [७]

राम-कृपा-पात्र ही योगी, संयमी अज्ञान निद्रा से जागने वाला और परमार्थ का साक्षात्कार करने वाला हो सकता है। [८]

जिस पर श्रीराम प्रसन्न हों उसके लिए कुछ भी कठिन नहीं है। [९] श्रीराम-कृपा से असंभव भी संभव हो सकता है। [१०] श्रीराम की लेशमात्र कृपा से परम विश्राम प्राप्त हो सकता है। [११]

अतः राम-कृपा का पात्र होना सबसे श्रेष्ठ उपलब्धि है, जिसमें सब कुछ समाया हुआ है वही सर्वोच्च पद है।

एक बार भी जिस पर श्रीराम की कृपा दृष्टि हो जाती। वह कृतकृत्य हो जाता है। फिर वह कृपा हटती नहीं, बढ़ती ही रहती है, यह श्रीराम का विलक्षण स्वभाव है। अतः साधक यही प्रार्थना करता है और बलिहारी जाता है कि एक बार मेरी ओर कृपा दृष्टि कीजिए। [१२]

एक बार कृपा दृष्टि होने का अर्थ ही यह है कि श्रीराम ने उसे अपनाकर कृतकृत्य कर दिया। श्रीराम-कृपा का अवतरण का साधन बताया है, श्रीराम का सुमिरन, श्रीराम नाम का जप।

संदर्भ नोट

१. बिनु विश्वास भगति नहीं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
   राम-कृपा बिनु सपनेहु, जीव न लह विश्राम॥

२. रक्षणे सर्वभूतानामहमेव परो विभुः।
   इति सामर्थ्यसंधानं कृपा सा पारमेश्वरी॥

३. जासु कृपा नहि कृपा अघाती

४. सकल विघ्न व्यापहिं नहि तेही। राम सुकृपा बिलोकहि जेही॥

५. सीम कि चांपि सकइ कोउ तासू॥ बड़ रखवारि रमापति जासू॥

६. राम-कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई॥

७. बिन सत्संग विवेक न होई। राम-कृपा बिनु सुलभ न सोई।

८. यह गुण साधन ते नहि होई। तुम्हारी कृपा पाव कोइ कोई॥

९. जापर कृपा राम की होई, तापर कृपा करहि सब कोई।
गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही, राम-कृपा करि चितवा जाही।
तुम्ह कृपालु जापर अनुकूला, ताहि न व्यापि त्रिविध भवसूला।
ताकहुं प्रभु कछु अगम नहीं, जापर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभाव बड़वानलहि, जारि सकहि खलु तूल॥

१०. जो चैतन कहं जड़ करइ, जड़हि करइ चेतन्य।
अस समर्थ रघुनायकहि, भजहि जीव ते धन्य॥
मसकहि करइ विरंचि प्रभु, अजहि मसक ते हीन।
अस विचार तजि संसय, रामहि भजहि प्रवीन॥

११. जाकी कृपा लवलेस ते मतिमन्द तुलसीदास हूँ।
पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥

१२. बारक विलोकि बलि कीजै मोहि आपनो।

राम-कृपा अवतरण – ३

परम पुण्य प्रतीक है, परम ईश का नाम ।
तारक मंत्र शक्ति घर, बीजाक्षर है राम ॥ ३ ॥

पुण्य-	पवित्र, शुभ, धर्मविहित, वह कर्म जिसका फल शुभ हो
प्रतीक-	आकृति, प्रतिरूप, प्रतिभा
परम ईश-	परमेश्वर, महादेव
तारक मंत्र-	भवसागर से पार करने वाला मंत्र, राम का षड़ाक्षर मंत्र "श्री रामाय नमः"
शक्ति-	बल, पराक्रम
घर-	कोष
बीजाक्षर-	बीज मंत्र का पहला अक्षर

अर्थ

'राम' परमेश्वर का नाम है, उनका परम पवित्र प्रतीक है। शक्तिधाम तारक मंत्र (श्री रामाय नमः) का बीजाक्षर है।

व्याख्या

परमेश्वर के अनन्त नाम हैं, उनमें राम नाम सर्व श्रेष्ठ और सर्वोत्तम है। [१] भगवान सच्चिदानंद हैं। राम नाम सच्चिदानन्दमय है।

रकार चित का वाचक है, **अकार** सत् का और मकार आनन्द का वाचक है, इस प्रकार नाम और नामी का तादात्म्य है।

श्रीराम का षड़ाक्षर मंत्र 'श्री रामाय नमः' का बीजाक्षर राम है। "र" अग्नि बीज है, "अ" सूर्य बीज है और "म" चन्द्र बीज है।

"र" के उच्चारण से शुभाशुभ कर्म नष्ट होते हैं, मन के मल और विषय-वासनाएँ नाश हो जाती हैं और स्व-स्वरूप जागृत होता है। 'अ" से मोह आदि अविद्या नष्ट होती है जिससे हृदय शीतल और तृप्त होता है। "म" से भक्ति उत्पन्न होती है, त्रिताप दूर होते हैं।

"र" से वैराग्य, 'अ' से ज्ञान, 'म' से भक्ति उत्पन्न होती है।

श्री राम नाम स्वतः प्रकाशित है, वह अग्नि, सूर्य और चन्द्र को अपने प्रकाश से प्रकाशित करता है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"मंत्र लिखा हुआ सामने रखे **'सर्व शक्तिमते परमात्मने श्री रामाय नमः'**।

अपने मन में यह भाव और निश्चय लेकर जावे कि मंत्र में शक्ति है और जिस मंत्र की आराधना करते हैं वह शक्तिधाम से ही अवतरित होता है। इसलिए इसमें शक्ति है। मन्त्र चैतन्य है। यह भले ही स्याही के साथ कागज पर लिखा हुआ है, लेकिन इसमें भावना बहुत है और यह चैतन्य है। ... ... इस नाम में ही सब नाम समाये हुए हैं ऐसा हमारा निश्चय है।

राम नाम हमारा उपासना का मार्ग है, कोई मत या सम्प्रदाय नहीं है। ऐसा नहीं कि दूसरे नामों से कल्याण नहीं होता। धर्म में विष्णु का स्वरूप व कृपा अवतरित होती है। वह स्वरूप शांति प्रकाश, ज्योति, रूप आदि के रूप में हो सकता है। सर्वशक्तिमान् का अस्तित्व है, तभी तो लाभ है। स्वरूप सामने प्रकट होने पर गद्गद होना चाहिये ... ... यदि परमात्मा का अस्तित्व न हो तो हमारे आह्वान करने का क्या लाभ ?

मैं तो इस बात को मानता हूँ कि स्वरूप प्रकट होता है। विश्वास एक पर हो ... ... भक्ति व्यभिचारिणी न होकर अनन्य हो। मेरे लिए परमेश्वर का प्रतीक नाम है।

भगवान के साकार, निराकार, सगुण, निर्गुण स्वरूप की उपासना के संबंध में क्या कहा जाय। भगवान की आराधना करना मानो उससे सीधा सम्बन्ध करना है। नाम में नामी समाया होता है। भगवान क्या है ? यह तो भगवान ही जानें। हमें तो इतना विश्वास होना चाहिये कि भगवान हैं अर्थात् आस्तिक भावना।"

संदर्भ नोट

1. जद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एक तें एका।
   राम सकल नामन्ह तें अधिका। होऊ नाथ अघ खग गन बधिका।

राम-कृपा अवतरण – ४

साधक, साधन, साधिए, समझ सकल शुभ सार ।
वाचक वाच्य एक है, निश्चित धार विचार ॥ ४ ॥

साधक-	साधना करने वाला
साधना-	साधना को सिद्ध करने की क्रिया, उपासना
साधिए-	अभ्यास करिए, साधना करिए
वाचक	नाम
वाच्य-	नामी
धार-	ग्रहण करिये

अर्थ

साधक साधना को सब प्रकार से कल्याणकारी समझ कर करे और अपने विचार में इस बात की निश्चित धारणा रखे कि नाम और नामी एक ही हैं।

व्याख्या

जो अपने लक्ष्य (साध्य) को जानता हो, जिसने साध्य तक पहुंचने का अपना पथ (साधना) निश्चित कर ली हो, जो साधना के लिए मिले हुए साधन (शरीर) के वास्तविक स्वरूप से परिचित होकर साधना करता है, वह 'साधक' है।

नाम और नामी अभिन्न हैं। साधक अपने इष्ट साध्य को छोड़कर अन्य को जानता ही नहीं। वह अपना तन, अपना मन, अपना धन और स्वयं अपने को साध्य में मिला देता है। इस प्रकार जब तल्लीनता होती है तो नाम और नाम जापक अभिन्न हो जाते हैं। जापक में नाम बस जाता है तब नाम और जापक अभिन्न हो जाते हैं। इस प्रकार नामी और जापक भी अभिन्न हो जाते हैं। यह ज्ञान की चरम सीमा है।

परन्तु 'जीव ब्रह्म एक ही है (अहं ब्रह्मास्मि)' यह किसी महात्मा से सुन लेना अथवा युक्तियों के सहारे मान लेना ज्ञान की प्राप्ति नहीं है। ज्ञान की प्राप्ति होना तब कहा जा सकता है जब 'मैं' को यह भासने लग जाए कि मैं ब्रह्म हूँ। उस अनुभूति की अवस्था प्राप्त करने के लिए योग, समाधि, आदि किये जाते हैं। अनुभवी लोग कहते हैं कि देहाभिमान के रहते हुए वह साधना करना कठिन है।

नाम जप की साधना से भी यह स्थिति प्राप्त हो जाती है कि साधक और साध्य के अभिन्न होने की अनुभूति हो। इस साधना की विशेषता यह है कि वह सुगम, सुखद और सरस है इसलिये उच्चतम और श्रेष्ठ है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

‘''नाम में नामी यो बसे ज्यों पुष्प में सुवास'। नाम में नामी, वाचक में वाच्य रहता है। भक्तों ने यही वर्णन किया है। नाम देह है, नामी देही है। ये दार्शनिक शब्द हैं। ऋषि-मुनि शब्द में ही परमात्मा को ध्याते हैं . ... राम नाम के उपासक को अपने हृदय में बड़ी श्रद्धा से राम नाम ऐसे स्थापित करना चाहिये जैसे मन्दिर में मूर्ति स्थापित की जाती है।

राम नाम का महामंगल महामंत्र मेरे हृदय में विराजमान है, यह मनोभावना पूर्ण विश्वास और सुनिश्चित निश्चय के साथ उपासक के अन्तस्थल में बद्धमूल हो जानी चाहिये। चलते फिरते, उठते-बैठते, सोते-जागते और काम-काज करते हुए भी ऊपर प्रदर्शित मनोभावना अन्तःकरण में विलास ही करती रहे, ऐसा अभ्यास एक उत्तम अभ्यास है।

साधक को पक्का विश्वास हो कि राम नाम मेरे हृदय में है तो इस नाम का वाच्य नामी भी वहां विद्यमान है। अब मेरा हृदय परमेश्वर का आसन स्थान है, यह तेजोमय परमपुरुष सुशोभित है, मेरा तन भगवान का मन्दिर बन गया है।

साधक प्रबल मनोभावना बनाये रखे कि जैसे तन में औषधि काम करती है ऐसे ही मेरे मानस रोगों को, मेरी चिन्ताओं को, मेरी चंचलताओं को, मेरे मलिन विचारों को दूर करने का काम श्रीराम आप ही करा रहे हैं। मुझे तो एकाग्रता धारण करके उसे काम का अवसर देना ही उचित है।

'राम नाम' रूप कल्पतरु का बीज मेरे हृदय में बोया जा चुका है। वह मेरी साधनाओं और सफलताओं के रूप में स्वयं अंकुरित और पत्रित, पुष्पित आदि होता जाएगा। मेरा काम तो भगवान की कृपा पर अभंग भरोसा ही रखना है।"

राम-कृपा अवतरण – ५

मंत्रमय ही मानिए, इष्ट देव भगवान् ।
देवालय है राम का, राम शब्द गुण खान ॥ ५ ॥

मंत्रमय-	मंत्र में स्थित
इष्टदेव-	आराध्य देव
देवालय-	मंदिर, वह घर जिसमें किसी देवता की मूर्ति रखी जाय
गुण-	लक्षण, विशेषता
खान-	खदान

अर्थ

अपने इष्टदेव मगवान को मंत्र में स्थित मानना चाहिये। राम शब्द, श्रीराम आराध्यदेव का मंदिर है और उससे सब श्रेष्ठ गुण निकलते हैं।

व्याख्या

उपासक का अभीष्ट है श्रीराम अथवा श्रीराम-कृपा। साधना है नाम जप।

सगुण और निर्गुण दोनों का स्वरूप नाम है। सन्त महात्माओं का अनुभव सिद्ध तथ्य है कि नाम और नामी अभिन्न है। "समुझत सरिस नाम अरु नामी" "राम नाम में राम को सदा विराजित जान"। अतः नाम साध्य है। नाम में साधक की निष्ठा आराध्य की ही हो तो नाम में प्रीति होती है. जिससे हृदय में 'नामी" प्रकट हो जाता है।

श्रीराम के रूप और नाम दोनों ही उपाधि हैं, दोनों अविर्वचनीय हैं, अनादि हैं, शुद्ध अभियुक्त हैं। श्रीराम अपने राम नाम का अनुगमन करते हैं, जहाँ नाम लिया जाता है वहां आ जाते हैं।

राम नाम मंगलमय, मधुमय, रसमय, चिन्मय है। उसमें अनन्त माधुर्य है। राम नाम अमंगलों को मंगल कर देता है, वासनाओं को दूर कर देता है, पापी का उद्धार कर देता है।

श्रीराम ने अपनी समस्त शक्तियां अपने राम नाम में रख दी हैं। [१]

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"राम नाम से संकेत ईश्वर की ओर है। कृष्ण नाम से भी यदि परम पुरुष का ध्येय हो तो हमें कोई भेद नहीं। परम पुरुष परमात्मा सर्वशक्तिमान दृष्टा की ओर संकेत होना चाहिये। यहां किसी का खण्डन नहीं है। ...

श्रद्धावान उपासक को श्रीराम नाम केवल अक्षरमय शब्द ही प्रतीत नहीं होता। वह अपनी प्रीति से, अपनी श्रद्धा से, अपने निश्चय से और अपनी भावना से, इसमें भगवान को ऐसे ही प्रतिष्ठित कर लेता है जैसे लोग मूर्ति में अपने देवता को प्रतिष्ठित कर लिया करते हैं। उपासक के मानस नेत्रों के सामने नाम और नामी एक हो जाते हैं, वह नाम और नामी में कुछ भी भेद नहीं मानता। उसके निश्चय में जैसे सूर्य में ज्योति है, चांद में चमक है, अग्नि में उष्णता है, पुष्प में सुगन्धि है और मधु में मिठास है, उसी प्रकार श्रीराम नाम में श्रीराम स्वयं विद्यमान हैं। उपासक तन में जीव की भांति नाम में श्रीराम को समझता है"।

संदर्भ नोट

(१) कहों कहां लगि नाम बड़ाई। राम न सकहि नाम गुन गाई॥

<u>राम-कृपा अवतरण – ६</u>

राम नाम आराधिए, भीतर भर ये भाव ।
देव-दया अवतरण का, धार चौगुना चाव ॥ ६ ॥

आराधिए-	ध्यान कीजिए
भाव-	भावना, विश्वास
देवदया-	राम-कृपा, राम अनुग्रह
अवतरण-	अवतार, उद्धरण, राम की ओर से भक्त की ओर आना
धार-	बसाना
चौगुना-	चार गुना, अनेक गुना
चाव-	अभिलाषा, लालसा, प्रबल इच्छा, उत्कण्ठा

<u>अर्थ</u>

श्रीराम-कृपा अवतरण की प्रबल अभिलाषा अपने में भर कर और बसा कर राम नाम की आराधना (जप) कीजिये।

<u>व्याख्या</u>

श्रीराम का दर्शन ही लाभ की सीमा और आनन्द की सीमा है जिससे सब अभिलाषाएं पूर्ण हो जाती हैं। वह राम-कृपा से ही संभव है।

कृपा करना श्रीराम का सर्वोपरि गुण है। उनके इसी गुण से जीव में जागृति होती है। श्रीराम अपने इसी गुण से अत्यन्त अधम, दीन, हीन, मलिन को अपना बना लेते हैं, राम-कृपा से ही भव-भय-हरण होता है।

"श्रीरामचन्द्र कृपालु भज मन हरन भव भय दारुनं"

साधक को कृपा-गुण का ही आश्रय रहता है। श्रीराम अवश्य कृपा करेंगे, मुझ पतित को अपनायेंगे ऐसी उत्कण्ठा से साधक अपने आपको भरपूर रखता है और साधना में (जप में) उत्साहित रहता है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

'श्रीराम नाम उपासक को इस बात में श्रद्धा करनी चाहिए कि भक्त की भाव भरी भावना ही भगवान की आराधना का सर्वोत्तम साधन है। श्री भगवान भक्त की भावपूर्ण भावना से ही प्रकट होते हैं। उस परम पावन पुरुष का अवतरण उसी जन पर होता है जो भक्ति भरे भावों से भगवान के नाम को जपता है, अचल निश्चय से एकाग्र मन होकर, श्रीराम नाम की धुन में लौ लगाता है, परा प्रीति से श्रीराम नाम पर निर्भर हो जाता है और अनन्य निश्चय से श्रीराम नाम को परमेश्वर के परम पद की सर्वश्रेष्ठ साधना और सिद्धि समझता है।

साधारण जनों के समीप तो नाम का जप चिन्तन आराधना और ध्यान एक शब्द को बार-बार रटना है परन्तु नामोपासक की शुद्ध समझ में, सुदृढ़ विश्वास में और विमल बुद्धि में नामाभ्यास आंतरिक विकास का, आत्म-जागृति का आत्मोन्नति का, मल आवरण विक्षेप के नाश का, और पाप-ताप के विनाश का एक तुलनातीत उपाय है।

श्रीराम नाम का अभ्यासी राम नाम के जाप से, श्रीराम नाम के चिन्तन से, श्रीराम नाम की आराधना से और श्रीराम नाम के ध्यान से स्वात्मा, परमात्मा को ऐसे ही प्रकट तथा अभिव्यक्त कर लिया करता है जैसे याजक अरणियों से अग्नि को और पदार्थ विद्यावेत्ता रगड़ से विद्युत को।

परन्तु नामाभ्यास गहरी लगन से, संशय रहित निश्चय से, पूरे भरोसे से, बड़ी तत्परता से किया जाना चाहिये। ... ... श्रीराम नाम का उपासक इस मांगलिक

महामंत्र के भक्ति योग से, इसके मनन चिन्तन और ध्यान से, अपनी प्रसुप्त आत्मा को, प्रकृति रूप बने हुए अपने चेतन भाव को और कर्मपाश में फंसे पड़े अपने अमल आंतरिक स्वरूप को जागरित, प्रबुद्ध तथा स्वतंत्र कर लेता है। ... ... नाम योग की महिमा अगम्य है। इससे उपासक जहां निज स्वरूप को प्रकट कर लेता है वहां वह अपने में तथा विश्व में परमेश्वर को भी अवतरित कर पाता है।"

'भगवान की कृपा पर बड़ा विश्वास होना चाहिये। जो बात बड़े परिश्रम से पैदा होती है कभी-कभी वह सहज में भी मिल जाया करती है। यह 'भगवत् कृपा' ही समझनी चाहिये। नामयोग ऐसा ही साधन है ... ... चेतन मन ने अपने आपको लोभ से, मोह से, ईर्ष्या से युक्त कर रखा है। जब आप कोई काम करने लगेंगे तो कोई भाव विरोध का भी पैदा होगा और ऐसे तो आकाश में है भी विरोधी तरंगे होती हैं ... ... जब आदमी का अपनी मंजिल पर पूरा निश्चय हो तो वह गिरा नहीं करता। यह निश्चय होना चाहिये कि मेरी मंजिल है भगवान की कृपा। अपनी जीवन नौका श्रीराम के चरण शरण में समर्पण करके कुछ काल तक एकान्त में नामाराधन करने से तो कोई कितना ही मन्दकर्मा क्यों न हो, उसमें नामनाद और अनाहत नाद अवश्य ही जग जाएगा। श्रीराम-कृपा के असीम सागर हैं। अपने नाम के उपासक को, एक न एक दिन अवश्य सम्भाल लेते हैं। उसे भूलने भटकने से बचाकर उसका पथ-प्रदर्शन आप करने लग जाते हैं। ऐसा भरोसा और अनुभव संतों और भक्तों का आदिकाल से चला आ रहा है। प्रत्येक उपासक को ऐसी धारणा तथा तत्परता से राम नाम का आराधन करते रहना उचित है। वह जहां आप होता है नामोपासना से वहीं नामी को, परमेश्वर को प्रकाशमान कर लिया करता है। नामोपासक को परा-प्रीति के वश, अनन्य भक्ति के आधीन और श्रीराम नाम की धुन की एकतारता में भी भगवान आप ही आप अभिव्यक्त हो जाते हैं। उपासक लोग, इसी कारण श्रीराम नाम रूप मधुर धुन में रमण करना, श्रीराम नाम

रूप महामंत्र में मन लगाना, श्रीराम नाम में तन्मय हो जाना और श्रीराम नामोपासना में निमग्नता का अलभ्य लाभ लेना 'परम योग' कहा करते हैं।

राम-कृपा अवतरण – ७

मन्त्र धारणा यों कर, विधि से लेकर नाम।
जपिए निश्चय अचल से, शक्तिधाम श्रीराम ॥ ७ ॥

मंत्र-	गोप्य या रहस्य पूर्ण बात, परामर्श, देवाधिदेव गायत्री आदि वैदिक वाक्य जिनके द्वारा यज्ञ आदि क्रिया करने का विधान हो।
धारणा-	पक्की लगन
विधि-	नियम के अनुसार
जपिए-	नाम का बार-बार उच्चारण कीजिए
निश्चय-	ऐसी धारणा जिसमें कोई सन्देह न हो। निःसंशय ज्ञान विश्वास, दृढ़ संकल्प
अचल-	स्थिर, दृढ़
शक्तिधाम-	शक्ति का उद्गम

अर्थ

उपरोक्त निष्ठा और उत्कंठा से भरपूर होकर निःसंशय संकल्प व दृढ़ विश्वास के साथ, शक्तिधाम श्रीराम नाम का जप विधि के अनुसार कीजिये।

व्याख्या

इस पद तक जप विज्ञान के सभी महत्वपूर्ण अंगों का निरूपण है।

1. जप करते समय यह निष्ठा होनी चाहिये कि राम नाम श्रीराम का देवालय है जिसमें राम विराजते हैं।
2. जप करते समय यह उत्कंठा होनी चाहिये कि श्रीराम-कृपा का अवतरण हो।
3. निश्चयात्मिका बुद्धि से जप करने का संकल्प हो। मन में कोई संशय न हो।

4. नाम जप की महिमा में दृढ़ विश्वास हो।
5. नाम जप विधि के अनुसार हो।

जप

जप का अर्थ है मंत्र अथवा नाम का बार-बार उच्चारण करना अर्थात् रटन।

नाम जप की यह महिमा हैं कि नाम लेते ही राम आ जाते हैं और राम नाम में स्वयं विराजते हैं। **"राम नाम में राम को सदा विराजित जान"।**

नाम स्मरण होने से राम से सम्बन्ध जुड़ता है। नाम जप के प्रसाद से मोह नाश और निजानन्द की प्राप्ति होती है, भीतर और बाहर प्रकाश हो जाता है।

जप के प्रकार

वाचिक जप-	स्पष्ट उच्चारण से (जो दूसरों को सुनाई दे)
उपांशु जप-	जिह्वा और ओंठ तो हिलते हैं परन्तु उच्चारण नहीं सुनाई देता
जिह्वा जप-	जिह्वा तो हिलती हैं परन्तु ओंठ नहीं
मानसिक-	मन ही मन उच्चारण (जिह्वा या ओंठ में गति नहीं होती)

जिस समय जैसी रुचि हो जप करना चाहिए। बन सके तो प्रतिदिन कुछ समय एकांत में बैठकर ध्यान अथवा अर्थ सहित जप किया जाय और शेष समय, चलते-फिरते, उठते-बैठते, कार्य करते भी जप चलता रहे।

कोई कहते हैं कि वाचिक से उपांश श्रेष्ठ है और उससे श्रेष्ठ जिह्वा और उससे भी श्रेष्ठ मानसिक।

एक ऐसा मत भी है कि मानसिक जप से जीवन मुक्ति और जिह्वा जप से भक्ति मिलती है। एक मत यह भी है कि साधना अवस्था में उच्च स्वर से उच्चारण करना श्रेष्ठ है (अवसर मिलने पर अनुभवी संत से परामर्श लेना चाहिए)।

यह सर्वमान्य है कि नाम जप सब अवस्थाओं में, सब समय, सब स्थान पर किया जा सकता है।

विधि

जप यदि विधि अनुसार हो तो उसका अतिशय लाभ होता है। जप की विधि जो श्री गुरु महाराज ने बताई हो उसी विधि से जप करना आवश्यक है।

जिस साधक ने दीक्षा नहीं ली हो, उसे सन्त महात्माओं की अनुभव सिद्ध वाणी द्वारा बताई हुई विधि को, निज-श्रद्धा और रुचि के अनुसार अपनाना चाहिये।

सिद्ध संत महात्मा कहते हैं और इस कथन पर बल देते हैं कि नाम जप 'ध्यान सहित' अथवा 'अर्थ सहित' अथवा 'सान्निध्य सहित' होना चाहिये। गृहस्थ साधक सोते-जागते, उठते-बैठते चलते-फिरते, कर्तव्य कर्म करते, विश्राम करते हुए सान्निध्य सहित जप करें और सुविधा रुचि के अनुसार कुछ समय एकांत में मौन होकर ध्यान सहित अथवा अर्थ सहित (जब जैसी श्रद्धा-रुचि हो) जप करें।

सान्निध्य सहित जप

"श्रीराम हृदय में विराजमान हैं, रोम-रोम में रमे हैं। प्रत्येक समय प्रत्येक स्थान पर मेरे साथ हैं।" इस भावना से राम के सान्निध्य का स्मरण रखते हुए जप करना सानिध्य सहित जप है। (राम सर्वव्यापी हैं, सर्वत्र हैं, सर्वदा हैं। श्रवण, स्वाध्याय, मनन की सहायता से हृदय में मिल जाते हैं। राम पवित्रता में रहते हैं, शुभ कर्मों में साथ देते हैं। ज्ञान से दीखते हैं और प्रेम से मिलते हैं। प्रत्येक कर्म करते हुए राम के सामीप्य का स्मरण रहने से भक्ति की साधना होती है।)

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"वह परमात्मा हमारे अंग संग है, यह भावना होनी चाहिए। विश्वास जितना प्रबल, सुदृढ़, सुनिश्चित होगा, उतना ही अधिक लाभ होगा। व्यवहार भी सुधरेगा और परमार्थ भी।"

ध्यान सहित जप

श्रीराम नाम अथवा राम नाम की जो मनोमय मूर्ति हृदय में होती है वही साधक को परमानन्द देती है। (अधिष्ठान के सम्मुख बैठ कर त्राटक करके ध्यान अथवा अपने आराध्य के मनोमय रूप का हृदय में ध्यान करना।) नेत्रों की चंचलता से मन चंचल हो जाता है। उसकी अन्तरंगवृत्ति छूट जाती है, बाह्य वृत्ति हो जाती है। अतः नेत्रों का निरोध होना चाहिए। बाहर नेत्र और भीतर मन यह दोनों बड़े प्रबल हैं, दोनों ध्यान के प्रतिबंधक हैं। दोनों को श्रीराम में लगाना चाहिये।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"राम-कृपा सहज नहीं है। वह अधिक से अधिक श्रम करने से ही संभव है। निरन्तर साधना करनी चाहिये। बिना नागा किये हुए बड़े मान और आदर के साथ ध्यान में बैठना चाहिए। चारों ओर शांति हो ऐसे समय में अभ्यास करो। भावना ऊ'ची होनी चाहिए। इस कार्य के लिए अधिक से अधिक समय दो। समय प्रशांत होवे..... भगवननाम में भाव दृढ होगा उतना ही लाभ होगा। भगवान के नाम में धारणा पक्की हो। त्रिलोक में करोड़ों मन्दिर हैं किंतु जो मूर्ति हमने अपने मन्दिर में स्थापित की वह हमेशा आदरणीय है।

ध्यान में एकाग्रता आवश्यक है। परन्तु साधक की एकाग्रता उसके भीतर उठने वाले संकल्प विकल्पों से भंग होती रहती है. यह सभी का अनुभव है। इस पर श्री स्वामी जी महाराज का अनुभूत उपदेश हृदयंकित कर लेना चाहिएः-

"माया रुकावट बनकर साधक के सामने आ जाती है पर माया के छुपे हुए संस्कार उदासीनता व मोह पैदा करते हैं। जन्म जन्मान्तरों से बनी हुई अपनी इस प्रवृत्तिमयी अवस्था से अभ्यास का संग्राम होता है जो संकल्प विकल्प उठें उन्हें आत्मा द्वारा स्फुरित न सोचें, बल्कि उनकी उपेक्षा करें। उनके सम्बन्ध में यह समझना कि मैं ही उन्हें सोच रहा हूँ उनको पुनः सजीव करना है। उनकी उपेक्षा करने से अपना बल बढ़ता है और ऐसे विचार और संस्कारों का बल कम होता चला जाता है। हम केवल उनके दृष्टा वनें, उनके चिंतन करने वाले न बनें जब कपड़ा धोते हैं तो पहले उसका मैल बाहर, उबल पड़ता है। ऐसे, ही कभी पुराने संस्कार अभ्यास, के समय उभरा करते हैं। अभ्यासी को इससे घबराना नहीं चाहिये। ये बुरे ख्याल निकल जाने के लिये, मिट जाने के लिए ही आते हैं। इन्हें रास्ता देना चाहिये। इनका पल्ला नहीं पकड़ना चाहिये। पल्ला पकड़ने से वे पुनर्जीवित हो जाते हैं और मुकाबला करने लग जाते हैं। मन टिक जाय इससे उल्टा मन चंचल बहुत सोचने से कि हमारा होता है। विवेक अधिक होना चाहिये। खींच नहीं होनी चाहिए। भगवत्कृपा का मार्ग मन को घेरने का मार्ग नहीं। इसमें मन को शिथिल करना चाहिये, उसकी उपेक्षा करनी चाहिये। यह समझना चाहिये कि मैं तो नाम का ध्यान करना हूँ। मन के इधर उधर जाने को फालतू समझना चाहिए। स्वभाव से जो काम होता है वह प्रयत्नपूर्वक किये जाने वाले काम की अपेक्षा अधिक अच्छा होता है।"

अर्थ सहित जप

'राम' मंत्र है और श्रीराम जी उसके देवता हैं। मंत्र के देवता के गुण, स्वभाव, महिमा, लीला को मंत्र का अर्थ कहते हैं। मंत्र के अर्थ का मनन करते हुए जप करना, अर्थ सहित जप है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"मंत्र में बड़ा बल है। प्रत्येक साधक को मनन करना चाहिए। बिना मनन के मन्त्र में मंत्रत्व नहीं होता। मंत्र को समझना व पूर्ण धारण रखना आवश्यक है। बिना श्रम के बात चित्त में चढ़ती नहीं राम का अर्थ मनन किए बिना महत्व वाला नहीं होता। बिना भावना के साधक को बल प्राप्ति नहीं होती शास्त्र जानने वालों को मंत्र का निश्चय होता है। इसका बड़ा प्रभाव होगा। मंत्र देवताओं की काया है उन्ही से यह प्रकट होता हैं। न जानने वाले आदमियों के पास युक्ति होती है लेकिन इसका बल नहीं होता। जो लोग युक्तिवाद में रहते हैं उनका क्षेत्र और होता है और जो अध्यात्मवाद में होते हैं उनका क्षेत्र और होता है। आध्यात्मवादियों को बाहर की युक्तियों से दुर्बल नहीं बनाना। अनुभवी आदमी जो कहे वह तत्वज्ञान से कहता है

निदिध्यासन

बार-बार चिन्तन को निदिध्यासन कहते हैं। ध्यान या चिन्तन के समय यदि व्यक्तियों के रूप, उदारता, सौहाद्र, शौर्य, गाम्भीर्य आदि आकर्षित करते हों तो उनके स्थान पर श्रीराम की मनोमय छवि का ध्यान चिंतन होने से व्यक्तियों के सौंदर्य का चिंतन छूट जाता है। श्रीराम के औदार्य, सौहाद्र, शौर्य, गाम्भीर आदि का चिंतन होने से व्यक्तियों का चिंतन हट जाता है।[१]

श्रीराम के सौंदर्य का चिंतन हो उनसे सुन्दर कोई नहीं, सौंदर्य का चिंतन स्वाभाविक है।[२] राम की कृपा का, उदारता का चिंतन हो। जो उनके चरणों का स्मरण करता है, श्रीराम उसे अपने आप को दे डालते हैं। उनकी उदारता असीम है।[३] श्रीराम के सौहाद्र का चिंतन हो। श्रीराम परम सुहृद हैं।[४] श्रीराम के गाम्भीर्य का चिंतन हो।[५] श्रीराम के शौर्य आदि अनेकानेक गुण, महात्म्य का चिंतन हो।

तीनों कालों को राम के चिंतन से भर दिया जाय। राम के चरणों का स्मरण करने से राम सदा के लिए निश्चिन्त कर देते हैं।"

<u>*श्री स्वामी जी महाराज की वाणी*</u>

"जो क्रियावान है वही विद्वान है। इसलिए पढ़कर, सुनकर' मनन करना चाहिए। पढ़ना कम चाहिए, मनन अधिक करना चाहिए। मनन करने पर जब दृढ़ता आ जाती है इसको निदिध्यासन कहते हैं।

अचल निश्चय

अपनी श्रद्धा से कभी विचलित नहीं होना चाहिये। अनेक प्रकार के कर्म, अधर्म और बहुत से मत हैं उनको क्लेशकारी मानकर उनका त्याग करके श्रीराम के चरणों में प्रीति करना चाहिए।[(६)]

<u>*श्री स्वामी जी महाराज की वाणी*</u>

"जो राम-कृपा का पात्र बन गया और एक बार नाम ग्रहण कर लिया वह भक्त फिर नाश को प्राप्त नहीं होता। अटूट निश्चय, बड़ी प्रीति, भक्ति भाव आदर तथा विश्वास के साथ नाम आराधन करना चाहिए ... ... अपनी जागृति का निश्चय होना चाहिए। यह मार्ग निश्चय व विश्वास का मार्ग है। कोई लाख कहकर इसके विरुद्ध बहकावे, साधक को अपना आप कायम रखना चाहिए। साधक जब मैदानो में जाए सब की सुने पर अपने आपको खोए नहीं। उसका निश्चय बलवान होना चाहिए।

राम नाम के जप कीर्तन करने में लज्जा नहीं आनी चाहिए। जब स्त्री प्ररुषों को सिनेमा जाने में या अन्य गन्दे व्यसनों के करने में लज्जा नहीं आती तो राम नाम को माला जपने में क्यों आवे। भक्त राम नाम की माला से तर जाता है। यह माला

बड़ा ग्रन्थ है ... ... प्रभु के साथ जब प्रीति लगा लो तो कोई कुछ भी कहे संकोच नहीं करना चाहिए

जो संसार की परवाह नहीं करते वे राम से ही लौ लगाते हैं। वह राम को प्राप्त होते हैं। जप की मर्यादा बनाने से बड़ा लाभ होता है ... ... अधिक राम धन का मोह हो जावे तो यह लोभ तो श्रीराम की चरण शरण में ले जाता है, कल्याण कर देता है, ... राम मन्दिर में जाने को कोई सीढ़ी है तो रामनाम है। यह दावे से कहते हैं कि इसमें बड़ा बल है।

हमारी बुद्धि विचलित नहीं होनी चाहिए। राम नाम के जप को व्यक्तियों ने अमृत नहीं समझा, इसलिए विश्वास नहीं।

श्रद्धा खूब होनी चाहिए। राम रस भक्ति का प्रेम प्राप्त करना चाहिए। निर्वाण पैर के नीचे डोलता रहेगा। राम नाम जपने वाले को राम धाम मिलेगा, सदा ज्योति जाग्रत रहेगी। राम धुन खूब रमाओ, इतना राम बस जाए कि पहाड़ के पानी की तरह अपने आप रिसने लगे।"

अजपा जप पर *श्री स्वामी जी महाराज की वाणी*

"जप करना आध्यात्मिक तप है। जितना अधिक जप होगा उतनी ही अधिक आत्मा निर्मल होगी। जप बड़ी भावना के साथ करना चाहिए। इससे संस्कारों पर गहरा असर पड़ेगा।

साधक स्वयं प्रतीत करेगा जब स्वयं अजपा जप चलेगा। वाणी से नहीं, जीभ से नहीं, स्वयं मानसिक जाप होता जाएगा। अविद्या की ग्रन्थि टूट जाएगी। दशम द्वार से पार हो जाएगा। मानो साधक का परम कल्याण हो जाता है ... ... जहां मन वाणी का विचार न हो और राम नाम की ध्वनि अन्दर चल रही हो तो उस अजपा जप के पश्चात् फिर किसी और बात की आवश्यकता नहीं रहती। मनुष्य

के अन्दर जो वास्तविक भूख है वह पूरी हो जाती है, जब अजपा जप शुरू होता है।

राम नाम के उपासक को अपने भीतर श्रीराम नाम जाग्रत करना चाहिए, उसे ऐसा प्रतीत हो कि चलते-फिरते, उठते-बैठते, लेटे हुए और काम-काज करते हुए भी, जब ध्यान किया जाय राम नाम भीतर स्वयंमेव जपा जा रहा है. यहां तक कि सोते हुए जप चलता रहे और जब आंख खुले उस समय राम-नाम परम तारक मंत्र की तार भीतर हिलती हुई प्रतीत हो।

जिस उपासक को यह अवस्था प्राप्त हो जाय उसको समझ लेना चाहिए कि राम नाम महामन्त्र उसकी आत्मा में बस गया है, उसकी आत्मा सत्ता जग गई है। उसका मन्त्र सिद्ध हो चुका है और उस पर राम-कृपा अवतरित हो आई। यह अजपा जप की भूमिका है।

इसके प्राप्त हो जाने पर उपासक कालचक्र से पार पा जाता है, उसकी गति उच्चतर हो जाती है और वह अपना निस्तार अवश्य कर लेता है। ऊपर कही अवस्था को सिद्ध करने के लिए श्रीराम नाम में अपार प्रीति, अतुल श्रद्धा, अनन्य भक्ति और संशय-रहित निश्चय हो तो यह अवस्था शीघ्र मिल जाती है। श्रीराम नाम का अधिक जप करने से भी अजपा जप जग जाता है।”

संदर्भ नोट

१) सेवक सुमिरत नाम सप्रीती, बिनु श्रम प्रबल मोहदल जीती॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने, नाम प्रसाद सोच हि सपने॥
राम नाम मनिदीप धरि, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहु, जो चाहसि उजियार॥

२) मरकत मृदुल कलेवर स्यामा, अंग अंग प्रति छबि बहुकामा।
नव राजीव अरुन मृद चरना, पदज रुचिर नख ससिदुति हरना॥
इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा, बरबस ब्रह्म सुखहि मन त्यागा।
सज बिराग रूप मन मोरा, थकित होता जिमि चन्द चकोरा॥

३) कोमल चित्त अति दीनदयाला, कारन बिनु रघुनाथ कृपाला।
को रघुवीर सरिस संसारा, सील सनेह निबाह निहारा॥
करुनामय रघुनाथ गुसाई, वेगि पाइ अहि पीर पराई।
गिरिजा रघुपति के यह रीती, करहि सदा संलन पर प्रीती॥
उमा राम सम हित जग माहीं, गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं।
मोरि सुधारिहि सो सब भांती, जासु कृपा नहि कृपा अघाती॥

४) रहत न प्रभु चित चूकि किए की करत सुरति समय बार हिये की।
राम सुस्वामि कुसेवकु मोसो, निज दिसि देखि दयानिधि पोसो॥

५) प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न ममले बनवास दुःखतः।
मुखाम्बुज श्री रघुनन्दस्य में सदास्तु सा मंजुल मंगलप्रदा॥

६) नर विविध कर्म, अधर्म बहुमत सोकप्रद सब त्याग हूँ।
विस्वास कर कह दास तुलसी राम पद अनुरागहूँ॥

राम-कृपा अवतरण – ८

यथा वृक्ष भी बीज से, जल रज ऋतु संयोग।
पा कर विकसे क्रम से, त्यों मन्त्र से योग॥ ८॥

जल-	पानी
रज-	मिट्टी
ऋतु-	जाड़ा, गरमी और बरसात के अनुसार वर्ष के भाग : वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत और शिशिर
संयोग-	मेल, तीनों का मिलना
विकसे-	उन्नति करे
क्रम-	सिलसिला, कार्य को उचित रूप से धीरे-धीरे करने की प्रणाली, धीरे-धीरे
योग-	तप और ध्यान वैराग्य, छः दर्शनों में से एक जिसमें चित्त को एकाग्र करके ईश्वर में लीन होने का विधान है।

अर्थ

जिस प्रकार मिट्टी, पानी और ऋतु तीनों के मेल से बीज धीरे-धीरे उन्नति करके वृक्ष बनता है, उसी प्रकार मन्त्र से धीरे-धीरे योग का विकास होता है।

राम-कृपा अवतरण – ९

यथा शक्ति परमाणु में, विद्युत कोष समान ।
है मन्त्र त्यों शक्तिमय, ऐसा रखिए ध्यान ॥ ९ ॥

यथा- जैसे

शक्ति- बल

परमाणु- पृथ्वी, जल, तेज, और वायु इन चार भूतों का छोटे से छोटा भाग। अत्यन्त सूक्ष्म अणु, एटम

विद्युत- बिजली

कोष- भंडार

शक्तिमय- शक्ति से परिपूर्ण

ध्यान रखना-समझ कर हृदयांकित करना

अर्थ

यह सदा ध्यान रखना चाहिये कि जिस प्रकार परमाणु में बिजली के कोष के समान शक्ति रहती है उसी प्रकार मंत्र शक्ति से परिपूर्ण है।

राम-कृपा अवतरण – १०

ध्रुव धारणा धार यह, राधिए मन्त्र निधान।
हरि कृपा अवतरण का, पूर्ण रखिए ज्ञान ॥ १० ॥

ध्रुव-	अचल, निश्चित, पक्का
धारणा-	दृढ़ निश्चय
धार-	रखकर
राधिये-	आराधना कीजिए
मन्त्र निधान-	सबसे श्रेष्ठ मन्त्र
हरि-	श्रीराम
कृपा-	अनुग्रह, करुणा
अवतरण-	प्रादुर्भाव, अवतार
ज्ञान-	वस्तुओं और विषयों का बोध, तत्व ज्ञान

अर्थ

पक्का दृढ़ निश्चय रखकर सर्वश्रेष्ठ श्रीराम मंत्र की आराधना करनी चाहिए और श्रीराम-कृपा अवतरण किस प्रकार होता है उसको भली प्रकार समझ लेना चाहिये।

व्याख्या

आराधना में दो बातें परमावश्यक हैं। एक बात तो यह अचल दृढ़ निश्चय होना चाहिये कि मेरा आराध्य मन्त्र सर्वश्रेष्ठ और शक्तिमय है। दूसरा यह विश्वास रखना चाहिये कि नाम जप से श्रीराम-कृपा का अवतरण अवश्य ही होगा। अगले पांच पद इन विश्वासों को दृढ़ करते हैं।

विश्वास का अर्थ है किसी के प्रति सत्यता, हितैषिता, सद्भाव दृढ़ता आदि की धारणा होना। इसी प्रकार किसी तत्व, उपदेश अथवा अनुभव की सत्यता या उत्तमता का ज्ञान होने से जो धारणा होती है उसे भी विश्वास करते हैं।

किसी प्रकार की सिद्धि प्राप्त होने के लिए विश्वास नितांत आवश्यक है। [१] श्रेष्ठतम विश्वास यह है कि श्रीराम-कृपालु हैं। कृपानिधान है, अहैतुकी कृपा करते हैं।

जप की महिमा में साधक का निश्चय अडिग होना चाहिये, उसे संशय और कुतर्क से दूर रहना चाहिये। संशय से कुतर्क ओर कुतर्क से संशय होता है। दोनों सर्वथा त्याज्य हैं।

नाम की महिमा का श्रुतियों, स्मृतियों, पुराणों और सद्ग्रंथों में वर्णन है। फिर भी कभी कोई शंका करते हैं कि महिमा का जैसा वर्णन किया जाता है वैसा फल देखने में नहीं आता। वास्तव में उसका कारण जापक में श्रद्धा विश्वास की कमी है। जब तक विश्वास दृढ़ नहीं होता तब तक प्रीति नहीं होती और प्रीति के बिना साधना में दृढ़ता नहीं आती। [२]

विश्वास न हो तो भी नाम जप का फल अवश्य होगा ही और जिससे जापक का कल्याण होगा ही, वह भवसागर से तरेगा ही, उसमें तो किंचित सन्देह नहीं है। परन्तु यदि विश्वास और दृढ़ता के साथ जप हो तो उसका प्रत्यक्ष फल शीघ्र ही मिलता है। ध्रुव विश्वास से सब कुछ हो सकता है।

विश्वास जैसे-जैसे दृढ़ होता जाता है वैसे-वैसे नाम में प्रीति मैं बढ़ती जाती है और तब सोते-जागते, चलते-फिरते, उठते-बैठते, कार्य करते हुए, प्रत्येक समय और प्रत्येक स्थान पर नाम जप निरन्तर होता रहता है और बड़ी सुखद और सरस अवस्था प्राप्त होती है। [३]

जापक को इन अपराधों से सावधानी पूर्वक सर्वथा बचना चाहिये :-

- नाम की कुव्याख्या
- नाम महिमा को अर्थवाद कहना,
- अन्य साधना को नाम के तुल्य कहना,
- नाम महिमा सुन कर प्रसन्न न होना अथवा ऊब जाना,
- नाम बल पर पाप करना।

श्रीराम को छोड़कर जो अन्य को भजता है उसे मन्दमति कहते हैं। जो विश्वास के साथ और दृढ़ता के साथ साधना करता है वह चतुर है, प्रवीण है। (४)

साधना में दो प्रमुख विघ्न हैं: एक तो यह विश्वास न होना कि राम नाम जपने से राम-कृपा होगी और राम-कृपा में सब कुछ समाया हुआ है। दूसरा नाम जपने में दृढ़ता, स्थिरता का न होना। बुद्धि निश्चयात्मिका और मन अचंचल होना चाहिये। बुद्धि यह निर्णय करे कि मेरा कल्याण, मेरा हित साधना में ही है, राम नाम जपने में ही है क्योंकि राम नाम में श्रीराम-कृपा विराजती है, ओर नाम जपते ही श्रीराम-कृपा की वर्षा होती है। मेरा हित किसमें है यह श्रीराम ही जानते हैं क्योंकि वह सर्वव्यापी हैं और सर्वज्ञ हैं।

मन संकल्प-विकल्पात्मक वृत्ति का नाम है। मन ही बन्धन और मोक्ष का कारण है (५)। जब यह देह में अहंकार की स्वीकृति और वस्तु, व्यक्ति परिस्थिति में ममता उत्पन्न करता है तब भ्रम डाल कर "मैं-मेरा" और 'तू-तेरा' से बांध देता है जिसके कारण मनुष्य संसार में सतत भटकता रहता है। परन्तु जब यह मन सुमिरन (साध्य की रूप माधुरी के अवलोकन आदि अथवा राम से प्रीति की अनुभूति) में लगा रहता है तब साधक ऊपर उठता रहता है, महान् होता जाता है।

मन अपने अभ्यस्त विषयों के प्रति स्वभाव से चंचल रहता है। मनुष्य को बल पूर्वक मथ कर देह को इन्द्रियों के परवश कर देता है। मन पीपल के पत्ते अथवा

बन्दर जैसा चंचल है। इसका निग्रह उतना ही कठिन है जितना वायु को बांध लेना:

चंचलम् हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढ़म् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ *(गीता ६ / ३४)*

अर्जुन जी के इस वाक्य का श्रीकृष्ण ने खंडन नहीं किया अपितु पुष्टि ही की "असंशयं महाबाहो मनो दुनिग्रहं चलम्" परन्तु उसी श्लोक में उसका उपाय भी बताया:

"अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।" (गीता ६ । ३५)

और उसकी क्रियात्मक रीति भी समझाई:

"यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।

ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥" (गीता ६। २६)

भक्त के लिए और भी सुगम, सार्थक और सरस रीति यह है :-

श्री रामचन्द्र कृपाल भज मन हरण भव भय दारुणं ।

नव कंज लोचन, कंज मुख, कर कंज, पद कंजारुणं ॥

श्रीराम के दिव्य कल्याण गुण, अंगों की शोभा, उनके सौंदर्य, माधुर्य, शौर्य, औदार्य, गाम्भीर्य (जो मन के अभ्यस्त विषयों को अतिशय सुखद है) के मनन और ध्यान करने से मन प्रशांत हो जाता है, तृप्त हो जाता है और भव भय का नाश होता है।

इसी प्रकार रसमय मधुमय चिन्मय राम नाम के जप का अमृत रस पीने से मन प्रशांत और तृप्त हो जाता है और मृत्यु का भय नष्ट हो जाता है।

उपयुक्त विवेचन से सिद्ध होता है कि श्रीराम (साध्य) सुख-राशि, विश्रामदाता और आनन्द सिन्धु तो हैं ही, राम नाम भी अमृत है। नाम जप (साधना) भी अमृत वाणी है, जपने वाला मन और जपने वाली रसना (साधना) भी अमृत है और जापक (साधक) भी अमृतमय हो जाता है। राम नाम जप की इस महिमा का निरूपण अमृतवाणी में विस्तारपूर्वक हैं।

सुमिरन से राम-कृपा होती है, राम-कृपा से श्रीराम की प्रभुता का ज्ञान होता है जिससे श्रीराम में विश्वास होता है। विश्वास से प्रीति होती है और प्रीति से भक्ति दृढ़ होती है। अतः सुमिरन ही श्रेष्ठ साधना है [६]।

संसार में विषय, धन, भोग, पद, यश आदि अपनी -अपनी ओर खींचते हैं यदि दृढ़ता नहीं होगी तो पथिक उनकी ओर खिंच जाएगा। जब नाम जप में, पूजा कीर्तन में, श्रीराम के रूप, गुण, स्वभाव, लीला आदि में रस आये, उनमें अनुराग हो जाए तब समझना चाहिए कि निश्चय दृढ़ हुआ।

चारों वेदों ने श्रीराम की स्तुति में यह घोषणा की है (अर्थात चारों वेदों का सार यह है): कि जो सब आशाओं को छोड़ कर आप पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं वे केवल आपका नाम ही जप कर बिना ही परिश्रम भव सागर से तर जाते हैं। हे नाथ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं।

बिस्वास करि, सब आस परिहरि, दास तव जे होई रहे ।
जपि नाम तव, बिनु श्रम तरहि भव, नाथ सो समरामहे ॥

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"संशय आध्यात्मिक रोग है ... ... संशय उन लोगों की संगति से उत्पन्न होते हैं जो राम नाम के विरोधी हैं। इन से बचना चाहिए ... ... अधिक पढ़ना बुरा नहीं है, किंतु ज्ञान विज्ञान की पुस्तकें पढ़ने से अधिकांश में संशय रोग पैदा हो

जाता है जिसका मारना जरूरी है। यह संशय ज्ञान विज्ञान को नाश कर देता है। इसलिए संशय को मिटाओ। ... ... बहुत लोग हैं जिन्हें अपने में संशय होता है, यह ठीक नहीं ... ... राम मेरा कल्याण करेगा यह विश्वास जमाना चाहिये ... ... मेरे में पूर्ण विश्वास रखते हुए नित्य चिंतन करते हुए जो जीवन यापन करते हैं उनका योगक्षेम वहन मैं करता हूँ, गीता में ऐसा वचन है ... ... यह संशय न हो कि भगवान के अतिरिक्त भी कोई मुक्तिदाता है। हमें अपने आराध्य में संशय न हो। ... ... बालवत् मां के पास जाओ। भगवान सब का पिता है। भक्ति में दृढ़ विश्वास, अविचल निश्चय, अटूट आस्था होवे। कोई हजार दलील दे, प्रमाण दे, विचलित न होवे ... ... दृढ़ भावना रखते हुए मंत्र का आराधन करने से बड़ा लाभ होता है। उनके अन्दर शुभ भावों का संचार होता है। जितनी भावना और विश्वास बढेगा उतना ही लाभ होगा। ... ... विश्वास साधक का जीवन है ... ... विश्वासी को चिता नहीं होती। विश्वासी की आत्मा सजीव होती है ... ... अपने आप को यह न समझें कि हम शक्तिहीन हैं विश्वास मन बुद्धि को बल देता है, पारिवारिक जीवन को सुधारता है। भगवान पर बड़ा भरोसा होना चाहिये। आत्म मजबूत बना कर रहना चाहिये ... ... सन्तोष और धैर्य होना चाहिये कि उसमें शक्ति है। ... ... मनन करना और अपने से प्रश्न करना कि मुझ में कितना विश्वास है, मंत्र में कितनी धारणा है ? मैं कितना दृढ़ हूँ ? कितना दृढ़ रहता हूँ ? ... ... श्रीराम नाम की धुन की एकतारता में श्री भगवान आप ही आप अभिव्यक्त हो जाते हैं। ... ... मनुष्य की भावना ऊंची होनी चाहिये। भावना में देव विराजमान होता है। सीधा सरल मार्ग हरि भक्ति पर श्रद्धा है। इस प्रकार कोई भी आराधना करे उसको लाभ होना चाहिये। यदि लाभ नहीं होता तो उसे अपने आपको टटोलना चाहिये। उसे स्वयं पता लग जाएगा कि त्रुटि कहां है। ... ... तर्क का सहारा छोड़कर धर्म की कमाई करो। दलील के कमरे को बन्द कर साधक को परम विश्वास, प्रीति तथा श्रद्धा से साधना में लग

जाना चाहिए। ... ... इस साधना में लोगों को शीघ्र ही लाभ होता है. क्योंकि इसमें इस मन्त्र के अधिष्ठाता स्वयं भगवान हैं। अतः इसके पीछे बड़ी शक्ति है किंतु साधक उसका समुचित आदर नहीं करता और जीवन में उस शक्ति अवतरण को स्थायी बनाने के लिए प्रयत्नशील नहीं होता। ... ... विश्वास में दृढ़ता प्रतिदिन अभ्यास से आती है। अभ्यास से विश्वास दृढ़ होता है।"

संदर्भ नोट

(१) "कवनेउ सिद्धि कि बिनु विस्वासा"।
"गुरु के बचन प्रतीति न जेहो,
सपनेहु सुगम न सुख सिद्ध तेही.।"

(२) बिनु विस्वास मगति नहीं, तेहि बिनु द्रर्वाह न रामु।
राम-कृपा बिनु सपनेहूं, जोव न लह विश्राम॥"
विश्वास कर कहि दास तुलसी राम पद अनुरागहू।"

(३) 'पुलक गात हियसिय रघुवीरू।
जीह नाम जालोचन नीरू॥"

(४) 'परिहरि सकल भरोस रामहि भजहि ते चतुर नर। '
'मसकहि करइ विरंचि प्रभु, अजहि मसक ते होन। '
'अस विचारि तजि संसय, रामहि भजहि प्रवीन॥'

(५) "मनएव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्ष्यो"।

(६) "निज अनुभव अब कहहु खगेसा, बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा।
राम-कृपा बिनु सुनु खगराई, जानि न जाइ राम प्रभुताई॥
जाने बिनु न होइ परतीती, बिनु परतीति होइ नहीं प्रीती॥
प्रीति बिना नहीं भगति दिढ़ाई, जिमि खगपति जल की चिकनाई॥

राम-कृप अवतरण – ११

आता खिड़की द्वार से, पवन तेज का पूर ।
है कृपा त्यों आ रही, करती दुर्गुण दूर ॥ ११ ॥

द्वार-	दरवाजा
पवन-	वायु
तेज-	वेग
पूर-	परिपूर्ण, झोंका
दुर्गुण-	दोष

अर्थ

जिस प्रकार द्वार और खिड़की से वेग पूर्वक पवन का झोंका आता है उसी प्रकार (नाम जप की महिमा से) श्रीराम-कृपा आती है और दुर्गुणों को दूर करती है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"हमारा साधन मंत्रयोग है। मंत्र में अपनी शक्ति होती है'। मंत्र मूति है। यह भगवत् कृपा का मार्ग है ... ... नाम अन्दर की खिड़की खोलता है फिर उसमें भगवत्कृपा की किरण स्वयमेव आयेगी।"

राम-कृपा अवतरण – १२

बटन दबाने से यथा, आती बिजली धार।
नाम जाप प्रभाव से. त्यों कृपा अवतार ॥ १२ ॥

धार-	करन्ट
प्रभाव-	सामर्थ्य, महिमा, महात्म्य
अवतार-	भगवान का भक्त की ओर आना

अर्थ

जिस प्रकार बटन दबाते ही बिजली का करन्ट आता है उस प्रकार नाम जप की महिमा से श्रीराम-कृपा का अवतरण होता है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"इस मंत्र का उसी प्रकार से प्रभाव है जिस प्रकार बिजली की तार से करन्ट उस समय आती है जबकि उसका सम्बन्ध पावर हाउस से आने वाली तार से लगाया जावे। यह संबंध बड़ी चीज है। इसी प्रकार अन्तःकरण में सम्बन्ध जोड़ना चाहिये और वह राम नाम से ही जुड़ता है। अब जब सम्बन्ध हो जाएगा तो धारा आती रहेगी।"

राम-कृपा अवतरण – १३

खोलते ही जल नल ज्यों, बहता वारि बहाव।
जप से कृपा अवतरित हो, तथा सजगकर भाव ॥ १३ ॥

वारि-	पानी, जल
बहाव-	बहता हुआ
सजगकर-	जगा कर
भाव-	श्रद्धा, विश्वास

अर्थ

जिस प्रकार पानी का नल खोलते ही उसमें से बहने लगता है उसी प्रकार विश्वास को जगाकर जप कर श्रीराम-कृपा का अवतरण होता है

राम-कृपा अवतरण – १४

राम शब्द को ध्याइये, मन्त्र तारक मान ।
स्वशक्ति सत्ता जग करे, उपरि चक्र को यान ॥ १४ ॥

स्वशक्ति-	आत्मशक्ति
सत्ता-	योग के अनुसार कुण्डलिनी शक्ति
जग-	जाग्रत होकर
उपरि-	ऊपरी
चक्र-	योग के अनुसार शरीरस्थ छः पद्म
यान-	वाहन, रथ, गति, चलना

अर्थ

राम शब्द को तारक मन्त्र मानकर उसका ध्यान करने से कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती है। ऊपरी चक्र में गति होती है और आत्म शक्ति जाग्रत होती है।

व्याख्या

जीव यद्यपि ईश्वर का अंश है, अविनाशी है अमल है, सहज सुखराशि है, परन्तु अविद्यारूपी रात्रि में मोहरूपी निद्रावश सोता है और अपने आत्मस्वरूप को भूलकर स्वप्नवत (सुख-दुःख, लोक-व्यवहार को) सच्चा मान बैठता है। श्रीराम-कृपा साधक (नाम जापक) को उसके शुद्ध स्वरूप का बोध कर देती है। तब वह चैतन्य होता है, लोक सुख-दुख को स्वप्नवत् व्यर्थ समझ कर श्रीराम में अनुरक्त होता है और विषय-विलास में नहीं भूलता।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

“जब मनुष्य का निश्चय स्थिर हो जाय तो श्रद्धा भी होती है, मनन भी होता है। संशयशील की श्रद्धा भी ढीली हो जाती है. मनन भी ढीला हो जाता है। ... ...

... महर्षि लोग कोई अनुमान करने वाले नहीं थे। उन्होंने जो कुछ भी वर्णन किया है वह अनुभव करके किया है। उपनिषत्कार मतवादी नहीं थे। उन्होंने अपने अनुभव वर्णन किए हैं। ... ... भारतवर्ष का अध्यात्मवाद मौलिक है और सर्वत्र विस्तृत हुआ है। इसमें वर्णित सच्चाइयां गणित शास्त्र की तरह ठीक हैं। हमारा ध्येय सत्य है। उसका जानना ज्ञान से होता है। यह आत्मा अपने स्वरूप को पाकर खिल जाता है ... ... अगर साधक शक्ति के जगाने के प्रकारों को मुख्य बात माने तो वह अधिक उन्नति कर जाता है ... ... शरीर में शिथिलता आ जाना एक बहुत उच्च चिन्ह है। नाद भी एक चिन्ह है। पहले यह जरा स्थूल होता है और फिर अपने आप में सूक्ष्म होता चला जाता है। नाद आत्मगत भी होता है और प्रवृत्तिर्गत भी। नाद की मधुरता को कौन कहे ? परमाणु में भी नाद होता है।

... ... यह नादों में बड़ी मोहिनी शक्ति होती है जो मन को मस्त कर देती है ... ... आत्मशक्ति जमने तथा भगवत्कृपा अवतीर्ण होने के यह लक्षण हैं - देहपात होना, कम्प होना, हर्ष होना, हंसने लग जाना, पसीना आ जाना व रोंगटे खड़े हो जाना। यह सब लक्षण सब में नहीं होते। किसी में कोई किसी में कोई प्रकट होता है।"

राम-कृपा अवतरण – १५

दशम द्वार से हो तभी, राम-कृपा अवतार ।
ज्ञान शक्ति आनन्द सह, साम शक्ति संचार ॥ १५ ॥

दशम द्वार-	दसवां द्वार
ज्ञान-	वस्तुओं और विषयों का बोध, तत्वज्ञान
शक्ति-	पराक्रम, अधिकार, बल
आनन्द-	प्रसन्नता, आनन्द का पर्यायवाची शब्द मिलता नहीं है
सह-	सहित
सामशक्ति-	समरसता (अर्थात साधक और साध्य (श्रीराम) में ऐक्य की स्थापना) सहज समाधि का जगना
संचार-	जगकर चलने लगना

अर्थ

इस प्रकार नाम जप होने से ज्ञान, शक्ति और आनंद सहित श्री राम-कृपा का अवतरण,होता है जिससे सहज समाधि जगती है साधक और राम में ऐक्य की स्थापना होती और उसका संचार होता है।

व्याख्या

अचल निश्चय और ध्रुव धारण से मंत्र जप, नाम जप होने से श्रीराम-कृपा का अवतरण होता है। शक्ति, ज्ञान और आनन्द का प्रसाद मिलता है, जापक जब नाम में लीन हो जाता तो राम से ऐक्य हो जाता है जो साधक की सर्वोच्च अवस्था है।

श्रीराम का वरदान है-मेरे दर्शन का परम अनुपम फल यह है कि जीव अपने सहज स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। [१] यही फल नाम जप से मिलता है।

दशम द्वार

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

राधा स्वामी मत आदि में दशमद्वार खुलने, दिव्य दर्शन आदि की बात बताते हैं।[२]

संदर्भ नोट

(१) मम दरसन फल परम अनूपा।
जीव पाव निज सहस सरूपा॥

(२) दशमद्वार के विषय में ऐसा बताते हैं कि "अष्टांग योग के अभ्यासी का दसवां द्वार तीसरा तिल (तीसरी आँख, आज्ञा चक्र) है। बाकी के नौ द्वारे, दो आंखें, दो कान, नाक के दो सुराख, एक मुख, एक गुदा, और एक इन्द्री है। ये सभी द्वारे देह में हैं। अष्टांग योग का अभ्यासी दसवें द्वार अर्थात् तीसरे तिल से निकल कर विराट चक्र में समाता है। संतों का दसवां द्वार सुन्न में है, बाकी के नौ द्वारे ये हैं:- तीसरा तिल, गुदा चक्र, इन्द्री चक्र, नाभि चक्र, हृदय चक्र, कंठ चक्र, विराट चक्र, सहसदल कँवल, त्रिकुटी। अष्टांग योगी का दसवां द्वार संतों का आरम्भ स्थान है। संतों का दसवां द्वार योगेश्वरों का सिद्धांतपद है अर्थात् योगेश्वर सुन्न के धनी रारंग पुरुष में समा जाते हैं।"
एक और स्थान पर ऐसा लिखा मिला है कि "त्रिकुटी के मुकाम से पाताल लोक तक त्रिलोकी कही जाती है और इस तरह की अनन्त त्रिलोकियां दशम द्वार यानी शून्य स्थान के नीचे रची गई हैं, यानी दशम द्वार से माया और ब्रह्म की अनन्त धारें फूटी हैं।"

राम-कृपा अवतरण – १६

देव दया स्वशक्ति का, सहस्र कमल में मिलाप
हो सत्पुरुष संयोग से, सर्व नष्ट हों पाप ॥ १६ ॥

देव-	श्रीराम
दया-	कृपा, अनुग्रह, करुणा
सहस्र कमल-	योग के अनुसार ब्रह्माण्ड में रहने वाला हजार पंखड़ियों वाला कमल।
सत्पुरुष-	श्री गुरु महाराज, श्रेष्ठ पुरुष
संयोग-	संबंध
सर्व-	सब
नष्ट-	नाश होना
पाप-	वह कर्म जिस का फल इस लोक और परलोक में अशुभ हो।

अर्थ

श्री गुरु महाराज (अथवा श्रेष्ठ पुरुष) का जब साधक से सम्बन्ध जुड़ता है तब श्रीराम-कृपा की स्वशक्ति का सहस्त्र कमल से मिलाप हो जाता है और सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

व्याख्या

श्रीराम का स्वरूप श्रीराम-कृपा से ही जाना जाता है। अतः जो योग्य गुरु श्रीराम के स्वरूप का ज्ञान करावे वह भगवान का स्वरूप ही है। [१]

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"कभी-कभी नाम दीक्षा के अवसर पर शक्ति आह्वान करते समय नाम बल का परिचय मिलता है कि दस मिनिट में दसों चक्र खुल जाते हैं ... ... नाम

अवतरण से आत्मा प्रबुद्ध हो जाती है। इसी भावना से नाम दिया जाता है। इसी भाव से नाम लेना चाहिए।

बिना हरि कृपा से सन्त नहीं मिलते। सन्त बादलों का रूप है - उनकी भक्ति जल है - जल जो चलता ही रहता है, रुकावट नहीं। भाग्यशाली मनुष्य इस जल को स्वीकार करते हैं।

माता सीता ने रावण से यह कहा था कि तेरी इस म्लेच्छ बुद्धि से ऐसा प्रतीत होता है कि तेरे इस देश में सन्त नहीं हैं। अगर हैं भी तो छुपे हुए हैं, उपदेश नहीं देते या तू उनके उपदेश पर नहीं चलता।"

संदर्भ नोट

१) पुनि पुनि काग चरन सिरु नावा।
जानि राम सम प्रेम बढ़ावा॥

प्रकरण २
नमस्कार सप्तक



संगति

श्रीराम का श्रेष्ठ और सुन्दर रूप राम-कृपा है। श्रीराम और राम-कृपा अभिन्न हैं। राम-कृपा की प्राप्ति श्रीराम की प्राप्ति है। राम-कृपा का दर्शन श्रीराम का दर्शन है। राम-कृपा का अवतरण श्रीराम का अवतरण है। राम-कृपा पाने पर कुछ और पाना नहीं रहता। राम-कृपा अवतरण की साधना है राम नाम का जप। राम मंत्र है, देवालय है, जिसमें श्रीराम विराजते है। राम (नाम) और राम (नामी) अभिन्न हैं। अचल निश्चय और ध्रुव धारणा के साथ जप करते हुए जब जापक तल्लीन हो जाता है तब उसका राम से तादात्म्य हो जाता है, अर्थात् साधक और साध्य में

भी ऐक्य हो जाता है। इस साधना विज्ञान और महात्म्य को राम-कृपा अवतरण' में समझ लिया है। अब 'साधक साधना की तैयारी करता है।

'नमस्कार-सप्तक' साधक का अमूल्य साधन है जो उसे साधना के लिए तैयार करके सुपात्र बना देता है। साधक के भीतर जो 'मैं' है वह परमेश्वर का अंश है, अतः अपने स्वरूप में अविनाशी है, निर्मल है और सहज सुख राशि है। परन्तु 'मैं-मेरा' (अहंकार और आसक्ति) के माया जाल में फंसा हुआ है। मनुष्य को नचाने वाली कामना के जनक-जननी यही अहंकार और आसक्ति हैं। कामना का आसन इन दोनों के बीच में है। इन तीन मूल दोषों से ही अन्य सभी दोषों की उत्पत्ति है। इन्हीं तीन से मनुष्य अशांत, चिंतित और बंधन में रहता है। परन्तु यह निर्विवाद सिद्ध है कि भावनाएं (मन) ही इन तीनों का आधार है और भावनाएं (मन) ही इनसे छुड़ा सकती हैं। कोई वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति ऐसी नहीं है जो मनुष्य को अहंकार, आसक्ति और कामना से मुक्त कर दे।

कोई मनुष्य न तो सदा दोषयुक्त रहता है न सदा दोषमुक्त। जिस समय मनुष्य अपने को दोषमुक्त करने का प्रयास करता है, उसे साधक कहते हैं। साधक है ही वह जिसका कुछ लक्ष्य (साध्य) होता है, जिसने लक्ष्य पर पहुँचने का अपना मार्ग (साधना) निश्चित किया है और जो उस साधना में आगे बढ़ने का प्रयास करता है।

नमस्कार सप्तक में जिन भावनाओं के साथ अपने आराध्यदेव को साधक नमस्कार करता है उन से वह अपने आप को उन मूल दोषों से मुक्त कर लेता है और अपने को दास्य भाव, शरणागति और प्रीति से भर लेता है। दास्य भाव से अहंकार का नाश होता है। शरण गति की महिमा से साधक को श्रीराम-कृपा का अवलम्ब रहता है और कामनाएं समुद्र की तरंगों की भांति मन में ही विलीन रहती हैं। राम प्रीति में साधक की समस्त बिखरी हुई आसक्ति लय हो जाती है।

नमस्कार सप्तक में श्रीराम को साधक का सीधा संबोधन है। सर्व प्रथम 'परमात्मदेव' श्रीराम को जो सर्वथा कल्याणकारी हैं। साधक का "मैं" नत शिर हो कर नमस्कार करता है।

साधक पुनः 'जग के नाथ' श्रीराम को नमस्कार करता है। श्रीराम इस समस्त विश्व के (जो कुछ दिखाई देता है और जो कुछ नहीं दिखाई देता है सब के) एकमात्र स्वामी हैं। समस्त सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार श्रीराम के मंगलमय विधान से होता है जो न्याय और दया पर आधारित है। मनुष्य भ्रमवश सोचता और कहता है कि मैंने यह किया है, मैं यह कर सकता हूँ, मैं यह करूंगा। उसका अहंकार मिथ्या है। वह जगन्नाथ ही कर्ता, भर्ता, हर्ता हैं। अतः जग के नाथ की भावना से श्रीराम को नमस्कार करने से साधक का सब अहंकार नष्ट हो जाता है और वह दास्य भाव (भक्ति) को ग्रहण करता है। पुन साष्टांग नमस्कार करता है।

अब 'शक्तिनिधान' श्रीराम को साधक नमस्कार करता है। उनकी चरण शरण का ध्यान पापहरण और मंगलकरण है। श्रीराम समस्त शक्तियों के उद्गम और केन्द्र हैं उन्हीं का आश्रय सार्थक है।

शरणागत होते ही वह कामनाओं से मुक्त होता है। जो वस्तु या परिस्थिति शरणागत के लिए आवश्यक है श्रीराम उसे बिना मांगे दे देते हैं और जो अनावश्यक है या जिसके योग्य वह नहीं है. वह मांगने पर भी नहीं मिलती। शरणागत के लिए क्या आवश्यक है और क्या नहीं यह श्रीराम ही जानते हैं। जब ऐसा है तो साधक व्यर्थ हो कामनाओं की गठरी का भारी बोझ अपने ऊपर क्यों रखे रहे? ऐसा नहीं है कि कामना करने से वह पूरी हो ही जाय। कामना न करने पर भी जो आवश्यक और योग्य है वह उनको कृपा से मिल ही जाता है। **'योगक्षेम वहाम्यहम्'** उन शरणागतवत्सल का वरदान है। अतः साधक की सब कामनाएं राम इच्छा में विलीन हो जाती हैं और वह अपने समस्त कर्म,

कर्मफल और संकल्पों का समर्पण कर देता है और सर्वथा निश्चिन्त रहता है। अहंकार और कामना रहित साधक में प्रीति जाग्रत होती है और वह अपने स्वामी (हजूर) को **'मेरे राम**' पुकारकर नमस्कार करता है। प्रियतम राम में जैसे-जैसे प्रीति दृढ़ होती है वैसे-वैसे साधक की चारों ओर बिखरी हुई आसक्ति, ममता क्षीण होती जाती है। जब साधक अपने मन को राम प्रीति (मैं तेरा, मेरा तू) की मधुरतम भावना से भरपूर करता है तब उसकी समस्त आसक्ति एक होकर राम प्रीति में लय हो जाती है।

पुनः **'जगदीश'** श्रीराम को साधक नमस्कार करता है जो ज्योतिर्मय और तेजोमय है, परमपुरुष और परम पावन है। साधक समर्पण भाव से परिपूर्ण हो जाता है। इस प्रकार अहंकार, कामना और आसक्ति (तीनों मूल दोषों से मुक्त साधक शुद्ध बुद्ध हो कर अब **'सत्य, ज्ञान, आनन्द के परम धाम**' (सच्चिदानंद) श्रीराम को पुलकित होकर नमस्कार करता है। पुलकित हो जाना साधना की पूर्ण तैयारी का द्योतक है। इस प्रकार साधक साधना का सुपात्र बन जाता है।

यह अनुभव-सिद्ध है कि :-

(१) जब साधक के मन में शांति होती है तब उपासना में रस और आनन्द मिलता है, कर्तव्य परायणता में कुशलता और निपुणता होती है, लोक-व्यवहार में उदारता और प्रसन्नता होती है। इसके विपरीत जब साधक का मन अशांत होता है तब न तो उपासना में आनन्द या रस आता है, न कर्तव्य परायणता में निपुणता या कुशलता होती है और न लोक व्यवहार में प्रसन्नता या उदारता।

(२) अशांति तब ही होती है जब मन में असन्तोष अथवा चिंता अथवा भय हो। असन्तोष का मूल है अहंकार, चिता का मूल है कामना और भय का मूल है आसक्ति।

(३) जिस समय और जिस मात्रा में अहंकार, कामना और आसक्ति मन में रहती है उस समय और उस मात्रा में असंतोष, चिता और भय रहता है।

(४) अहंकार से रहित मन में असन्तोष नहीं, कामना से रहित मन में चिता नहीं और आसक्ति से रहित मन में भय नहीं होता। असन्तोष, चिन्ता और भय से रहित साधक का मन शांत होता है।

अतः दिन प्रतिदिन **'नमस्कार सप्तक'** की गूढ़ भावनाओं के साथ नमस्कार करने से दिन प्रतिदिन अहंकार, कामनाएं और आसक्ति क्षीण होते जाते हैं, जिससे साधक असन्तोष, चिता और भय से रहित होता है, अर्थात् शान्ति की पुष्टि होती जाती है। फलतः दिन-प्रतिदिन उपासना में अधिक रस और आनन्द मिलता है, कर्तव्यपरायणता में अधिक कुशलता और निपुणता आती है, लोक व्यवहार में उदारता और प्रसन्नता बढ़ती है।

धीरे-धीरे यह अवस्था प्राप्त हो जाती है जब साधक के कार्यक्रम में केवल 'राम नाम और 'राम काज' ही होते हैं। साधक दिन रात सुमिरन करता है। वर्तमान परिस्थिति का आदर करते हुए अपना वर्तमान कर्तव्य (राम काज) निष्काम होकर बड़ी लगन, उत्साह और प्रसन्न चित्त से करना है। अपने को श्रीराम का यन्त्र मात्र समझता है। अपना निजी कुछ भी नहीं मानता। श्रीराम के नाते व्यक्तियों को मर्यादानुसार सेवा करता है और वस्तुओं का ट्रस्टीवत् सदुपयोग। उसी अवस्था में साधक का जीवन सफल सार्थक और सरस है। ऐसा जीवन साधनामय जीवन है। ऐसा साधक कृतकृत्य है।

‘नमस्कार सप्तक’ में गूढ़ भावनाएं हैं उनका गम्भीरतापूर्वक मनन ऐसा पारसमणि है कि उसका जितना सेवन होता है (नमस्कार करते समय इन भावनाओं का जितना मनन होता है) साधक की साधना के लिये तैयारी उतनी स्वर्णमयी होती जाती है।

नमस्कार सप्तक -१

करता हूँ मैं वन्दना, नत शिर बारम्बार ।
तुझे देव परमात्मन्, मंगल शिव शुभकार ॥ १ ॥

वन्दना-	स्तुति
नत शिर-	सिर झुका कर
परमात्मन् देव-	श्रीराम, ईश्वर, परमेश्वर
मंगल-	अभीष्ट की सिद्धि
शिव-	कल्याणकारी, मोक्ष दाता
शुभकार-	कल्याण करने वाला

अर्थ

हे परमात्मा श्रीराम! आप अभीष्ट की सिद्धि के दाता, मोक्ष के दाता और कल्याणकारी हैं। मैं सिर झुकाकर बार-बार आपको स्तुति करता हूँ।

व्याख्या

श्रीराम के परम कल्याणकारी स्वरूप को नमस्कार। आपत्तियों को हरने वाले तथा सब प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करने वाले लोकाभिराम भगवान श्रीराम को बारम्बार नमस्कार करता हूँ।[१]

मैं न देह हैं, न इन्द्रिय, न मन, न बुद्धि, न प्राण, न विषय। मैं इन सबका साक्षी है। शासक हूँ। मैं राम का अंश हूँ। अतः स्वरूप से अविनाशी, अमल सहज सुखराशी हूँ।[२] परन्तु अविद्या माया ने 'मैं मेरा' (अहंकार और आसक्ति) का फंदा डालकर इसे उलझा दिया। यही सब अनर्थों की जड़ है। सूक्ष्म शरीर से हो जीव बद्ध होता है। देह गेह आदि को अपना मानने लगना, अपने को देह समझ लेना, अपना स्वरूप भूल जाना इत्यादि माया के वश होना हैं। जगत के पदार्थों में जो 'मैं मेरा'

भाव है सो जीव की सृष्टि है। अहंकृति और आसक्ति जीव की वासना है। अहंकृति अथवा आसक्ति से कामना की उत्पत्ति होती है और इन तीनों से ही अन्य सभी वासनाओं और दोषों की उत्पत्ति होती है। इन तीनों में उलझकर ही शक्ति, सामर्थ्य, योग्यता, समय का दुरुपयोग अथवा अनादर होता है।

उपयुक्त तीन मूल दोष जैसे-जैसे क्षीण होते जायेंगे वैसे-वैसे अन्य दोष स्वतः क्षीण होते जायेंगे, उसी अनुपात में अशान्ति व चिन्ताएँ मिट कर शांति स्थापित और सुरक्षित होगी। कर्म, कर्म-फल और संकल्प का समर्पण कर देने और आत्म-निवेदन कर देने से साधक श्रीराम को अत्यन्त प्रिय हो जाता है।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"सुन्दर बात चिन्तन करने योग्य यह है कि तुम समझो कि तुम आत्मा हो-शरीर नहीं "नित्य मनन करो तुम आत्मा हो। इन्द्रिय-निग्रह करो। राम काज में अपना जीवन समर्पण करो।"

मानव जीवन की सार्थकता

मनुष्य जन्म पा कर परम ध्येय है राम को रिझाना, उनकी कृपा और उनका प्रेम प्राप्त करना। 'मेरा परम कर्तव्य है राम काज में जुटे रहना। मेरा परम पुरुषार्थ है बन्धन में बांधने वाली कामना, आसक्ति और अहंकृति को सतत क्षीण करते रहना। यह भक्ति मार्ग में व्यावहारिक और सरल है। भक्ति का मार्ग वास्तव में सुधार का मार्ग है।

सुख-भोग जीवन नहीं है, दुःख से घबराना जीवन नहीं है। जीवन सुख-दुःख से अतीत है। सुख के प्रलोभन की दासता और दुःख के भय से मुक्ति, यह जीवन है।

वासनाओं से मुक्ति

विद्या माया जब जीव में दिव्य गुण उत्पन्न करती है तब राम में मन लगता है, तब निरन्तर राम का भजन करता है, निरन्तर राम का संयोग चाहता है। जितना चिंतन होगा उतना अन्तःकरण शुद्ध होकर कर्म बन्धन छूटता जाएगा, वासना पवित्र होती जाएगी। जैसे-जैसे राम की सर्वज्ञता, समर्थता और विधान में तथा राम-कृपा में विश्वास दृढ़ होता जाएगा वैसे-वैसे कामना, आसक्ति और अहंकृति का विस्तार तथा तीव्रता कम होती जाएगी।

नत शिर

(१) देवता, माता, पिता, गुरु के सम्मुख होने के सिर झुकता है।
(२) किसी की महानता के सम्मुख सिर झुकता है।
(३) ऐसे के सम्मुख होने से सिर झुकता है जिसका उपकार हो।
(४) अपने दोषों की लज्जा के कारण सिर झुकता है।

यहां चारों बातें हैं।

(१) आराध्यदेव अधिष्ठान के सम्मुख होकर साधक नमस्कार कर रहा है, अतः नत शिर हूँ।
(२) राम और राम के गुण स्वभाव महानतम है, वह मंगल शिव शुभकार (अर्थात् कल्याण-कारी, कल्याणकारी, कल्याणकारी) हैं, अतः नत शिर हूँ।
(३) राम ने अहेतुकी कृपा से मनुष्य शरीर दिया यह उपकार तो है ही, वह प्रतिक्षण उपकार करते रहते हैं "कोटिन्ह मुख कहि जात न प्रभु के एक-एक उपकार," अतः नत शिर हूँ।
(४) मुख से अनेकानेक अपराध हुए हैं अतः नत शिर हूँ।

सिर नवाने से अहंकार का नाश होता है। श्रीराम का भक्त जो कुछ कार्य करता है उसमें श्रीराम-कृपा को ही मुख्य मानता और जानता है। वह कभी अपने पुरुषार्थ का अभिमान मन में नहीं आने देता।

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"उपासना में बैठते समय प्रणाम करना चाहिये। मंत्र में देवता को साक्षात मान कर सम्मान करो जिस प्रकार हम परस्पर बात करते हैं इसी प्रकार भगवान के आह्वान करने के पश्चात् उनकी उपस्थिति अनुभव करनी चाहिये।"

संदर्भ नोट

१) 'आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।
लोकाभिरामं धोराम भूयो भूयो नमाम्यहम्॥

२) ईश्वर अंस जीव अविनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥
सो माया बत भयउ गुसाई। बन्ध्यो कीट मरकट की नाई॥

नमस्कार सप्तक -२

अंजलि पर मस्तक किए, विनय भक्ति के साथ।
नमस्कार मेरा तुझे, होवे जग के नाथ ॥ २ ॥

अंजलि-	दोनों हथेलियों को मिला कर बनाया हुआ संपुट या गड्ढा
मस्तक-	सिर
विनय-	नम्रता, शिक्षा, प्रार्थना, विनती
भक्ति-	श्रद्धा, भक्तिसूत्र के अनुसार ईश्वर में अत्यन्त अनुराग का होना। इसके नौ प्रकार ये हैं :- श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन।
जग-	विश्व
नाथ-	स्वामी

अर्थ

हे विश्व के स्वामी श्रीराम! अंजलि पर अपना मस्तक किए, भक्ति और विनय के साथ मैं तुझे नमस्कार करता हूं।

व्याख्या

श्रीराम के जगन्नाथ स्वरूप को नमस्कार है।

जग के नाथ

चराचर विश्व के एकमात्र स्वामी भगवान श्रीराम ही हैं। उनके मंगलमय विधान से सब कुछ हो रहा है। वह ही उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं। कर्ता, भर्त्ता, हर्त्ता, हैं। परन्तु अविद्या माया हमारे भीतर 'मैं' की भावना उत्पन्न करती है।

अहंकार

हम अपने आप को कर्ता समझने लगते हैं, यह अहंकार है। मैं अमुक हूँ, मैंने अमुक किया है अथवा कर सकता हूँ अथवा करूंगा, इस प्रकार की भावनाएं अहंकृति से उत्पन्न होती हैं।

अहंकार का प्रभाव

अहंकार से किये हुए कार्य में यदि सफलता हो तो अभिमान होता है, नहीं हो तो दीनता का भाव अथवा कोरियातापगम्यथा?? होती है। दोनों देशों के समता का अभाव होता है। व्यक्तियों से राग, द्वेष, ईत होती है। कामनाएं उत्पन्न होती हैं। इन दोषों से मन में अशान्ति होती है। चित्त में क्रोध रहना कर्म से चाण्डाल होना है। यह कार का जितना विस्तार और तीव्रता होती है उसी अनुपात में चिंता और अशान्ति रहती है।

अहंकार से मुक्ति का साधन है

यह विश्वास कि राम ही कर्ता है, मैं यन्त्र मात्र है। करने की समस्त बुद्धि और शक्ति राम ही से मिली है। राम काज (कर्तव्य कर्म) करने ने लिये भेजा गया है। अतः यह जानते समझते हुए कि कर्ता राम ही हैं अपना अभिनय पूरी योग्यता लगा कर लगन, उत्साह, प्रसन्नता से, कुशलता से, निपुणता से करे। शुभ कर्म का राम के चरणों में समर्पण करे। जो दोष हो गये हों वह राम के सम्मुख निवेदन करे, "स्वामी! यह अशुभ कर्म मुझ से हुए हैं। आप समर्थ हैं। इच्छा हो तो इन्हें क्षमा करें, इच्छा हो तो इनका मुझे दण्ड दें"।

अहंकार के बिना भी कर्म होंगे

कर्म करने की शक्ति तो राम से ही मिली है और कर्म किये बिना रह ही नहीं सकते। अहंकार के अभाव का तात्पर्य निष्क्रियता नहीं है। निरहंकारता का अर्थ

है राम को कर्ता और अपने को यन्त्र समझना, जिसके फलस्वरूप राम काज (वर्तमान कर्तव्य) करने की दिव्य प्रेरणा मिलेगी [१]।

भक्ति

भक्ति है 'राम' और 'मैं' को जोड़ने वाली कड़ी। भक्ति है 'राम' से 'मैं' के सम्बन्ध की स्मृति, राम को अपने इष्ट रूप में देखना, तीनों कालों को उसके चिंतन से भर देता, राम को रिझाना, राम को चाहना। भक्ति है जीव के लिये परम रस. परम कल्याण, परम स्वार्थ परम परमार्थ। भक्ति रस है, आसव है। रसायन है. मधु है, अमृत है।

भक्त

भक्त चार प्रकार के होते हैं :- आर्त, अर्थार्थी, जिज्ञासु और ज्ञानी। ज्ञानी भक्त वह है जो राम को मानते हुए, जगत को जानते हुए, अपने को पहिचानते हुए, राम की शरण में रहता है। राम से आत्मीयता, अनुराग रखता है और राम के प्रति दास्य भाव रखते हुए अपना कर्तव्य (राम काज समझ कर) करता है एवं प्रत्येक कर्म, कर्मफल और संकल्प राम को समर्पित कर देता है। सब साधनों का फल श्रीराम भक्ति है।

नवधा भक्ति (श्री राम चरित मानस)

१. संतों की संगति।
२. रामकथा के प्रसंग में प्रेम।
३. अभिमान रहित होकर श्री गुरु महाराज की चरण सेवा।
४. श्रीराम के गुण का गान करना।
५. राम मन्त्र का जप और उसमें दृढ़ विश्वास।
६. बहुत कर्मों से वैराग्य और निरन्तर सज्जनों के धर्म में तत्पर रहना।

७. जगत भर को राममय देखना और संतों को राम से अधिक समझना।
८. जो कुछ प्राप्त हो उसमें सन्तोष करना और स्वप्न में भी पराये दोष को न देखना।
९. सरल (छल-कपट रहित) स्वभाव।

<u>नवधा भक्ति (श्रीमद्‌भागवत)</u>

१. श्रवणम् - श्रीराम के रूप, स्वभाव, गुण, महिमा, लीला को सुनना (उसमें चित्त से आसक्ति होनी चाहिये)।
२. कीर्तनम् - नाम, स्वभाव, गुण, लोला आदि का गान।
३. स्मरणम् - राम से किसी प्रकार भी मन द्वारा सम्बन्ध।
४. पादसेवनम् - चरणों की पूजा, सेवा अथवा चरणों का ध्यान चिन्तन।
५. अर्चनम् - मन्त्रों द्वारा पूजन।
६. वन्दनम् – नमन, दण्डवत् प्रणाम।
७. दास्यम् - हृदय से अपने को राम का दास स्वीकार करना।
८. सख्यम् - जब साधक दास्य भाव से सेवा में लगता है तब परम उदार श्रीराम उसे अपना सखा बना लेते हैं। दास अपनी ओर से भक्ति करता है, सख्य राम की ओर से आता है अर्थात् जब उपासना से वासनाएं दूर होती हैं. चित्त निर्मल होता है तब राम से आत्मीयता और सामीप्य का भाव जागृत होता है तब यह अनुभूति होने लगती है कि राम मेरे हैं।
९. आत्मनिवेदनम् - जड़ पदार्थों का समर्पण (जड़ आत्मनिवेदन)। यह भाव कि मेरा कुछ नहीं सब कुछ राम का है, ऐसा सम्बन्ध राम से जोड़ना (चंचल आत्मनिवेदन)। जीवभाव को भी त्याग कर अपरोक्षरू

साक्षात्काराढ़ हो जाना (निश्चय आत्म निवेदन)। यह भक्ति की चरम सीमा है।

पहले ६ साधन भक्ति हैं। इनके आचरण से साध्यभक्ति और प्रेमारूपी भक्ति हृदय में आती है। दास्यभाव साधन और साध्य दोनों हैं। सख्य और आत्मनिवेदन में भी सेवा भाव रहता है। करणीय केवल दास्य-भाव है।[२]

दास्य भाव

१. राम सबसे महान्, सबसे श्रेष्ठ हैं, विश्व में एकमात्र स्वामी हैं। राम मेरे स्वामी हैं, मैं राम का किंकर हूँ।
२. मेरे प्रत्येक संकल्प और कर्म का उद्देश्य राम की प्रसन्नता, राम की सेवा है। वर्तमान कर्तव्य करना राम की पूजा है।
३. जिस कर्म का राम से अथवा राम काज से सम्बन्ध हो वह राम की पूजा है। अतः सोना-जागना, खाना-पीना, चलना-बैठना, समस्त जीवन पूजामय बनाना है। अनन्य भक्त वही है जिसकी ऐसी बुद्धि कभी नहीं टिकती कि और चराचर जड़ चेतन जगत मेरे स्वामी श्रीराम का रूप है।

दास्य भक्ति के ज्वलंत उदाहरण श्री हनुमान जी हैं। श्रीराम जी देह-बुद्धि से मैं आपका दास हूँ, जीव बुद्धि से आपका अंश हूँ, आत्म बुद्धि से आप और मैं अभिन्न हैं।[३]

विनय

श्रीराम परायणता का प्रधान लक्षण है विनय। जिसमें विनय नहीं वह श्रीराम परायण नहीं है।[४]

प्रणाम

प्रणाम करने से अहंकार का नाश होता है। नत शिर होने में नम्रता का भाव है जो श्रीराम को प्रिय है। नत मस्तक होकर "त्राहि माम्" कहते ही या प्रणाम करते ही श्रीराम रक्षा करते हैं, सुख देते हैं पाप हर लेते हैं। श्रीराम को नमस्कार करना महिमा की खान है जिससे सब प्रकार के मंगलों का प्रादुर्भाव होता है और अमंगलों की जड़ कट जाती है।[५]

अहंकार से मुक्त होकर और दास्य भाव ग्रहण करके, अब साधक दण्डवत् नमस्कार करता है।

संदर्भ नोट

१) 'राम काज लगि तव अवतारा'।
'प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कोसलपुर राजा'॥
'मैं सेवक सचराचर, रूपस्वामि भगवन्त'।
'राम काजु कीन्हे बिनु मोहि कहां विश्राम'।
'अस अभिमान जाइ जनि भोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे।'
'सो सब तव प्रताप रघुराई। नाथ न कछ मोरि प्रभुताई।'

२) 'आनुकूलस्य संकल्पः प्रतिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्यतीनि विश्वासो गोप्तृत्वे वरणं तथा।
आत्मनिक्षेपकार्पण्ये षड्विधा शरणागतिः'

३) 'देहबुद्धया तु दासोऽहं जीवबुद्धया त्वदशकः।
आत्मबुद्धया त्वमेवाहमिति में निश्चिता मतिः
श्रीनाथे जानकीनाथे अभेदः परमात्म न।
तथापि मम सर्वस्वं रामः कमललोचनः॥

४) अहंकार की अगिनि में दहत सकल संसार।
तुलसी बचि संतजन केवल सांति आधार॥
जहां सांति सदगुरु की दई। तहां क्रोध को जरि जरि गई॥

५) 'रामप्रनाम महामहिमा खनि सकल सुमंगल मनिजनी
मंगल मूल प्रनाम जासुजग मूल अमंगल के खने
एक प्रनाम प्रसन्न राम भए दुरित दोष दारिद दले
प्रभु पद प्रेम एनाम कामतरु सद्य विभीषण को फलो'
'सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत।
श्री रघुवीर परायन जेहि नर उपज विनीत॥'

नमस्कार सप्तक -३

दोनों कर को जोड़ कर, मस्तक घुटने टेक ।
तुझको हो प्रणाम मम, शत शत कोटि अनेक ॥ ३ ॥

प्रणाम-	अभिवादन, दण्डवत्, नमस्कार
मम-	मेरा या मेरी
शत शत-	दस हजार सैकड़ों
कोटि-	करोड़ों

अर्थ

दोनों हाथ जोड़कर, अपना मस्तक और अपने घुटने धरती पर लगाकर मैं तुझे करोड़ों बार दण्डवत् नमस्कार करता हूँ।

व्याख्या

उर, शिर, नेत्र, मन, वचन, पैर, भुजा और घुटना, इन आठों अंगों से युक्त प्रणाम को अष्टांग प्रणाम कहते हैं।[१] देह को दन्डाकार पृथ्वी पर डाल कर, चरणों को जोड़े हुए लम्बे फैला कर, हाथों को फैला कर अंजलि बांध कर प्रणाम करने को दण्ड प्रणाम कहते हैं। दोनों चरण, दोनों हाथ, शिर, मन, बुद्धि, अहंकार युक्त प्रणाम को अष्टांग प्रणाम कहते हैं।[२]

श्रीराम के सामने साष्टांग दण्डवत् प्रणाम का विधान यह है कि साधक अपनी दीनता कहता हुआ प्रणाम करे। श्रीराम का उपकार और अपना अपराध समझ कर उसको क्षमा के लिये बार-बार प्रणाम करना चाहिए।

प्रणाम करने से आशीर्वाद मिलता है जिससे कार्य में सफलता मिलती है। स्तुति के पश्चात् प्रणाम करना चाहिये। कृतज्ञता व्यक्त करने के लिये बार-बार प्रणाम

करना चाहिये। श्रेष्ठ और शिष्ट लोग बड़ों को नमस्कार करके बोला करते हैं। जिज्ञासु को मस्तक नवाना चाहिये।

श्रीराम के चरणों में प्रणाम करने से कुछ भी दुर्लभ नहीं होता।

श्रीराम के प्रति नमस्कार कल्पतरु के समान मनोरथ सिद्ध करने वाला है। नमस्कार करके जो कार्य आरम्भ किया जाता है वह दुर्गम भी हो तो सुगम हो जाता है। नमस्कार करने से श्रीराम के गुण प्रताप का और उनके अवलम्ब का स्मरण हो जाता है जिससे निर्भयता आ जाती है।

'बार-बार'

बार-बार सिर नवाना, चरण पकड़ना, प्रणाम नमस्कार करना परम कृतज्ञता और प्रीति का सूचक है।[३] दण्डवत नमस्कार करने से स्वभावतः साधक का श्रीराम की चरण शरण में ध्यान होता है।

संदर्भ नोट

१) उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा
पदभ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टांग उच्यते॥

२) निधाय दण्डवददेहं प्रसार्य चरणौ करौ।
बद्ध्वा मुकुलवत्पाणी प्रणामो दण्ड संज्ञितः॥
पादौ शिरस्तथा हस्तौ निकुंच्य मुकुलाकृती
मनोबुद्धयभिमानेन प्रणामोऽष्टांगसंज्ञितः॥

३) 'तब मुनि हृदय धीर धरि गहि पद बारहिं बार'
'प्रेम मगन मुख बचन न आवा। पुनि-पुनि पद सरोज सिर नावा॥'
'देखि राम छवि अति अनुरागी। प्रेम विवस पुनि-पुनि पग लागी॥'
'बार-बार प्रभु पद सिरनाई। प्रेम सहित सब कथा सुनाई॥

'पुनि-पुनि मिलति परति गहि चरना। परम प्रेम कुछ जाइ न बरना॥'
'पद अंबुज गहि बारहिं बारा। हृदय समात न प्रेम अपारा॥'

नमस्कार सप्तक-४

पाप-हरण मंगल-करण, चरण शरण का ध्यान ।
धार करूँ प्रणाम मैं, तुझको शक्ति-निधान ॥ ४ ॥

चरण शरण-	भक्तों को शरण देने वाले चरण
ध्यान-	मानसिक प्रत्यक्ष, चिंतन, मनन। यह योग के आठ अंगों में से सातवां अंग, और धारणा तथा समाधि के बीच की अवस्था है।
धार-	धारण करके
शक्ति निधान-	शक्ति का कोश

अर्थ

हे शक्तिनिधान श्रीराम! भक्तों को शरण देने वाले पापनाशक और कल्याणकारी चरण कमल का ध्यान करके, मैं तुझको प्रणाम करता है।

व्याख्या

श्रीराम के शक्ति निधान स्वरूप को नमस्कार है।

चरण

श्रीराम के चरण कमलों का ध्यान करने से अर्थात् हृदय में धारण करने से कठिन कार्य सुगम हो जाता है, कौतुक सा हो जाता है, उसमें कुछ भी श्रम नहीं पड़ता।[१] श्रीराम-चरण हृदय में धारण करने से भवसागर पार हो जाता है। मन, वचन, कर्म तीनों का निरोध करने को निदण्ड सन्यास कहते हैं। चरणों पर ध्यान जमाये रहना त्रिदण्ड सन्यास है। दोनों चरणों के अंगूठों के मध्य नेत्रों को स्थिर करना योगांग सिद्ध उन्मनी मुद्रा है। श्रीराम के चरण कमलों का एक बार भी स्मरण करने से मन में निर्मलता आ जाती है और कलियुग के सारे पाप भाग जाते है।[२]

श्रीराम के चरण पवित्रता की सीमा है। श्रीराम के समान शील और स्नेह को निबाहने वाला कोई नहीं है।[३]

शरण

जो क्रूर, कुटिल, दुष्ट, कुबुद्धि, कलंकी, नीच, शील-रहित, निरीश्वरवादी (नास्तिक और निःशंक) हैं उन्हें भी आपने शरण में सम्मुख आया सुन कर एक बार प्रणाम करने पर अपना लिया। जो भयभीत होकर श्रीराम की शरण जाता है उसे श्रीराम अपने प्राणों की तरह रखते हैं।[४] और जिसे अपना लिया वह विश्व का भूषण हो गया।

शरणागति

शरणागति के अंग हैं :-

१. राम के अनुकूल (अर्थात् राम प्रेरणा, राम आज्ञा के अनुसार) रहने का संकल्प।
२. जो बातें भक्ति के प्रतिकूल हों उनका त्याग।
३. राम मेरी रक्षा करेंगे, यह दृढ़ विश्वास।
४. राम को ही अपना रक्षक स्वीकार करना।
५. अपने को राम के अर्पित कर देना।
६. अपने में दैन्य भाव (५)

शरणागति का मुख्य लक्षण है - पूर्ण निर्भरता।

१. राम जो कुछ करेंगे उसी में मेरा हित है।
२. राम जैसा रखेंगे मुझे वैसा ही रहना है।
३. राम प्रेरणा, राम आज्ञा के अनुसार अपना विचार, अपनी बुद्धि, अपनी रहनी बना लेना है।

४. राम शरण्य, करुणा वरुणालय हैं। सच्चा ज्ञान, सच्चा सुख, सच्चा हित राम में है। कुछ मांगना ही है तो सर्वसमर्थ परम उदार श्रीराम ही से मांगना है।[६]

शरणागति का प्रभाव

१. राम की शरण लेकर सात्विक कर्मों द्वारा परमपद पाने के यत्न से अन्तःकरण निर्मल हो जाता है।
२. कर्म करते समय यह ध्यान रहने से कि मैं राम की शरण हूँ, कर्म स्वभावतः निर्दोष हो जाता है।
३. कर्म को राम के अर्पण करने से साधक निर्लेप हो जाता है।
४. हीन कामना, तृष्णा, वासना का अन्त हो जाता है। शुभ और उन्नत कामनाएं वह परम उदार पूर्ण कर देते हैं।[७]

श्रीराम के चरणों में प्रेम होना ही संसार में समस्त सुन्दर मंगलों का मूल है।[८] मेरा मन भूल कर भी श्रीराम के चरण कमल को न छोड़ें।[९]

शक्ति निधान को प्रणाम

मैं श्रीराम के चरणों का मन से स्मरण करता हूँ, श्रीराम के चरणों का वाणी से कीर्तन करता हूँ, श्रीराम के चरणों को शिर झुका कर प्रणाम करता हूँ और श्रीराम के चरणों की शरण लेता हूँ।[१०]

राम से बड़ा और कोई भी आश्रय नहीं है। मैं उन श्रीराम का दास हूँ। मेरा चित्त सदा राम में ही लीन रहे। हे श्रीराम! आप मेरा उद्धार कीजिये।[११]

हे शरणागत की रक्षा करने वाले श्रीराम! आपकी लीला अद्भुत है जिसका भेद कोई नहीं जानता। आपको नमस्कार।

हे कृपालु, दीनदयालु, हे अविनाशी, सर्वव्यापी, सबके हृदय में निवास करने वाले, परम आनन्द, स्वामी, अज्ञेय, इन्द्रियों से परे, पवित्र चरित्र, माया से रहित! आपको नमस्कार। आप ही ब्रह्मा विष्णु शिव रूप होकर सब की रचना पालन और संहार करते हो, आपको नमस्कार। मैं न भक्ति जानता है न पूजा। मन वचन कर्म से चतुराई छोड़कर आपकी शरण आया है। सरस्वती, वेद, शेष जी और ऋषि गण कोई भी आपको नहीं जानते। आप तो दीन प्रिय हैं। मुझ पर दया कीजिये। मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

शरणागत होते ही साधक की सब कामनाएँ श्रीराम की इच्छा में विलीन हो जाती हैं। यह नमस्कार बड़ा प्रभावशाली है।

कामना

राग द्वेष से प्रेरित मन किसी को प्राप्त करना चाहता है, किसी को छोड़ना चाहता है। ऐसी चाह सूक्ष्म रूप से मन में रहती है तब **वासना** कहलाती है और जब प्रकट रूप धारण करती है तब **इच्छा।** जब इच्छा फैलने और लोभ में परिणित होने लगती है तो उसे **तृष्णा** कहते हैं। इनसे **संकल्प** उदय होते हैं। संकल्प के कार्य को "**कामना**" कहते हैं। ऐसी कोई कामना नहीं जिसके पीछे अहंकार या आसक्ति न हो।

कामना का प्रभाव-

१. कामना होते ही चिन्ता उत्पन्न होती है। चिन्ता से अशान्ति होती है। कामना के अभाव में शान्ति है। कामना पूर्ति में शान्ति इसीलिये मिलती है कि कामना का अभाव हो जाता है। अतः यदि कामना न उठे अर्थात् संकल्प केवल कर्तव्य का उद्देश्य या योजना का रूप धारण करने तक सीमित रह जाय (और आगे बढ़ कर कामना का रूप धारण न करे) तो कामना के अभाव से शांति सुरक्षित रहेगी।

२. प्रत्येक कामना अपूर्ति पर क्रोध या द्वेष आदि उत्पन्न करती है और पूर्ति होने पर अन्य कामना (प्रायः अपनी से बड़ी) उत्पन्न करती है और राग, लोभ, सुख का प्रलोभन आदि दोष उत्पन्न कर जाती है। फिर नई कामना की वही कहानी है जो उसकी जननी की। इस प्रकार चक्र चलता है।

३. जो व्यक्ति कामना पूर्ति में सहायक हो उससे राग, और जो बाधा बने उससे द्वेष व इसी प्रकार और भी दोषों की उत्पत्ति होती है। सन्तोष और समता का अभाव हो जाता है। अतः मन अशान्त और चिन्तित रहता है। कामना पूर्ति में सुख समझ कर हम उनके पीछे दौड़ते हैं परन्तु तृप्ति नहीं होती, मृगतृष्णा की भांति।(१२)

४. कामना दर दर भटकाती है, भिखारी बनाती है। हम व्यक्तियों से अपेक्षा करते रहते हैं। अपेक्षा ही निराशा, क्रोध और द्वेष की जननी है।

५. मन कामनाओं की गठरी है। कामनाओं की संख्या और तीव्रता के अनुपात में मन चिन्तित और अशांत रहता है।(१[३])

कामना से मुक्ति का साधन

यह विश्वास होना चाहिए कि राम परम दयालु, परम उदार, सर्व समर्थ है। जो वर्तमान साधना के लिए आवश्यक होगा बह बिना मांगे, बिना चाहे मिलेगा और जो अनावश्यक, होगा वह चाहने अथवा मांगने पर भी नहीं मिलेगा क्योंकि श्रीराम ही जानते हैं कि हित किस बात में है, कल्याण किस में है। साधक श्रीराम के सामीप्य, सर्वज्ञता, समर्थता और विधान में तथा श्रीराम-कृपा में अपना विश्वास दृढ़ करता रहे और समस्त संकल्प समर्पण करता रहे। इस प्रकार कामनाओं और उनकी तीव्रता को कम करता चले। संतोष सुख का दूसरा नाम है।

संकल्प दो में से एक रूप धारण करता है – (क) या तो उद्देश्य मात्र होकर कर्म की प्रेरणा देता हैं और उस उद्देश्य के लिए बुद्धि योजना बनाती है जिसके अनुसार कर्म होते हैं, अथवा (ख) संकल्प उद्देश्य मात्र न रह कर यह कामना उत्पन्न करता है कि अमुक वस्तु या परिस्थिति मिल ही जाय। प्रत्येक कर्म के लिये योजना बनाना आवश्यक है परन्तु कामना तो अनावश्यक वासना है। कामनाएं क्षीण होने से निष्क्रियता नहीं होगी अपितु वर्तमान कर्तव्य में कुशलता और निपुणता आएगी।

जो कुछ मिल जाय उसी में जिसका मन सन्तुष्ट और सुखी रहता है और जिसके हृदय में श्रीराम के चरणों में अनुराग भरा रहता है, वह धन्य है, कृतकृत्य है। वह वन में रहें, चाहे घर में।[(१४)]

संतोष

दीनता और अभिमान के अभाव का नाम संतोष है।

१. जब अप्राप्त के अभाव से मन में दीनता का विकार उत्पन्न हो तब साधक ऐसे लाखों करोड़ों व्यक्तियों की ओर देखे जिनको उतना भी प्राप्त नहीं और अपनी योग्यता बढ़ाने का प्रयास करे।
२. जब प्राप्त के अभिमान की मन में गंदगी उत्पन्न हो तब साधक ऐसे अनेक व्यक्तियों की ओर देखे जिन्होंने त्याग, तप और सेवा के महान् कार्य किये हैं।

त्याग

किसी वस्तु अथवा परिस्थिति को अपने पास रखने अथवा प्राप्त करने का सामर्थ्य होते हुए भी उसको और उसके संकल्प को इसलिये छोड़ देना अथवा प्राप्त न

करना कि उसको रखने अथवा प्राप्त करने में विवेक का विरोध है या वह अनावश्यक है।

तप

किसी कर्म को करने को योग्यता और सामर्थ्य होते हुए भी उसको इसलिए नहीं करना कि उसको करने में विवेक का विरोध है अथवा वह अनावश्यक है।

सन्यासी

न तो किसी विशेष वेषभूषा धारण करने से कोई सन्यासी होता है और न घर-बार, काम-काज छोड़कर जंगल या पर्वत में रहने से। सन्यासी वास्तव में वह है जिसे किसी से द्वेष नहीं, जो किसी व्यक्ति से आकांक्षा नहीं करना, द्वन्द्वों से रहित है, वह सुखपूर्वक संसार बन्धन से मुक्त है। (गीता ५/३)

भक्त का स्वभाव

श्रीराम अनुरागी में कामना नहीं होती। कामना हो तो रामानुरागी नहीं है। जिसका श्रीराम चरण से सम्बन्ध है वही बड़भागी है। [१५] नर देह धारण करने का यही फल है कि सब वासनाओं को छोड़कर श्रीराम का सुमिरन किया जाय। [१६] गुणवान तथा बड़भागी वही है जो श्रीराम के चरणों का प्रेमी हो। [१७] जो सर्वथा अहंकार, ममता और मान रहित होता है वह श्रीराम को प्रिय होता है। [१८] श्रीराम भक्तों के गुणों को ग्रहण करने वाले, दोषों का नाश करने वाले और दया के धाम हैं। [१९]

अहंकार और कामना दोनों से मुक्त होकर अब शरणागत साधक में प्रीति (भक्ति) भाव जाग्रत होता है जिससे वह अपने मन को भरपूर कर लेता है।

संदर्भ नोट

१) राम चरन पंकज उर धरहू। कौतुक एक भालु कपि करहू॥

२) जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं।
जे सकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलि मल भाजहीं॥

३) को रघुबीर सरिस संसारा। सील सनेहु निबाहनिहारा॥

४) जो सभीत आवा सरनाई। रखिहउँ ताहि प्रान की नाई॥

५) आनुकूलस्य संकल्पः प्रतिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्ववरणं तथा।
आत्मनिक्षेप कार्पण्ये षड्विधा शरणागतिः

६) श्रवण सुजसु सुनि आयउ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि-त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुवीर॥
एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान॥
जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें॥
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा॥
ता पर मैं रघुबीर दोहाई। जानउँ नहिं कछु भजन उपाई॥
सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें॥
मो सम दीन न दीन हित, तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघुबंस मनि, हरहु बिषम भव भीर॥

७) राम सदा सेवक रुचि राखी। बेद पुरान साधु सुर साखी॥

८) सकल सुमंगल मूल जग, रघुवर चरन सनेहु।

९) बार बार मागउँ कर जोरें। मनु परिहरै चरन जनि भोरें॥

१०) श्री रामचन्द्र चरणौ मनसा स्मरामि।
श्री रामचन्द्र चरणौ वचसा गुणामि।

श्री रामचन्द्र चरणौ शिरसा नमामि।

श्री रामचन्द्र चरणौ शरणं प्रपद्य॥

११) रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोंऽस्म्यहं।

रामे चित्तलयः सदा भवतु में भो राम मामुद्धरः।

१२) 'हजारों हसरतें ऐसी कि हर सहरत पे दम निकले।

बहुत निकले मेरे अरमान दिल के फिर भी कम निकले।

१३) 'मुझे बेचैन रखती हैं मेरे दिल की तमन्नाए।

मेरे अरमान दुश्मन बनके मेरे दिल में रहते हैं। '

१४) 'अब कछु नाथ न चाहिए मोरे। दीनदयाल अनुग्रह तोरे॥

१५) 'पूरन काम राम अनुरागी। तुम्ह सम तात न कोई बड़ भागी।

१६) 'देह घरे कर यह फलु भाई। भजिए राम सब काम बिहाई॥

१७) 'सोइ गुनग्य सोई बड़भागी। जो रघुवीर चरन अनुरागी॥

१८) रामहि केवल प्रमु पिआरा। जानि लेउ नो जाननिहारा॥

अतिसय प्रीति देखि रघुवीरा। प्रगटे हृदय हरन भवभीरा॥

१९) 'तुम्ह परिपूरन काम जान सिरोमनि भाव प्रिय।

जन गुन गाहक राम दोष दलन करुनायतन॥

नमस्कार सप्तक -५

भक्ति भाव शुभ भावना, मन में भरपूर ।
श्रद्धा से तुझ को नमूँ, मेरे राम हुजूर ॥ ५ ॥

भाव-	भावना, विश्वास
शुभ-	उत्तम, कल्याणकारी, मंगलप्रद
भावना-	ध्यान
श्रद्धा-	बड़ों के प्रति मन में होने वाला आदर और स्नेह भाव, भक्ति, आस्था।
हुजूर-	किसी बड़े का सामीप्य, समक्षता, प्रभु, स्वामी। बहुत बड़े लोगों के संबोधन का शब्द।

अर्थ

हे मेरे स्वामी श्रीराम! मैं अपने मन को भक्ति, विश्वास और कल्याणकारी भावना से भरपूर करके श्रद्धा सहित तुझे नमस्कार करता हूँ।

व्याख्या

"हुजूर" दास्यभाव का सम्बोधन है। "मेरे राम" आत्मीयता या प्रीति का सम्बोधन है।

प्रीति भाव

अनुराग सर्वश्रेष्ठ है, भक्ति की पराकाष्ठा है। जो श्रीराम का ही प्रेमी है, श्रीराम ही जिसकी गति हैं और श्रीराम के ही चरणों में जिसको प्रीति है उसी को विधाता ने जन्म लेने का यथार्थ फल दिया है।[१]

राम से ही मेरा नित्य संबंध है। राम ही मेरा अपना है। "मैं राम का हैं, मेरा राम है।" यह ममत्व इतना अधिक एवं प्रगाढ़ हो कि उससे चित सदा अंकित रहे।

तन है तेरा, मन है तेरा, प्राण हैं तेरे, जीवन तेरा।
सब हैं तेरे, सब है तेरा, मैं हूँ तेरा, तू है मेरा।

राम मेरा अपना है। प्रियतम है। जहां राग होता है वहां बार-बार मन जाता है। राम से राग होगा तो मन वहां टिकेगा।[२]

श्रीराम ही मेरी माता हैं, श्रीराम ही मेरे पिता हैं। श्रीराम ही मेरे स्वामी हैं, श्रीराम ही मेरे सखा हैं। दयालु श्रीराम ही मेरे सर्वस्व हैं।

मैं और किसी को नहीं जानता, नहीं जानता।[३]

हे श्रीराम! जिस-जिस योनि में कर्मवश मेरा जन्म हो वहां-वहां मैं आपका सेवक और आप मेरे स्वामी हों बस यही नाता निभता रहे।[४]

जो राम को अपना और जिसे राम अपना माने उसका जन्म सफल।

राम से प्रीति होते ही जगत में आसक्ति कटती है।

आसक्ति

किसी वस्तु अथवा व्यक्ति को अपना निजी मानना आसक्ति है। अविद्या माया हमारे भीतर "मेरा" की भावना उत्पन्न करती है। जिस व्यक्ति या वस्तु को 'मेरा" कहते हैं उसमें लिप्त होते हैं और उसकी सुरक्षा तथा उन्नति का भार अपने मार आरोप लेते हैं। अतः फंस जाते है।

आसक्ति का प्रभाव

जो इसमें सहायक हो उससे राग, जो बाधक हो उससे द्वेष होता है। इसी प्रकार क्रोध और लोभ भी। फिर उनसे अन्य दोष भी। राग द्वेष आदि दोषों से मन में अशांति होती है। जिस प्रकार अप्राप्त की प्राप्ति की कामना से चिन्ता रहती है उसी प्रकार जो प्राप्त है उसकी आसक्ति से भी चिन्ता रहती है। चिन्ता से अशान्ति। आसक्ति के कारण भी कामनाएं उत्पन्न होती हैं और कामना से चिन्ता और अशान्ति। आसक्ति का जितना विस्तार और उसकी जितनी तीव्रता होती है उसी अनुपात में चिन्ता और उसकी अशान्ति रहती है। जितनी अनासक्ति होगी उतनी शान्ति।

आसक्ति से मुक्ति के साधन

यह विश्वास कि सब राम के हैं, सब राम का है। सब राम के नाते अपने हैं। जो मिला है राम ने साधना के लिये उपलब्ध किया है। सब अनित्य है, सत्लत परिवर्तन शील है। साधक आसक्ति के विस्तार और तीव्रता को कम करने में सतर्कता और सावधानी से लगा रहे। आसक्ति, आसक्ति से कटती है। साधक की आसक्ति राम से हो और दिन प्रति दिन बढ़ती रहे, दृढ़ होती रहे। राम के नाम-रूप में आसक्ति होगी, तब संसार के नाम-रूप की आसक्ति मिटेगी। राम के रूप में जब आनन्द आता है तब संसार के रूप फीके पड़ जाते हैं। साधक श्रीराम की सर्वज्ञता समर्थता और उनके विधान में तथा श्रीराम-कृपा में अपना विश्वास दृढ़ करता रहे, कर्मफल समर्पण करता रहे।

अनासक्ति से तात्पर्य यह नहीं कि वस्तुओं को फेस दें अपना व्यक्तियों को छोड़कर भाग जाय। अनासक्ति का अर्थ है किसी वस्तु व्यक्ति को अपना निजी नहीं समझना किसी वस्तु या व्यक्ति से लिप्त नहीं होना, अपितु वस्तुओं का ट्रस्टीवत् सदुपयोग करना और व्यक्तियों की मर्यादानुसार सेवा करना।

जिसकी राम में ममता और संसार में समता है (अर्थात् किसी व्यक्ति के प्रति राग, द्वेष, दोष और दुःख का भाव नहीं है वह भवसागर से पार हो चुका है।[५]

संदर्भ नोट

१) 'राम सनेही राम गति राम चरन रति जाहि।
तुलसी फल जग जनम को दियो विधाता ताहि॥

२) 'जिहि राम तुम्ह प्रान पियारे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे।
'हेतु रहित अनुराग राम पद बढ़े अनुदिन अधिकाई॥'

३) 'मातारामोमत्पिता रामचन्द्रःस्वामी रामोमत्सखा रामचन्द्रः।
सर्वस्वं में रामचन्द्रो दयालुर्नान्य जाने नैव जाने न जाने॥

४) 'र्जाह हि जोनि करम बस भ्रमहीं। तहं तहं ईस देउ यह हमही।
सेवक हम स्वामी सियनाहू। होउ नात यह ओर निबाहू॥

५) 'तुलसी ममता राम सों समता सब संसार।
राग न रोष न दोष दुख दास भए भव पार॥

नमस्कार सप्तक - ६

ज्योतिर्मय जगदीश हे, तेजोमय अपार।
परम पुरुष पावन परम, तुझको हो नमस्कार ॥ ६ ॥

ज्योतिर्मय-	प्रकाशमय प्रकाश से पूर्ण
जगदीश-	परमेश्वर श्रीराम
तेजोमय-	दीप्तिमान, तेजयुक्त
अपार-	असीम
परम-	अत्यंत अत्यधिक, उत्कृष्ट
पुरुष-	आत्मा, विष्णु, स्वामी
पावन-	पवित्र करने वाला

अर्थ

हे जगदीश श्रीराम! तू प्रकाशमय है, सबंध ष्ठ स्वामी है, मुझे पवित्र करने वाला सर्वश्रेष्ठ स्वामी है मैं तुझे नमस्कार करता हूँ।

व्याख्या

श्रीराम के जगदीश स्वरूप को नमस्कार!

ज्योतिर्मय है! तुझ में अपार तेज हूं। (देखिये श्री अधिष्ठान की ओर) तू परम पुरुष है, सर्वदा है, सर्वत्र है, सर्वशक्तिमान है परम पावन है, सर्व दयालु है।

जीवन के अध्ययन से सिद्ध होता है कि मनुष्य को असन्तोष भय अथवा चिन्ता से ही अशान्ति होती है। जब तक इन तीनों से एक भी मन में होता है मन में शान्ति नहीं हो सकती। जप ध्यान, साधना में मानसिक अशान्ति बाधक होती है। यह भी जीव के अध्ययन से सिद्ध होता है कि अहंकार के बिना असन्तोष नह कामना

के बिना चिन्ता नहीं होती और आसक्ति के बिना भय नहीं कोई मनुष्य किसी समय यह नहीं कह सकता कि मेरे मन अहंकार नहीं है परन्तु फिर भी असन्तोष है। असन्तोष तभी होता है जब मनुष्य यह मान लेता है कि जो मुझे मिला है वह मेरी योग्यता, सामर्थ्य से कम है। कोई मनुष्य किसी समय यह नहीं कह सकता कि मेरे मन में कोई कामना नहीं है फिर भी चिन्ता है। मनुष्य यह किसी समय नहीं कह सकता कि मेरे मन में किसी व्यक्ति या वस्तु में आसक्ति नहीं है, फिर भी भय है। अहंकार नहीं तो असंतोष कहां? आसक्ति नहीं तो भय कैसा? कामना नहीं तो चिन्ता क्यों?

ऊपर के ५ नमस्कारों की गूढ़ भावनाओं से साधक अहंकार, कामना और आसक्ति से रहित हो चुका है और उसने ज्योतिर्मय तेजोमय जगदीश को नमस्कार किया हैं। उमें विश्वास है कि वह कर्ता, भर्त्ता, हर्ता हैं। अतः अपने समस्त कर्मफल, कर्म-संकल्प औ सर्वस्व को श्रीराम के चरणों में समर्पित कर देता है।

समर्पण भाव से परिपूर्ण हो वह पुलकित हो उठता है और सच्चिदानन्द श्री राम का दर्शन करता है।

इस स्थान पर अर्थात् मन की इस प्रशान्त अवस्था में कुछ क्षण विराम किया जाय, मौन रह कर, तो अद्भुत अनुभूति होती है।

नमस्कार सप्तक - ७

सत्य ज्ञान आनन्द के परम धाम श्रीराम।
पुलकित हो मेरा तुझे, होवे बहु प्रणाम ॥ ७ ॥

सत्य-	यथार्थ तत्व
ज्ञान-	ब्रह्म ज्ञान
आनन्द-	हर्ष (वास्तव में आनन्द का पर्यायवाची शब्द ही नहीं है)
धाम-	घर, देव- स्थान, पुण्य-स्थान
पुलकित-	गद्गद, प्रेम या हर्ष के वेग से जिसके रोएँ उभर आए हों
बहु-	बार-बार
प्रणाम-	नमस्कार

अर्थ

सत्य, ज्ञान और आनन्द के सर्वश्रेष्ठ धाम, हे श्रीराम! मैं पुलकित होकर तुझे बार-बार नमस्कार करता हूँ।

व्याख्या

श्रीराम के सच्चिदानन्द स्वरूप को नमस्कार है।

ज्ञान

कोई किसी को सुख-दुख देने वाला नहीं है सब अपने किये हुए कर्मों का फल पाते हैं।

संयोग, वियोग, भले, बुरे योग, शत्रु, मित्र, उदासीन, जन्म-मृत्यु, कर्म और काल, धरती, घर, धन, नगर, परिवार और जगत के सभी जंजाल इन सबका मूल मोह (अज्ञान) है।

सब मोहरूपी रात्रि में सोते हैं और सोते हुए अनेक स्वप्न देखते है। जैसे स्वप्न में राजा भिखारी हो जाय और कंगाल इन्द्र हो जाय परन्तु जागने पर लाभ हानि कुछ नहीं होती वैसे ही दृश्य प्रपंच को देखना चाहिए।[१]

इस जगत रूपी रात्रि में ज्ञानी जागते हैं जो परमार्थी हैं और प्रपंच से छूटे हुए हैं। जीव को जागा हुआ तब समझना चाहिये जब सब भोग विलास से वैराग्य हो।

विवेक होने पर मोहरूपी भ्रम भाग जाता है, तब श्रीराम के चरणों में प्रेम होता है। जिसे श्रीराम के चरण कमल प्रिय हैं उसे विषय भोग वश में नहीं कर सकते।

जब तक कर्म, वचन और मन से छल छोड़कर मनुष्य श्रीराम का भक्त नहीं हो जाता तब तक करोड़ों उपाय करने पर भी उसे सुख नहीं मिलता।[२]

आनन्द

मन वचन कर्म से श्रीराम के चरणों में प्रीति होना सर्वश्रेष्ठ परमार्थ और पुरुषार्थ है। सम्पूर्ण पुण्यों का सबसे श्रेष्ठ फल वही है कि श्रीराम के चरणों में स्वाभाविक अनुराग हो।

परम धाम

जो मानो कल्पवृक्षों के बगीचे हैं तथा समस्त आपत्तियों का अन्त करने वाले हैं, जो तीनों लोकों में परम सुन्दर हैं वे श्रीमान् राम हमारे प्रभु हैं।[३]

पुलकित

श्रीराम का सुमिरन करते ही महान श्रम मिट जाता है। चरणों में प्रणाम करते समय अनुराग पुलक होना चाहिये।[४]

संदर्भ नोट

१) 'सपने होइ भिखारी नृपु रंकु नाकपति होइ।
जागे लाभ न हानि कछु तिमि प्रपंच जियं जोइ॥

२) करम वचन मन, छाड़ि छलु, जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहु नर्नाहि किए कोटि उपचार॥

३) 'आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम्।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः॥'

४) 'रामहि सुमिरत, रन भिरत, देत परत गुरुवाय।
तुलसी जिहि न पुलक तन ते जगजीवन जाय॥'

प्रकरण ३
चिन्तन



संगति

पाठ के पूर्व साधक अपने आराध्य देव का चिन्तन करता है।

श्रीराम परिभाषा से परे हैं और उनके गुण अनन्त हैं। अतः कुछ प्रमुख गुणों के माध्यम से उनका चिन्तन किया जाता है।

प्रातः पाठ

परमात्मा श्रीराम
परम सत्य, प्रकाश रूप, परम-ज्ञानानन्द-स्वरूप,
सर्वशक्तिमान् एकैवाद्वितीय, परमेश्वर,
परम पुरुष, दयालु, देवाधिदेव है ।
उसको बार-बार नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥

परमात्मा-	ईश्वर
परम-	उत्कृष्ट, चरम
सत्य-	यथार्थ
प्रकाश-	दीप्ति, आलोक
रूप-	सदृश, आकार
ज्ञानानन्दस्वरूप-	ज्ञान और आनन्द की मूर्ति
सर्वशक्तिमान्-	सर्वसमर्थ, सब कुछ करने की सामर्थ्य रखने वाला।
एकैवाद्वितीय-	जो एक ही है और उसका जैसा दूसरा नहीं है
परमेश्वर-	संसार का कर्ता और परिचालक, सगुण ब्रह्म विष्णु, शिव
पुरुष-	आत्मा, विष्णु, शिव, स्वामी
दयालु-	दया करने वाला, कृपालु, अनुग्रहकर्ता
देवाधिदेव-	देव-देवता-आराध्य अधिदेव-इष्टदेव
नमस्कार-	झुक कर अभिवादन करना, प्रणाम

अर्थ

श्रीराम जो परमात्मा हैं, आद्य सत्य हैं, प्रकाश रूप हैं, ज्ञान और आनन्द की मूर्ति हैं, सर्वसमर्थ हैं, जो एक ही है और वैसा अन्य नहीं है, जो परमेश्वर है, परम पुरुष

है, दयालु है, आराध्य है, इष्टदेव है, उसको बार-बार नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।

व्याख्या

परमात्मा श्रीराम-श्रीराम जीव-जगत से परे हैं सबके भीतर और बाहर परिपूर्ण हैं, उनसे परे कुछ नहीं है। अनादि और अनन्त हैं, सबकी उत्पत्ति उन्हीं से है। राम समस्त सृष्टि के एकमात्र स्वामी हैं, सर्वेश्वर हैं, उन्हीं से तीनों लोकों की स्थिति है, समस्त शक्तियों का वह एकमात्र केन्द्र हैं, हृदय में मन तथा बुद्धि को प्रकाशित करने वाले आध्यात्मिक चेतन तत्व हैं।

राम ब्रह्म चिन्मय अबिनासी । सर्ब रहित सब उर पुर बासी ॥

राम प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक समय हैं (सर्वत्र और सर्वदा)।

राम मेरी त्रिकुटी में हैं, मेरे हृदय में हैं, रोम-रोम में हैं, जन-जन में हैं, कण-कण में हैं। जिसके हृदय में जैसी भक्ति और प्रीति होती है उसी अनुसार श्रीराम उसके लिये वहां प्रकट होते हैं, श्रीराम प्रत्येक स्थान पर समान रूप से व्यापक हैं, प्रेम से वह प्रकट हो जाते हैं। ऐसा कोई देशकाल दिशा या विदिशा नहीं जहाँ श्रीराम न हों। वह चराचर में होते हुए भी सबसे रहित हैं और विरक्त हैं, प्रीति से प्रकट हो जाते हैं।[१] राम परम आनन्द के परमधाम है, सुन्दरतम हैं, मधुरतम हैं, उनकी तुलना उनकी उपमा, उन्हीं से हो सकती है। उनको महिमा का पार नहीं है। वह भूत, भविष्य वर्तमान का सब जानते है (सर्वज्ञ)।

राम तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर सबका धारण पोषण करते हैं। राम एकमात्र कर्ता हैं। उनका मंगलमय विधान (जिस से सृष्टि की व्यवस्था होती है) न्याय और दया पर आधारित है। राम ही कर्ता, भर्ता, हर्ता हैं।

वह परिभाषा से परे हैं। वह सब कुछ हैं। सबसे अच्छे हैं। बुद्धि और मन में जो भी समा सके वह सब राम हैं, और जो नहीं समा सके वह भी राम हैं। मन, बुद्धि तो सीमित है, असीम की परिभाषा कैसे कर सकते हैं। 'जो नहि देखा, नहि सुना, जो मनहूँ न समाय,।

सर्वत्र जो भी दिखाई देता है राम ही तो है। सब रूप राम रूप ही है। राम की दयालुता का, कृपा का प्रत्यक्ष अनुभव सबको होता है। तनिक विचार करने पर उनकी सर्वसमर्थता, सर्वत्रता का भी प्रत्यक्ष अनुभव होता है। अमुक रूप धारण करके जाग्रत अथवा स्वप्नावस्था में दर्शन देना उनकी कृपा मात्र पर निर्भर है, उन्हीं की महिमा है।

जो कण-कण में व्याप्त है वह चित्र और मूर्तियों में भी व्याप्त है। जिस भक्त को, जिस मूर्ति अथवा चित्रों में आसक्ति हो जाय उसी में प्रविष्ट होकर राम उस भक्त की आराधना स्वीकार करते हैं, उसके द्वारा प्रेरणाएं देते हैं, उसके द्वारा कृपा करते हैं।

निज इच्छा से शरीर धारण कर वह अवतार लेते हैं, जो माया और गुण से परे हैं, जब जब धर्म का ह्वास होता है, नीच अभिमानी और राक्षस बढ़ जाते हैं तब-तब कृपानिधान श्रीराम भांति-भांति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।(२)

<u>श्री स्वामी जी महाराज की वाणी</u>

"परमेश्वर साइन्स के द्वारा माने हुए सत्य की मानिन्द है। पौराणिक अवतारवाद वैदिक काल में भी था। ऋग्वेद में भगवान कहते हैं, मैं देवों और मनुष्यों द्वारा जुड़ा हुआ बोलता हूँ। मैं ब्रह्मद्वेषी के लिए धनुष को तानता है। अवतारवाद को गपोड़ नहीं मानना चाहिये........ विश्वात्मा का अवतार होता है.... जिनमें

महाशक्ति का अवतरण हुआ उनको परमेश्वर का अवतार माना गया .... मेरे लिये परमेश्वर का प्रतीक नाम है, नाम बड़ी चीज है। नाम के प्रतीक में बड़ा भारी लाभ है। यह जब गहरा बस जाता है, अन्तःकरण निर्मल हो जाता है। हृदय के अन्धकार का नाश हो जाता है.... सबके प्रतीक भी अच्छे हैं पर नाम का प्रतीक उत्तम है।

परम सत्य

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"परम सत्ता वाली वस्तु शुद्ध स्वरूप है, वह वस्तु भाव (होने) के रूप में है। उसका स्वरूप सत्य है जो (वस्तु सार) सत्य कही गई है .... तीनों कालों में, तीनों लोकों में जिसकी कभी कमी नहीं होती वह सर्वदा विराजमान है उसका अभाव कभी नहीं होता, उसकी सत्ता अस्तित्व एकरस ही रहती है .... जो घटने-बढ़ने और परिवर्तन के बिना है, जिसमें विकार नहीं है, जिसका आकार नहीं बदलता, जो नाशरहित वस्तु है, उसी को सत्य समझना चाहिये अर्थात् वही श्री भगवान का स्वरूप है।" जिस वस्तु में परिवर्तन नहीं और किसी दूसरी वस्तु को मिलावट नहीं, वही वस्तु सत्य है। श्रीराम होने से रूप में पूर्णतया बाधारहित हैं। ....

श्रीराम सब सत्यों का आधार हैं और साक्षात् सत्य का ही रूप हैं। निरपेक्षित (अपेक्षारहित, किसी के सहारे से रहित) हैं। .... श्रीराम कार्यरूप नहीं हैं। वह शुभ सत्य प्रकाश हैं, अविनाशी, नाश रहित, निश्चल हैं। ..... वह परिवर्तन से भी रहित हैं। ईश सत्ता है,. सब सच्चाइयों का घर हैं. पूर्ण रूप से सत्य हैं श्रीराम परिवर्तन आदि से तथा अंत से रहित तथा आदि से रहित हैं। ... श्रीराम के सत्य स्वरूप में काल तथा देश नहीं हैं। वह हर स्थान में हैं किसी खास स्थान में नहीं बंधा, उसका स्वरूप, अद्वितीय है। श्रीराम में कोई अन्तर नहीं है, राम के समान और कोई भी नहीं है। उनकी सत्ता सनातन, (पुरानी पुरातन हैं), सबका ठौर ठिकाना है ..... राम सबकी टेक, रक्षक हैं, सहारा हैं और कार्य तथा कारण से

रहित हैं।..... किरण समूह जैसे सूर्य से जुड़ा रहता है उसी तरह सब सत्ताएं राम में ही समाई रहती हैं। सारी सृष्टि माला के समान है उसका सूत्र राम, शोकरहित हैं। सारे लोक उसमें पिरोये शोभा पाते हैं। सर्व सत्यों के सत्य राम तुम ही सबके आधार हो। मुझे अपने सत्य स्वरूप में प्यार दीजिये।

प्रकाशरूप

श्रीराम ज्योतिर्मय और तेजपुञ्ज हैं।

परमज्ञानानन्द स्वरूप

श्रीराम आनन्द को भी आनन्द देने वाले, शुभ के भी कल्याणकारी हैं, सुन्दरता को भी सुन्दर करते हैं, शोभा को शोभायमान करते हैं, भय को भी भयभीत करते हैं, काल को भी काल हैं।

सर्वशक्तिमान्

श्रीराम जो करना चाहते हैं वही होता है। उसके विरुद्ध कोई कुछ नहीं कर सकता।[३] राम सर्व, समर्थ हैं वह जो चाहें सो हो।[४] राम-कृपा अनन्त हैं, अपार है। कृपा करने से अघाते ही नहीं। राम की समस्त शक्तियों में कृपाशक्ति सर्वोपरि है। कृपा करना राम का स्वभाव ही है।

एकैवाद्वितीय

श्रीराम परमब्रह्म हैं। अविगत हैं, जानने में नहीं आते। अलख हैं, स्थूल दृष्टि से नहीं दीखते। अनादि हैं, न उनका आदि है न अंत, उपमारहित हैं। अद्वितीय हैं। सब विकारो से रहित और भेदरहित हैं। वेद उनका नेति-नेति कहकर निरूपण करते हैं। श्रीराम अनन्त हैं, उनके गुण अनन्त है, उनके कार्य अनन्त हैं, उनके नाम भी अनन्त हैं।[५] श्रीराम के रूप, गुण, शील, स्वभाव का विस्तार में वर्णन करते-

करते वेद और सरस्वती जी भी थक गए, किन्तु पूर्णतः नहीं कह सके। श्रीराम के नाम, रूप, लीला, धाम, सब अनुपम हैं।

परमेश्वर एक ही है, अद्वितीय। राम, कृष्ण, नारायण सब में उसी परमेश्वर को देखना।[६] जैसे पापी को सब पाप की शंका से भरपूर, कामी को सब कामुक, क्रोधी को सब क्रोधी, लोभी को सब लालची दिखते हैं, वैसे ही प्रेमी को सब जगत राममय दिखता है। यह परमार्थ सत्य है।

दयालु

समस्त विश्व के एकमात्र स्वामी श्रीराम हैं, उनके मंगलमय विधान से सबकी रचना, पालन और लय होता है। श्रीराम का मंगलमय विधान न्याय और दया पर आधारित है। इस विधान में न्याय सबके लिये सामान्य रूप से है। सिमरन से राम-कृपा का अवतरण तत्काल होता है. यह भी उनका नियम ही है। वह अपनी अहेतुकी कृपा चाहे जिस पर और चाहे जब करते हैं। यद्यपि श्रीराम समस्त लोकों के स्वामी हैं, पर उनका स्वभाव करुणामय और अत्यन्त ही कोमल है।[७]

श्रीराम का स्वभाव इतना कोमल है, इतना मृदुल है कि वैसा स्वभाव कहीं अन्य दिखने या सुनने को भी नहीं मिलता। मन, वचन और कर्म से चतुराई छोड़कर श्रीराम का सुमिरन करने से श्रीराम-कृपा करते हैं। अपने जन का हित करना श्रीराम का प्रण है। वह शरणागत के कुटुम्ब भर के पालने वाले हैं। श्रीराम जी सदा अपने सेवकों की रुचि रखते आये हैं। वेद, पुराण, साधु और देवता इसके साक्षी है।

श्रीराम ही साध्य हैं। अन्य कोई स्वामी ऐसा नहीं। श्रीराम से ही स्वामी के सद्गुणों का उत्कर्ष है। अच्छे सेवक को तो सब चाहते हैं। परन्तु शठ और बिगड़े हुए सेवक से श्रीराम ही प्रेम करते हैं।

देवाधिदेव

श्रीराम की असीम प्रभुता है। सरस्वती जी, शेष जी, शिवजी, ब्रह्मा, शास्त्र, वेद और पुराण सब नेति-नेति कहकर जिनका गुणगान किया करते हैं।

'सब जानत प्रभु प्रभुता सोई । तदपि कहे बिनु रहा न कोई ॥'

श्रीराम की महिमा का पूरा वर्णन तो कोई कर ही नहीं सकता परन्तु जिससे जितना बन पड़े उतना गुणगान करना चाहिए क्योंकि उसका प्रभाव बहुत विलक्षण है।

बार-बार नमस्कार

बार-बार नमस्कार करने का एक भाव तो यह है कि परमेश्वर को या गुरु को एक ही बार प्रणाम नहीं करते। दूसरा भाव यह है कि श्रीराम के इतने उपकार हैं कि 'कोटिन्ह मुख कहि जात न प्रभु के एक-एक उपकार' अतः बार-बार नमस्कार है। तीसरा भाव यह है कि वाणी से, विचार से, आचार से और व्यवहार से बार-बार नमस्कार है।(८)

संदर्भ नोट

(१) जाके हृदय भगति जसि प्रीति। प्रभु तहं प्रकट सदा तेहि रीति।
हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रकट होहिं मैं जाना॥

(२) जब-जब होइ धरम कहानी। बाढ़हि असुर अधम अभिमानी॥
तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा। हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा॥

(३) राम कीन्ह चाहि सोइ होइ। करें अन्यथा अस नहि कोई॥

(४) श्री रघुबीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन॥

(५) राम अनंत अनंत गुनानी। जन्म कर्म अनंत नामानी॥

(६) तुम्हहिं छाड़ि गति दूसर नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं

(६) अति कोमल रघुवीर सुभाऊ। जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥

(८) तरहि न बिनु सेएँ ममस्वामी। राम नमामि नमामि नमामी॥

॥ अमृतवाणी ॥



(प्रवचन पीयूष से उद्धृत
स्वामीजी के अनुभूत वचन)

"अमृतवाणी में राम-नाम की महिमा गाई गयी है। राम-नाम मेरे रग-रग में बस गया है। मुझ में रमा हुआ है। इसके सम्बन्ध में, जो-जो मेरी अनुभूतियाँ हैं, जो-जो भाव उठते गये, उन्हें लिखता गया। उन्हें मैंने स्वयं अनुभव किया है।

नाम की महिमा मेरी अपनी अनुभव की है। इसकी प्रत्येक पंक्ति में राम की महिमा बसी हुई है। मुझे इसकी रचना से बड़ा लाभ हुआ। मैं समझता हूँ, जो भी भक्ति पूर्वक पढ़ेगा, उसे भी लाभ होगा। उस पर राम कृपा होगी। मैं स्वयं इसका पाठ करता हूँ और भाव-मुग्ध हो जाता हूँ। इसकी रचना तो राम की प्रेरणा से हुई। जो इसे पढ़ेगा, उस पर राम कृपा होगी, जैसी मुझ पर हुई।"

प्रकरण ४
अमृतवाणी
पद १-८ – अमृत

राम नाम की धुन अमृत के समान है। राम नाम सिद्धि का कारण, अमृत वाणी और मंगल का धाम है। राम की चर्चा अमृत मनन है। राम का ध्यान अमृत चिन्तन हैं। जिस रसना को राम नाम सुहाता हो वह रसना अमृत है। राम नाम की कमाई अमृत कमाई है। राम नाम अमृतरस सार है, जो परम और अपार आनन्द देता है और जो राम नाम का ध्यान करता है वह जन अमृत पद पाता हैं।

इसलिये हे मन, तू राम जप को अमृतवाणी मान और राम नाम में राम को सदा विराजित जान।

पद १

रामामृत पद पावन वाणी,
राम नाम धुन सुधा समानी ।
पावन पाठ राम गुण ग्राम,
राम राम जप राम ही राम ॥ १ ॥

राम-	बीज अक्षर है। 'रा' = जीव। 'म' = ब्रह्म।
	सदा एक रूप और एक रस
अमृत-	पीयूष, सुधा,
	वह वस्तु जिसे पीने से जीव अमर हो जाता है
पद-	सार्थक शब्द
पावन-	पवित्र करने वाला
वाणी-	वाक्शक्ति
नाम-	वह शब्द जिससे किसी वस्तु, व्यक्ति या समूह का बोध हो।
धुन-	लगन
सुधा-	अमृत
समानी-	मूल्य, महत्व आदि में तुल्य
पाठ -	नियमपूर्वक पढ़ने की क्रिया या भाव
गुण-	जातिस्वभाव
ग्राम-	समूह
जप-	किसी मंत्र या नाम को बार-बार, धीरे-धीरे, अथवा मन-ही-मन दुहराना। मौन या धीमी आवृत्ति (बार-बार अभ्यास)।

अर्थ

'राम' यह अमृत शब्द है, सार्थक शब्द है, वाणी को पवित्र करता है। राम नाम की लगन अमृत जैसी है। राम के गुण समूहों को नियमपूर्वक पढ़ना पवित्र करने वाला है। राम-राम ही जपो।

व्याख्या

अमृत

अमृत के गुण हैं (१) स्वाद की प्राप्ति (२) तृप्ति और (३) मृत्यु के भय का नाश। अमृत में स्वाद और सन्तोष दोनों गुण हैं। पीने से मन प्रसन्न हो जाता है, फिर अन्य कुछ भी पीने या खाने की इच्छा शेष नहीं रहती। मृत्यु का भय भी जाता रहता है।(१) उसी प्रकार 'राम' उस शुभ गति को प्राप्त कर देते हैं जिससे मन को आह्लाद और सुख होता है, अन्य साधनों की तृष्णा नहीं रह जाती और जापक सर्वथा अभय हो जाता है।(२)

मुक्त होने पर (ब्रह्मस्वरूप होने पर) भी श्री शिवजी, श्री हनुमान जी, श्री भरत जी सभी श्रीराम नाम को सदैव जपते है। तभी तो मुक्ति स्वाद-सन्तोष युक्त अमृत के समान है।

प्रसिद्ध है कि देवताओं और असुरों ने समुद्र मंथन किया तब दैत्यों का नाश करने और देवताओं को बल देने के लिये अमृत निकाला था। उस अमृत की एक बूंद भी पीने से अमर हो जाते है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्री रामचरितमानस में राम-नामामृत का यह रूपक बाँधा है कि मुनि और सन्त-रूपी देवताओं ने विचार रूपी मन्दराचल की मथनी से वेद रूपी समुद्र का मन्थन कर राम नाम रूपी अमृत निकाला। यह नामामृत अपने आश्रित जापकों के समस्त कलिमल का प्रध्वंस कर डालता है। यह अमृत

जापकों को अमर करने वाला है, श्रीरामनामामृत पीने वाले का आवागमन नहीं होता।

श्रीरामनामामृत उस अमृत से श्रेष्ठ है क्योंकि वह अमृत जीवन तो दे सकता है परन्तु भव रोगों का नाश नहीं करता। श्रीराम नाम की महिमा है कि अव्यय अविनाशी पद प्राप्त कर देता है और जापक को सुख भी देता है। अतः जो श्री रामनामामृत का निरंतर पान करते हैं (अर्थात् सोते-जागते, चलते-फिरते, काम-काज करते, सभी अवस्थाओं में नाम जपते रहते हैं) वे सुकृत हैं, धन्य हैं।[३]

धुन

जब किसी बात की धुन लगती है तो उसी का विचार होता रहता है। उसी के लिये क्रियाएं होती रहती हैं। उसी संबंध में चर्चा करते रहते हैं अर्थात् एक तल्लीनता आती है। राम नाम की धुन ही एक ऐसी धुन है जो पीयूष के समान है।

(धुन का यहां दूसरा अर्थ "ध्वनि" भी कर सकते हैं। राम नाम की ध्वनि अमृत के समान है। परन्तु "धुन लगाना" अर्थात् राम नाम की लगन और तल्लीनता होना अमृत तुल्य है, यह भाव अधिक उपयुक्त है।)

मैं राम नाम को वन्दना करता हूँ जिसमें "र" अग्नि रूप से, "आ" सूर्य रूप से "म" चन्द्र रूप से बीज है।[४]

राम नाम ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप है। वह वेदों का प्राण है। निर्गुण, उपमा रहित और गुणों का भण्डार है।[५]

"रा" "म" अलग अलग वर्णन करने में प्रीति बिलगाती है। बीजमंत्र की दृष्टि से इनके उच्चारण, अर्थ और फल में भिन्नता भले ही दिखे परन्तु जीव और ब्रह्म के समान स्वभाव से ही सदा एक रूप और एक रस रहते हैं।[६]

संदर्भ नोट

१. 'स्वाद, तोष सम सुगति सुधा के।
कमठ सेष सम धर वसुधा के॥

२. 'राम नाम मोदक सनेह सुधा पागि है।
पाइ परितोष तू न द्वार-द्वार वागि है॥'

३. ब्रह्माम्मोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं।
श्रीमच्छम्भुमुखेन्बुसुन्वरवरे संशोभितं सर्वदा॥
संसाराभयभवजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं।
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्॥

४. 'बन्दऊ नाम राम रघुवर को। हेतु कृषानु भानु हिम कर को॥

५. 'विधि हरि हर मय वेद प्राण सो। अगुन अनूपम गुन निधान सो॥

६. 'बरनत बरन प्रीति विलगाती। ब्रह्म जीव सम सहज संघाती॥

पद २

परम सत्य परम विज्ञान,
ज्योति-स्वरूप राम भगवान् ।
परमानन्द, सर्वशक्तिमान्,
राम परम है राम महान् ॥ २ ॥

परम-	आद्य
सत्य-	यथार्थ तत्व
विज्ञान-	ब्रह्म
ज्योति-	परमात्मा
स्वरूप-	आकृति
भगवान-	परमेश्वर
परमानन्द-	आनन्दस्वरूप ब्रह्म
सर्वशक्तिमान्-	सब-कुछ करने की सामर्थ्य रखने वाला
महान्-	श्रेष्ठ।

अर्थ

राम आद्य यथार्थ तत्व है। आद्य ब्रह्मा है। परमात्मा की आकृति है। परमेश्वर, शिव, ईश्वर, महादेव है। घट-घट व्यापी तत्व है। आनन्दस्वरूप ब्रह्म है। सब-कुछ करने की सामर्थ्य रखने वाला है, श्रेष्ठ है।

पद ३

अमृत वाणी नाम उच्चारण,
राम-राम सुख सिद्धि कारण ।
अमृत-वाणी अमृत श्री नाम,
राम-राम मुद मंगल-धाम ॥ ३ ॥

उच्चारण-	कंठ से ध्वनि करना।
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
सिद्धि-	तप या योग के पूरे होने का फल।
कारण-	साधन
श्री-	आदरसूचक शब्द
मुद-	आनन्द
मंगल-	कल्याण
धाम-	घर।

अर्थ

राम नाम का उच्चारण अमृतवाणी है। सुख सिद्धि का साधन है। आनन्द और कल्याण का घर है।

व्याख्या

'रा' 'म' दोनों अक्षर मधुर और मनोहर हैं। भक्तों के जीवन हैं।[१]

राम नाम स्मरण करने में सबके लिये सुलभ और सुख देने वाला है; इस लोक में लाभ देने वाला है और दिव्य धाम में दिव्य देह से सदा राम सेवा में नियुक्त रखता है।[२]

संदर्भ नोट

१. 'आखर मधुर मनोहर दोऊ। वरन बिलोचन जन जिय जोऊ॥'

२. 'सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाभ परलोक निवाहू॥'

पद ४

अमृतरूप राम-गुण गान,
अमृत कथन राम व्याख्यान ।
अमृत बचन राम की चर्चा,
सुधा सम गीत राम की चर्चा ॥ ४ ॥

अमृतरूप-	साक्षात् अमर जीवन स्वरूप।
गुण-	जाति स्वभाव
गान-	गाने की क्रिया
कथन-	कहना
व्याख्यान-	भाषण, विस्तार पूर्वक वर्णन करना
वचन-	वाणी
चर्चा-	वार्तालाप
सम-	तुल्य
गीत-	गाना
अर्चा-	पूजा

अर्थ

श्रीराम के स्वभाव को पाना साक्षात् अमर जीवन स्वरूप है। श्रीराम के उपदेशों का कथन अमृत है। श्रीराम के गुणों की चर्चा अमृत है। श्रीराम नाम को गाना श्रीराम की पूजा वन्दना है।

पद ५

अमृत मनन राम का जाप,
राम-राम प्रभु राम अलाप ।
अमृत चिन्तन राम का ध्यान,
राम शब्द में शुचि समाधान ॥ ५ ॥

मनन-	चिंतन, ध्यान में विचार करना
जाप-	जपने की क्रिया
अलाप-	तान, वाणी से जपना
चिन्तन-	बार-बार स्मरण, ध्यान, विचार, विवेचना
ध्यान-	अन्तःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव, इस प्रकार मन में लाना कि और सब भूल जाय, मन में स्थापित करना, किसी का विचार मन में लाकर विमग्न होना
शुचि-	पवित्र
समाधान-	मन का संदेह दूर करने वाली बात, चित्त को सब ओर से हटाकर ब्रह्म की ओर लगाना।

अर्थ

राम नाम का जाप, "राम-राम" की तान अमृत रूप मनन है। श्रीराम का ध्यान अमृत-तुल्य चिन्तन है।

राम नाम जपने से पवित्रता होती है, मन का संदेह दूर होता है। चित्त सब ओर से हट कर ब्रह्म की ओर लगता है।

व्याख्या

राम नाम का जाप अमृत है।

राम नाम की तान अमृत है।

राम का ध्यान अर्थात् राम को इस प्रकार मन में लाना कि और सब भूल जाय अथवा राम का विचार मन में लाकर मगन होना अथवा राम को मन से स्थापित करना अमृत है।

<u>पद ६</u>

अमृत रसना वही कहावे,
राम-राम जहाँ नाम सुहावे ।
अमृत कर्म नाम कमाई,
राम-राम परम सुखदाई ॥ ६ ॥

रसना-	जिह्वा
सुहावे-	प्रियदर्शन
कर्म-	वह कार्य या क्रिया जिसका करना कर्तव्य हो।
कमाई-	कमाया हुआ धन
परम-	उत्कृष्ट, मौलिक
सुखदाई-	सुखदायिनी, सुख देनेवाला

अर्थ

वह जिह्वा अमृत-तुल्य है, जिसे राम नाम प्रिय है। वह कर्म अमृत-तुल्य है जिसके साथ-साथ राम नाम की कमाई हो। राम-राम की रटन उत्कृष्ट सुखदायिनी है।

व्याख्या

जब राम नाम का जप प्रिय हो जाता है तो जिह्वा स्वयं अमृत-तुल्य हो जाती हैं। कर्तव्य कर्म को करते हुए राम नाम का जप होता रहे तो वह कर्म स्वयं अमृत-तुल्य हो जाता है और उत्कृष्ट तथा मौलिक सुख देने वाला होता है।

पद ७

अमृत राम नाम जो ही ध्यावे,
अमृत पद सो ही जन पावे ।
राम नाम अमृत-रस सार,
देता परम आनन्द अपार ॥ ७ ॥

ध्यावे-	ध्यान करे
अमृत पद-	अमर स्थान, वह स्थान जहां से पतन न हो, मोक्ष
जन-	मनुष्य, दास
अमृत-	सदा स्थिर रहने वाला आनन्द
अपार-	असीम

अर्थ

जो मनुष्य अमृत रूप राम नाम का ध्यान करता है वह अमृत पद पाता है। राम नाम अमृत तत्व का मूल है जो असीम और स्थिर आनन्द देता है।

पद ८

राम-राम जप हे मना,
अमृत वाणी मान ।
राम नाम में राम को,
सदा विराजित जान ॥ ८ ॥

मना-	मन, वह शक्ति जिससे प्राणी में वेदना, संकल्प, इच्छा और विचार आदि होते हैं।
सदा-	नित्य, निरन्तर
विराजित-	विराजमान, वर्तमान जानकर, विद्यमान जानकर।

अर्थ

हे मन! तू राम नाम के जप को अमृतवाणी समझ ले और यह भी जान ले कि राम नाम में श्रीराम नित्य-निरंतर विराजमान हैं।

व्याख्या

नाम और नामी में पूर्ण एकता है। दोनों में परस्पर प्रीति है। श्रीराम राम-नाम का ही अनुगमन करते हैं अर्थात् नाम लेते ही वहाँ आ जाते हैं।[१] नाम और रूप दोनों ईश्वर की उपाधि हैं। नाम और रूप दोनों अनिर्वचनीय हैं, अनादि हैं। इनका दिव्य अविनाशी स्वरूप शुद्ध भक्तियुक्त बुद्धि से ही जानने में आता है।[२]

संदर्भ नोट

१. समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परस्पर रघु अनुगामी॥
२. नाम रूप दोइ ईस उपाधि। अकथ अनादि सुसामुझि साथी॥

प्रकरण ५
अमृतवाणी
पद ९-१३ – मंगल कार्य

राम नाम मंगलकारी, विघ्न हरने वाला, पातकहारी, शुभ और महान् शकुन, स्वस्ति, शान्ति और कल्याणकारक है। मन और मुख से राम नाम गाना उत्तम मंगलाचार है और मधुर मनोरथ पाना है। राम नाम को मन में लाने से उसमें सभी शुभ बस जाते हैं। राम नाम धुन से विषम विषाद भागते हैं, मन का ताप मिटता है, सुधारस शान्ति मिलती है और सब कार्य सुविधा सुविधि से बनते हैं। इसलिये हे मन! तू राम नाम का सदा सुमिरन कर। वह अतिशय मंगल का मूल है और विषम, विकट तथा संकट का हरने वाला और सब अनुकूल करने वाला है।

पद ९

राम नाम मुद मंगलकारी,
विघ्न हरे सब पातक हारी ।
राम नाम शुभ शकुन महान्,
स्वस्ति शान्ति शिवकर कल्याण ॥ ९ ॥

हर्ष-	आनन्द
मंगलकारी-	अभीष्ट का सिद्धिदाता
विघ्न-	बाधा
हरे-	मिटाये
पातकहारी-	पाप-नाशक
शुभ-	मंगलप्रद
शकुन-	शुभ लक्षण
महान्-	श्रेष्ठ
स्वस्ति-	कल्याण
शान्ति-	धीरता
शिव-	कल्याण
कर-	करनेवाला
कल्याण-	सौभाग्य

अर्थ

राम नाम आनन्द और अभीष्ट की सिद्धि का दाता है। बाधा को मिटाता है, पाप का नाश करता है., मंगलप्रद श्रेष्ठ शुभ लक्षण है। मंगल, धोरता, कल्याण, सौभाग्य, सुख समृद्धि प्रदान करने वाला है।

पद १०

राम-राम श्रीराम विचार,
मानिए उत्तम मंगलाचार ।
राम-राम मन मुख से गाना,
मानो मधुर मनोरथ पाना ॥ १० ॥

विचार-	भावना
मंगलाचार-	मंगलाचरण-किसी शुभ कार्य के आरंभ में उस की निर्विघ्न समाप्ति के लिये ईश्वर प्रार्थना।
मुख-	मुंह
गाना-	मधुर ध्वनि करना
मधुर-	मीठा
मनोरथ-	अभिलाषा
पाना-	अनुभव करना

अर्थ

श्रीराम नाम का स्मरण मंगलाचरण है। मुंह से राम नाम की ध्वनि करना मधुर अभिलाषा का अनुभव करना है।

व्याख्या

किसी शुभ कार्य के आरंभ में उसकी निर्विघ्न समाप्ति के लिए राम नाम की भावना करनी चाहिए।

पद ११

राम नाम जो जन मन लावे,
उस में शुभ सभी बस जावे ।
जहाँ हो राम नाम धुन-नाद,
भागें वहाँ से विषम विषाद ॥ ११ ॥

जन-	मनुष्य, दास
शुभ-	कल्याणकारी
धुन-	ध्वनि, मन की तरंग
नाद-	शब्द, ब्रह्म, निर्गुण ब्रह्म का आकाश गत सर्वप्रथम सगुण रूप
विषम-	भीषण
विषाद-	दुःख

अर्थ

जो मनुष्य राम के नाम को मन में लाता है, उसमें सब कल्याणकारी गुण बस जाते हैं। जहाँ राम-शब्द-ब्रह्म की ध्वनि होती है। वहां से भीषण दुःख भाग जाते हैं।

व्याख्या

जिस मन में राम नाम की तरंग रहती है वहां कोई विकट दुःख नहीं रह सकता। राम नाम अपने जनों के दोष, दुःख और दुराशाओं का इस तरह नाश कर देता है, जैसे सूर्य रात्रि का।[१]

संदर्भ नोट

१. 'सहित दोष दुःख दास दुरासा। दलइ नाम जिमि रवि निसि नासा॥'

<u>*पद १२*</u>

राम नाम मन-तप्त बुझावे,
सुधा रस सींच शान्ति ले आवे ।
राम-राम जपिए कर भाव,
सुविधा सुविधि बने बनाव ॥ १२ ॥

मन तप्त-	तपा हुआ या दुःखित या पीड़ित मन, मन की ताप, पीड़ा या दुःख
सींच-	भिगोना
शान्ति-	चित्त का ठिकाने होना, वासनाओं से छुटकारा
भाव-	प्रेम, विश्वास, भरोसा
सुविधा-	कार्य करने की ठीक रीति, अनुकूलता
सुविधि-	अच्छे ढंग से
बनाव-	युक्ति

<u>अर्थ</u>

राम नाम मन का ताप, पीड़ा दुःख को समाप्त कर देता है और मन को अमृत रस से भिगोकर चित्त को स्वस्थ रखता है। वासनाओं से दूर रखता है। प्रेम, विश्वास, भरोसे के साथ राम नाम जपने से सुगमता सुयोग्य, सुविधि और युक्ति सब बन जाते हैं।

पद १३

राम नाम सिमरो सदा, अतिशय मंगल मूल ।
विषम-विकट संकट-हरण, कारक सब अनुकूल ॥ १३ ॥

सिमरो-	स्मरण करो, ध्यान करो, जपो
सदा-	नित्य, सर्वदा, निरंतर
अतिशय-	अत्यन्त
मंगल-	अभीष्ट की सिद्धि, कल्याण
मूल-	उत्पत्ति का हेतु
विषम-	भीषण
विकट-	भयंकर, दुस्साध्य, दुर्गम
संकट-	विपत्ति, दुख, कष्ट
हरण-	नाश करनेवाला
कारक-	करनेवाला, निमित्त
सब-	समस्त
अनुकूल-	सहायक। सुखकारी, मन को रुचने वाला।

अर्थ

हे मन! तू राम नाम का सर्वदा, नित्य-निरंतर स्मरण कर, ध्यान कर। यह अभीष्ट की सिद्धि का श्रेष्ठ हेतु है, कल्याण की जड़ है। राम नाम का जप भीषण, भयंकर, दुस्साध्य अथवा दुर्गम विपत्ति, दुःख, कष्ट का नाश करता है और समस्त अनुकूलताओं का निमित्त है।

प्रकरण ६
अमृतवाणी
पद १४-१८ – सुकृत

राम नाम का जपना सुकृत है और दुष्कृत का नाश करने वाला हैं। राम नाम के स्मरण से तन और मन पवित्र होते है, शुभ जागते हैं, पाप, ताप, भ्रम, भय भागते हैं। जिसमें राम नाम बस जाय वह पूर्ण काम होता है। राम नाम का सुमिरन भव-सागर से तारने वाला, सहायक और सुखदाई है. राम शक्ति सुख और ज्ञान का दाता है। हे मन! तू राम नाम का ही स्मरण कर।

पद १४

जपना राम-राम है सुकृत,
राम नाम है नाशक दुष्कृत ।
सिमरे राम-राम ही जो जन,
उसका हो शुचितर तन मन ॥ १४ ॥

सुकृत-	पुण्य, उत्तम कार्य
नाशक-	नाश या ध्वंस या वध करने वाला
दुष्कृत-	पाप
शुचितर-	अधिक पवित्र। बहुत शुद्ध, निर्दोष
तन-	शरीर

अर्थ

राम-राम जपना उत्तम कार्य है। राम नाम पाप का ध्वंस करने वाला है। जो मनुष्य राम नाम का सुमिरन करता है उसका शरीर बहुत शुद्ध होता है और उसका मन और अधिक पवित्र होता है।

पद १५

जिसमें राम नाम शुभ जागे,
उसके पाप ताप सब भागे ।
मन से राम नाम जो उच्चारे,
उसके भागें भ्रम भय सारे ॥ १५ ॥

जागे-	उदित हो, चमक उठे, भासमान हो, प्रकाशित हो।
पाप-	वह कर्म जिसका फल इस लोक और परलोक में अशुभ हो।
ताप-	जलन, कष्ट, दुःख
उच्चारे-	उच्चारण करे
भ्रम-	मिथ्या ज्ञान, भ्रांति, संशय, संदेह
भय-	डर, किसी आने वाली आपत्ति की आशंका
सारे-	सब

अर्थ

जिसमें कल्याणकारी राम नाम भासमान हो अर्थात् जिसके मन में राम नाम का प्रकाश हो, उसके पाप, कष्ट, दुःख सब समाप्त हो जाते हैं। जो मन से राम नाम का उच्चारण करता है उसका संशय, मिथ्या ज्ञान, संदेह, भय, सब समाप्त हो जाते हैं॥

व्याख्या

राम नाम से मन को प्रकाशित रखना चाहिए। राम नाम का सदा आभास रहना चाहिये।

ताप तीन प्रकार का होता है:-

आध्यात्मिक या दैहिक-जिसका संबंध देह से होता है, जैसे रोग आदि।

आधिदैविक या दैविक जैसे भूकम्प आदि।

आधिभौतिक या भौतिक जो दूसरों से मिलता है, जैसे चोरी, युद्ध आदि।

कल्याणकारी श्रीराम को मन में बसाने से और सुमिरन करने से सब प्रकार के ताप नष्ट होते हैं।

<u>पद १६</u>

जिसमें बस जाय राम सुनाम,
होवे वह जन पूर्णकाम ।
चित्त में राम-राम जो सिमरे,
निश्चय भव-सागर से तरे ॥ १६ ॥

बस जाय- स्थायी रूप से स्थित हो जाय, टिक जाम।

सुनाम- सुन्दर नाम।

पूर्णकाम- जिसकी सारी इच्छाएँ तृप्त हो चुकी हों

निश्चय – ऐसी धारणा जिसमें कोई संदेह न हो

भवसागर- संसार रूपी समुद्र, जन्म-मरण के दुःख का समुद्र तरे-, पार हो।

अर्थ

जिसमें राम नाम टिक जाय उसकी सारी इच्छाएँ तृप्त हो जाती हैं। जो अपने चित्त में राम-राम सुमिरन करता है वह संसार रूपी समुद्र से निस्संदेह पार हो जाता है और सद्गति को प्राप्त होता है।

पद १७

राम सिमरन होवे सहाई,
राम सिमरन है सुखदाई ।
राम सिमरन सबसे ऊँचा,
राम शक्ति सुख ज्ञान समूचा ॥ १७ ॥

सहाई-	सहायक
सुखदाई-	सुख देनेवाला।
ऊँचा-	श्रेष्ठ
शक्ति-	बल, राज्य के साधन जिनसे शत्रुओं पर विजय प्राप्त की जाती है।
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
ज्ञान-	वस्तुओं और विषयों का बोध, तत्वज्ञान, यथार्थ या सम्यक ज्ञान।
समूचा-	पूर्ण।

अर्थ

राम सुमिरन सहायक है, सुख देने वाला है, सर्वश्रेष्ठ है। राम की शक्ति सम्पूर्ण सुख और तत्वज्ञान है।

पद १८

राम-राम ही सिमर मन,
राम-राम श्रीराम ।
राम-राम श्रीराम भज,
राम-राम हरि-नाम ॥ १८ ॥

अर्थ

हे मन! तू राम-राम ही स्मरण किया कर। राम-राम श्रीराम का सुमिरन किया कर। राम-राम श्रीराम रटा कर। जपा कर।

प्रकरण ७
अमृतवाणी
पद १९-२९ – आश्रय

माता, पिता, बन्धु, पुत्र, पत्नी, पति, धन, जन, संबंधी मित्र, जितने भी प्यारे हैं उनमें से कोई भी अन्तकाल में सहारा नहीं दे सकता, केवल राम नाम ही तारने वाला है। राम नाम का सुमिरन ही संगी, सखा, सनेही, सुहृद है। रामभक्त कभी अकेला नहीं रहता, राम उसका युग-युग का साथी है।

निर्जन वन में घोर विपत्ति हो, सब ओर अधेरा हो; बाधा, बैर, विरोध,विघ्न हो, अथवा कुचिन्ता में, शोक-सागर में, अथवा अति दुःख में मन घबराता हो; कड़ी घड़ी हो, कठिनतर काल हो, कठोर कष्ट हो, कराल क्लेश हो, अथवा दुर्जन या दुखड़ा घेर लेवे, ऐसे प्रत्येक समय में राम नाम के जाप से प्रकाश मिलता है, चिन्ता दूर होती है, धैर्य मिलता है, और दीनदयालु प्रभु सुख देते हैं। राम नाम सदा सहायक और सर्व-सुखदायक है। राम की टेक ही एकमात्र शरण, शान्ति और आश्रय है।

राम नाम की पूंजी पाइये। कहीं जाइये तो राम नाम को साथ ले जाइये, जन्म-मरण का खटका नहीं रहेगा। राम का भक्त कहीं अटका नहीं रहता। राम तीन लोक का नाथ है। परम पुरुष, पावन प्रभु सदा ही साथ रहता है।

पद १९

माता-पिता बान्धव सुत दारा,
धन जन साजन सखा प्यारा ।
अन्त काल दे सके न सहारा,
राम नाम तेरा तारनहारा ॥ १९ ॥

मात-	जननी
पिता-	जनक
बान्धव-	भाई- बन्धु, नातेदार
सुत-	पुत्र
दारा-	पत्नी
धन-	द्रव्य, सम्पत्ति
जन-	अनुयायी, अनुचर
साजन-	पति, स्वामी, प्रेमी, वल्लभ
सखा-	मित्र, सहयोगी
प्यारा-	प्रिय
अन्तकाल-	अन्तिम समय
सहारा-	आश्रय, सहारा
तारनहारा-	पार उतारने वाला, उद्धार करने वाला, तारने वाला।

अर्थ

माता-पिता, भाई-बन्धु, पुत्र, पत्नि, पति, धन-सम्पत्ति, अनुयायी, मित्र और प्रियजन यह कोई भी अन्तिम समय में आश्रय या सहायता नहीं दे सकते। राम नाम ही उद्धार करने वाला, पार उतारने वाला, तारने वाला है।

पद २०

सिमरन राम नाम है संगी,
सखा स्नेही सुहृद शुभ अंगी ।
युग-युग का है राम सहेला,
राम भक्त नहीं रहे अकेला ॥ २० ॥

संगी-	संग रहने वाला
सखा-	साथी
स्नेही-	प्रेमी
सुहृद-	मित्र
शुभ-	कल्याणकारी
अंगी-	अशी
युग-	युग-बहुत दिमों तक
सहेला-	साथ में रहने वाला, मित्र
भक्त-	भक्ति करने वाला, ईश्वर में अनुराग रखने वाला
अकेला-	जिसके साथ कोई न हो।

अर्थ

राम नाम का सुमिरन संग रहने वाला साथी, प्रेमी मित्र और कल्याणकारी अंशी है। राम का अनुरागी अकेला नहीं होता, राम सर्वदा उसके साथ रहते हैं।

पद २१

निर्जन वन विपद हो घोर,
निबड़ निशा तम सब ओर।
जोत जब राम नाम की जगे,
संकट सर्व सहज से भगे ॥ २१ ॥

निर्जन-	वह स्थान जहाँ कोई मनुष्य न हो, एकान्त
वन-	जंगल
विपद्-	विपत्ति
घोर-	भयंकर, भयानक, विकराल, डरावना
निबड़-	घनघोर, गहरा, घोर
निशा-	रात्रि, रजनी
तम-	अंधकार, अंधेरा, मोह, कालिमा
जोत-	ज्योति, प्रकाश
जगे-	मंत्र का साधन हो
संकट-	विपत्ति
सहज-	सरल, सुगम
भगे-	पीछा छूटे

अर्थ

कैसा भी निर्जन स्थान हो, भले ही जंगल हो, भयंकर भयानक विपत्ति हो, घनघोर रात्रि हो, अंधकार हो, परन्तु राम नाम की ज्योति जगाने से, सब विपत्ति से सुगमतापूर्वक पीछा छूट जाता है।

व्याख्या

श्रीराम नाम के प्रकाश से मोह का नाश होता है।

पद २२

बाधा बड़ी विषम जब आवे,
बैर विरोध विघ्न बढ़ जावे ।
राम नाम जपिए सुख दाता,
सच्चा साथी जो हितकर त्राता ॥ २२ ॥

बाधा-	विघ्न, संकट, कष्ट, भय
विषम-	जो सम या समान न हो, असमान, बहुत कठिन, बहुत तीव्र, भीषण, विकट।
बैर-	शत्रुता, द्वैष
विरोध-	मेल में न होना, विपरीत भाव, बिगाड़, अनमन
विघ्न -	अड़चन, बाधा
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
दाता-	देनेवाला
सच्चा-	यथार्थ, ठीक, वास्तविक
साथी-	संगी
हितकर-	भलाई करने वाला, लाभ पहुँचाने वाला
त्राता-	रक्षक।

अर्थ

कैसा भी कठिन अथवा तीव्र अथवा भीषण संकट, कष्ट, भय उपस्थित हो अथवा जब भी द्वेष,विरोध,विघ्न का सामना हो,राम नाम का जप करना चाहिए। वह सुखदाता है। यथार्थ संगी, हितकर और रक्षक है।

पद २३

मन जब धैर्य्य को नहीं पावे,
कुचिन्ता चित्त को चूर बनावे।
राम नाम जपे चिन्ता चूरक,
चिन्तामणि चित्त चिन्तन पूरक ॥ २३ ॥

धैर्य- धीरता, चित्त में उद्वेग न उत्पन्न होने का भाव

कुचिन्ता- बुरी चिन्ता

चित्त- अंतःकरण की अनुसंधानात्मक वृत्ति, अंतःकरण

चूरक- चूर करने वाला

चिन्तामणि- कल्पित रत्न जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि जो अभिलाषा की जाए वह पूर्ण कर देता है।

चिन्तन- बार-बार स्मरण, ध्यान, विवेचना

पूरक- पूरा करने वाला

अर्थ

जिस समय मन अधीर हो, चित्त में उद्वेग हो, अथवा जब अंतःकरण को कुचिन्ता चूर करे, उस समय राम नाम जपना चाहिए जो चिन्ता को चूर करने वाला, प्रत्येक अभिलाषा को पूर्ण करने वाला और चित्त को ध्यान से भर देने वाला है।

पद २४

शोक सागर हो उमड़ा आता,
अति दुःख में मन घबराता ।
भजिए राम-राम बहु बार,
जन का करता बेड़ा पार ॥ २४ ॥

शोक-	पीड़ा से उत्पन्न क्षोभ
सागर-	समुद्र
अति-	अधिक
दुःख-	कष्ट, क्लेश, संकट, विपत्ति, व्यथा
जन-	मनुष्य, दास
बेड़ा पार-	किसी संकट से पार लगाना

अर्थ

जब पीड़ा या क्षोभ का समुद्र उमड़ा हुआ हो अथवा अधिक कष्ट, क्लेश, व्यथा, विपत्ति या संकट के कारण मन घबराता हो तब राम नाम का सुमिरन करना चाहिए। राम-राम को रटना चाहिए। इससे दास का शोक अथवा दुःख से पीछा छूटता है।

पद २५

कड़ी घड़ी कठिनतर काल,
कष्ट कठोर हो क्लेश कराल।
राम-राम जपिए प्रतिपाल,
सुख दाता प्रभु दीनदयाल ॥ २५ ॥

कड़ी-	संकटमय, दुःखमय
घड़ी-	समय, अवसर
कठिनतर-	बहुत कठिन
कष्ट-	क्लेश, पीड़ा, संकट, आपत्ति
कठोर-	कड़ा
क्लेश-	दुःख, व्यथा, वेदना
कराल-	भयंकर, विकराल डरावना
प्रतिपाल-	पोषक, रक्षक
सुखदाता-	सुख देनेवाला
प्रभु-	स्वामी
दीन-	दुःखित
दयाल-	दया करनेवाला, कृपालु

अर्थ

जब संकट का अवसर हो अथवा बहुत कठिन समय हो अथवा कड़ा संकट, क्लेश, पीड़ा या आपत्ति हो अथवा भयंकर व्यथा वेदना या दुःख हो तो राम-राम जपना चाहिए, जो पोषक और रक्षक है, सुखदाता है, सुख देनेवाला स्वामी है। दीन-दुःखी पर दया करनेवाला कृपालु है।

पद २६

घटना घोर घटे जिस बेर,
दुर्जन दुखड़े लेवें घेर ।
जपिए राम नाम बिन देर,
रखिए राम-राम शुभ टेर ॥ २६ ॥

घटना-	कोई बात, जो हो जाय।
घोर-	भयंकर, भयानक, दुर्गम।
घटे-	होवे।
बेर-	समय
दुर्जन-	दुष्टजन
दुखड़े-	कष्ट, विपत्ति
देर-	विलम्ब
टेर-	तान, पुकार

अर्थ

जब भयंकर या भयानक घटना हो और जब दुष्ट जन, विपत्ति या कष्ट घेर लें, तो अविलम्ब राम नाम जपना चाहिए और राम-राम की मंगलमय पुकार करनी चाहिए, राम-राम की तान रखनी चाहिए।

पद २७

राम नाम हो सदा सहायक,
राम नाम सर्व सुखदायक ।
राम-राम प्रभु राम की टेक,
शरण शान्ति आश्रय है एक ॥ २७ ॥

सदा-	सर्वदा, निरन्तर
सहायक-	सहायता करने वाला
सुखदायक-	सुख देने वाला
प्रभु-	ईश्वर, भगवान, स्वामी
टेक-	आश्रय, अवलम्ब
शरण-	आश्रय
शान्ति-	वेग, चित्त का ठिकाने होना, स्वस्थता, धीरता
आश्रय-	आधार, सहारा, अवलम्ब, शरण

अर्थ

राम नाम सर्वदा, नित्य, निरन्तर सहायता करने वाला है। सब प्रकार से सुख देने वाला है। राम नाम ईश्वर भगवान, स्वामी है। केवल राम का अवलम्ब ही रक्षा करता है, शान्ति और आश्रय प्रदान करता है।

पद २८

पूँजी राम नाम की पाइये,
पाथेय साथ नाम ले जाइये ।
नाशे जन्म-मरण का खटका,
रहे राम भक्त नहीं अटका ॥ २८ ॥

पूंजी-	संचित धन
पाथेय-	पथिक का राहखर्च, संबल मार्ग का भोजन
साथ-	बराबर पास रहने वाला
नाशे-	नाश करे, मिटाये
जन्म-	उत्पत्ति, अस्तित्व में आना
मरण-	मृत्यु
खटका-	भय, आशंका
भक्त-	भक्ति करने वाला, अनुयायी
अटका-	अड़चन, बाधा, फंसा हुआ

अर्थ

राम नाम धन का संचय करना चाहिए। राम नाम पथिक का संबल है, जिसे बराबर पास रखना चाहिए। वह जन्म-मृत्यु के भय का नाश करता है। राम का भक्त किसी बाधा अड़चन में फंसा नहीं रहता।

पद २९

राम-राम श्रीराम है,
तीन लोक का नाथ।
परम पुरुष पावन प्रभु,
सदा का संगी साथ॥ २९॥

तीन-लोक-	समस्त संसार
परम-	उत्कृष्ट, आद्य
पुरुष-	आत्मा, विष्णु, सूर्य, शिव
पावन-	पवित्र करनेवाला
संगी-	संग रहनेवाला, मित्र

अर्थ

श्रीराम ही समस्त संसार के स्वामी हैं। वह आद्य आत्मा हैं, पवित्र करनेवाले स्वामी हैं, सर्वदा सर्वत्र संग रहने वाले हैं।

प्रकरण ८
अमृतवाणी
पद ३०-३५ – योग, साधन आदि

राम नाम के बिना यज्ञ, तप, ध्यान, योग, वन कुटिया में निवास, वैराग्य, ये सब नीरस हैं। राम जप ही संयम, साधन, आराधन, परम अभ्यास, सुव्रत, नेम, तप, सरल समाधि, ऋद्धि-सिद्धि, नव-निधान और सब सुख की खान है। राम नाम ध्याना,अमृत पद का पाना है। यह योग सहज और परम है और अमृत भोग का दाता है।

पद ३०

यज्ञ, तप, ध्यान योग ही त्याग,
वन कुटी वास अति वैराग ।
राम नाम बिना नीरस फोक,
राम-राम जप तरिए लोक ॥ ३० ॥

यज्ञ-	प्राचीन भारतीय आर्यों का एक प्रसिद्ध कृत्य जिसमें प्रायः हवन और पूजन होता था।
तप-	शरीर को तपाने या कष्ट देनेवाले वे कार्य जो चित्त को विषयों से हटाने के लिये किये जाए; तपस्या, साधना शरीर या इंद्रिय को वश में रखने का कर्म या धर्म।
ध्यान-	अन्तःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव; चिन्तन, मनन, भावना, प्रत्यय, चित्त को एकाग्र करके किसी ओर लगाने की क्रिया।
योग-	मिलना, मुक्ति या मोक्ष का उपाय, चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना; चित्त को एकाग्र करके ईश्वर में लीन होने का विधान।
त्याग-	संबंध या लगाव न रखने की क्रिया, सांसारिक विषयों और पदार्थों को छोड़ने की क्रिया।
वन-	जंगल, कानन, अरण्य
कुटी-	घासफूस से बनाया हुआ छोटा-सा घर, पर्णशाला, कुटिया।
वास-	रहना, निवास
अति-	बहुत अधिक

वैराग- संसार के झंझटों से हटाकर ईश्वर की ओर लगाई जाने वाली मन की वृत्तिः विषय-वासनाओं में अनुराग का अभाव; विरक्ति।

बिना- छोड़कर

नीरस- रसहीन, शुष्क

फोक- सार निकालने पर बचा हुआ अंश, भूसी

तरिए- पार जाइये

अर्थ

राम नाम के बिना यज्ञ, तप, ध्यान, योग, त्याग, कानन या कुटी में निवास करना, यह सब रसहीन और शुष्क भूसी के तुल्य है। राम-राम जप कर संसार से पार जाना चाहिए।

पद ३१

राम जाप सब संयम साधन,
राम जाप है कर्म आराधन ।
राम जाप है परम अभ्यास,
सिमरो राम नाम 'सुख-रास' ॥ ३१ ॥

संयम-	इंद्रिय निग्रह, चित्तवृत्ति का निरोध, मनो निग्रह, हानिकारक या बुरी वस्तुओं से बचते की क्रिया।
साधन-	काम को सिद्ध करने की क्रिया, उपासना, साधना
कर्म-	वह कार्य या क्रिया जिसका करना कर्तव्य हो।
आराधन-	पूजा, उपासना।
परम-	सबसे बढ़ा-चढ़ा, उत्कृष्ट
अभ्यास-	किसी कार्य को बार-बार करना
सिमरो-	सुमिरन करो
सुखदास-	जो सर्वथा सुखमय हो।

अर्थ

राम नाम के जाप में इन्द्रिय निग्रह, मनो निग्रह, साधना, सबका समावेश है। राम नाम का जाप कर्तव्य है, पूजा है, उपासना है, उत्कृष्ट अभ्यास है। राम नाम सर्वथा सुखमय है. उसका सुमिरन कीजिये।

पद ३२

राम जाप कही ऊँची करणी,
बाधा विघ्न बहु दुःख हरणी।
राम-राम महा-मन्त्र जपना,
है सुव्रत नेम तप तपना ॥ ३२ ॥

राम-	राम
करणी-	कर्म
बाधा-	विघ्न, संकट
दुःख-	मन को कष्ट देने वाली अवस्था, कष्ट, क्लेश, आपत्ति, विपत्ति, पीड़ा, व्यथा, व्याधि, रोग।
हरणी-	हरने वाला।
महामन्त्र-	बहुत बड़ा और प्रभावशाली मन्त्र
सु-	श्रेष्ठ
व्रत-	पवित्र या धार्मिक कार्य, दृढ़ निश्चय
नेम-	नियम, धर्म की दृष्टि से कुछ नित्य नैमित्तिक क्रियाओं का पालन।
तप-	शरीर को तपाने या कष्ट देनेवाले वे कार्य जो चित्त को विषयों से हटाने के लिए किए जायें, तपस्या, साधना।
तपना-	तपस्या करना।

अर्थ

राम नाम का जाप श्रेष्ठ कर्म है। वह संकट, विघ्न, दुःख, आपत्ति, विपत्ति, पीड़ा, व्यथा व्याधि, रोग को हरने वाला है। महामंत्र राम-राम का जपना श्रेष्ठ पवित्र संकल्प है, नियम है, साधना है, तपस्या है।

पद ३३

राम जाप है सरल समाधि,
हरे सब आधि व्याधि उपाधि।
ऋद्धि-सिद्धि और नव निधान,
दाता राम है सब सुख खान ॥ ३३ ॥

सरल-	सहज
समाधि-	योग का चरम फल, इस अवस्था में मनुष्य सब प्रकार के क्लेशों से मुक्त हो जाता है और उसे अनेक प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं।
आधि-	मानसिक व्यथा।
व्याधि-	रोग
उपाधि-	उपद्रव, उत्पात
ऋद्धि-सिद्धि-	समृद्धि और सफलता
नव-	नवीन, नूतन; नौ
निधान-	निधि
दाता-	देनेवाला
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
खान-	खदान, जहां कोई वस्तु बहुत सी हो।

अर्थ

राम नाम का जाप सहज समाधि है, वह मानसिक व्यथा, रोग, उत्पात, उपद्रव का नाश करता है। राम नाम का जप समृद्धि और सफलता की नित्य नवीन निधि है। राम सब सुखों की खान है।

राम जप सब व्यथा, रोग, उत्पात, उपद्रव का नाश करता है। राम ऋद्धि-सिद्धि और नौ निधियों का दाता तथा सर्व-सुखों की खान है।

पद ३४

राम-राम चिंतन सुविचार,
राम राम जप निश्चय धार।
राम-राम श्री राम ध्याना,
है परम पद अमृत पाना ॥ ३४ ॥

चिन्तन-	बार-बार स्मरण, ध्यान
सुविचार-	उत्तम विचार
निश्चय-	निःसंशय ज्ञान
धार-	सोता, स्रोत
ध्याना-	ध्यान करना, स्मरण करना

अर्थ

राम-राम का स्मरण, ध्यान, उत्तम विचार है। राम नाम का जाप निःसंशय ज्ञान का स्रोत है। राम नाम का जप करना, श्रीराम का ध्यान करना उत्कृष्ट स्थिति है, अमृत की प्राप्ति है।

<u>पद ३५</u>

राम-राम श्रीराम हरि,
सहज परम है योग
राम-राम श्रीराम जप,
दाता अमृत भोग ॥ ३५ ॥

हरि-	विष्णु, विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण, श्रीराम, शिव
सहज-	सरल, सुगम
योग-	मुक्ति या मोक्ष का उपाय, चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना, चित्त को एकाग्र करके ईश्बर में लीन होने का विधान।
दाता-	देनेवाला
मोग-	प्रारब्ध, फल

<u>अर्थ</u>

राम-राम, श्रीराम जपना चित्त को एकाग्र करके ईश्वर में लीन करने का सरल सुगम और श्रेष्ठ विधान है। राम-राम श्रीराम का जप अमृत-तुल्य फल का देनेवाला है।

प्रकरण ९
अमृतवाणी
पद ३६-४१ – शक्ति

राम नाम चिन्तामणि है, अनमोल रत्न है। इसकी महिमा अनमोल है, प्रभाव अतुल है। इसका बड़ा प्रताप है, यह तारक जाप है, बोजाक्षर है, महाशक्ति का भण्डार है, शुभ सतोष का दाता है। इससे पद्म प्रकाशता है, कुण्डलिनी का बोध होता है, सुषुम्ना खुलती है। इसमें अमृतरस घुला हुआ है। इससे सहज ही नाद उपजता है, शक्ति जागती है, चेतना भाव जागते हैं, अविद्या की ग्रन्थी टूटती है और राम की लीला की फुलवारी खिलती है। यह पतित पावन परम पाठ है। सफल सिद्धि की साधना राम नाम का अनुराग है।

पद ३६

नाम चिन्तामणि रत्न अमोल,
राम नाम महिमा अनमोल।
अतुल प्रभाव अति प्रताप,
राम नाम कहा तारक जाप ॥ ३६ ॥

चिन्तामणि-	कल्पित रत्न जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि उससे जो अभिलाषा की जाय वह पूर्ण कर देता है, ब्रह्मा।
रत्न-	वे छोटे, चमकीले, बहुमूल्य खनिज पदार्थ जिनका व्यवहार आभूषणों आदि में जड़ने के लिए होता है।
अमोल-	अमूल्य
महिमा-	महत्व, महात्म्य, प्रभाव, प्रताप
अनमोल-	अमूल्य
अतुल-	असीम, अनुपम
प्रभाव-	सामर्थ्य, महात्म्य
अति-	बड़ा
प्रताप-	बल, प्रभुत्व
तारक-	राम या शिव का षड़क्षर मंत्र "श्री रामाय नमः" 'ओं नमः शिवाय' मंत्र; भव-सागर से पार करने वाला।

अर्थ

श्रीराम नाम चिन्तामणि है, अमूल्य रत्न है। राम नाम का महात्म्य अमूल्य है। राम नाम की महिमा अमूल्य है। उसका सामर्थ्य असीम है,अनुपम है।। उसका बड़ा प्रताप है, प्रभुत्व है। राम नाम का जप तारक है।

पद ३७

बीज अक्षर महा-शक्ति-कोष,
राम-राम जप शुभ सन्तोष।
राम-राम श्री राम-राम मंत्र,
तन्त्र बीज परात्पर यन्त्र ॥ ३७ ॥

बीज- प्रधान कारण, मूल प्रकृति, जड़, मूल, वह अव्यक्त ध्वनि या शब्द जिसमें तंत्रानुसार किसी देवता को प्रसन्न करने की शक्ति मानी गई है।

अक्षर- अविनाशी, नित्य आत्मा, ब्रह्म

महा- सर्वश्रेष्ठ

शक्ति- पराक्रम, दूसरे पदार्थों पर प्रभाव डालने वाला बल, दुर्गा, भगवती, गौरी, लक्ष्मी।

कोश- वेदांत में निरूपित आत्मा को ढके रहने वाले अन्नमय,प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और ज्ञानमय या आनन्दमय नामक पाँच आवरण जो प्राणियों में होते हैं, संचित धन।

शुभ- कल्याणकारी

सन्तोष- हर हालत में प्रसन्न रहना संतुष्टि, आनन्द

मन्त्र- गोप्य या रहस्यपूर्ण बात,
देवाधि साधन, गायत्री आदि वैदिक वाक्य जिनके द्वारा यज्ञ आदि क्रिया करने का विधान है।

तन्त्र- निश्चित सिद्धान्त, हिन्दुओं का उपासना सम्बन्धी एक

शास्त्र- जो शिव प्रणीत माना और गुप्त रखा जाता है,
सिद्धान्तों का उपदेश देने वाले ग्रंथ जो प्रायः शिव और दुर्गा

के संवाद रूप में लिखे मिलते हैं-इन में मुख्यतः सृष्टि प्रलय देवी-देवताओं की उपासना अभीष्ट और हर प्रकार की दैवी शक्तियों का उपार्जन और समाधि द्वारा चार प्रकार की मुक्तियों की प्राप्ति आदि पाँच विषयों का विवेचन रहता है।

परात्पर- सर्वश्रेष्ठ

यन्त्र- तांत्रिकों के अनुसार कुछ विशेष प्रकार के बने हुए कोष्ठक आदि, वह उपकरण जो किसी विशेष कार्य के लिये प्रस्तुत किया जाय।

अर्थ

राम नाम बीज अक्षर है, सर्वश्रेष्ठ पराक्रम का कोष राम-राम का जप कल्याणकारी संतुष्टि है। 'राम' मन्त्र है, है, तंत्र है, सर्वश्रेष्ठ यन्त्र है।

<u>पद ३८</u>

बीजाक्षर पद पद्म प्रकाशे,
राम-राम जप दोष विनाशे ।
कुंडलिनी बोधे शुष्मणा खोले,
राम मन्त्र अमृत रस घोले ॥ ३८ ॥

बीजाक्षर-	किसी बीजमंत्र का पहला अक्षर
पद्म-	कमल का फूल या पौधा, सामुद्रिक के अनुसार पैर में कमल से मिलते-जुलते आकार का एक विशेष चिन्ह जो भाग्य-सूचक माना जाता है, विष्णु का एक आयुध।
दोष-	अवगुण, नुक्स, वह मानसिक भाव जो मिथ्या ज्ञान से उत्पन्न होता है और जिसकी प्रेरणा से मनुष्य भले या बुरे कामों में प्रवृत्त होता है।
कुण्डलिनी-	तन्त्र और हठयोग के अनुसार एक सर्पाकार वस्तु जो मूलाधार में सुषुम्ना नाड़ी की जड़ के नीचे मानी गई है।
बोधे-	जाग्रत करे
शुष्मणा-	हठयोग में शरीर की तीन प्रधान नाड़ियों में से एक जो नासिका के मध्य भाग (ब्रह्मरंध्र) में स्थित है।

<u>अर्थ</u>

राम नाम बीजाक्षर है, सार्थक शब्द है जो पद्म को प्रकाशित करता है। राम नाम का जप दोषों का नाश करता है। कुण्डलिनी के चलने का मार्ग जाग्रत करता है। शुष्मना को खोलता है और मन्त्र के अमृत रस को घोल देता है।

पद ३९

उपजे नाद सहज बहु भाँत,
अजपा जाप भीतर हो शान्त ।
राम-राम पद शक्ति जगावे,
राम-राम धुन जभी रमावे ॥ ३९ ॥

उपजे-	उत्पन्न हो
नाद-	समाधि की स्थिति में सुनाई पड़ने वाला शब्द, निर्गुण ब्रह्म का आकाशगत सर्वप्रथम सगुण रूप (दर्शन)।
सहज-	सुगम
भाँत-	प्रकार
अजपा-	जिसका उच्चारण न किया जाय
शक्ति-	पराक्रम, अधिकार, दुर्गा, भगवत्ती, गौरी, लक्ष्मी
हो धुन-	लगन, मन की तरंग

अर्थ

राम नाम के अजपा जप होने से आन्तरिक शान्ति प्राप्त होती है और उससे सहज ही बहुत प्रकार से नाद उत्पन्न होता है। जब राम-राम की धुन मन में रमे तब राम-राम सार्थक शब्द जाग्रत हो।

पद ४०

राम नाम जब जगे अभंग,
चेतन भाव जगे सुख-संग
ग्रन्थी अविद्या टूटे भारी,
रामलीला की खिले फुलवारी ॥ ४० ॥

अभंग-	अखंड
चेतन-	ज्ञानयुक्त, प्राणयुक्त
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
संग-	मिलना
ग्रन्थी-	गाँठ, बन्धन
अविद्या-	अज्ञान
लीला-	चरित्र
फुलवारी-	पुष्प-वाटिका

अर्थ

राम नाम की अखण्ड जाग्रति होने से ज्ञानयुक्त, प्राणयुक्त, सुखयुक्त भावना होती है, भारी अज्ञान का बंधन टूट जाता है। और राम के चरित्र की पुष्पवाटिका खिलती है।

पद ४१

पतित पावन परम पाठ,
राम-राम जप याग ।
सफल सिद्धि कर साधना,
राम नाम अनुराग ॥ ४१ ॥

पतित-	आचार नीति या धर्म से गिरा हुआ, नीतिभ्रष्ट, अधम
पावन-	पवित्र करनेवाला
पाठ -	नियमपूर्वक पढ़ने की क्रिया या भाव।
याग-	यज्ञ
सफल-	सार्थक
सिद्धि-	काम का पूरा होना, प्रयोजन निकालना, तप या योग के पूरे होने का अलौकिक फल, योग की अष्ठ सिद्धियाँ प्रसिद्ध हैं :-अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, इशित्व और वशित्व।

अर्थ

राम-राम का जप पतित को पवित्र करने वाला है, श्रेष्ठ पाठ है; यज्ञ है। राम नाम में प्रीति सार्थक सिद्धि देने वाली साधना है।

प्रकरण १०
अमृतवाणी
पद ४२-४८ – जापक

राम नाम की बहुत बड़ाई है, यह तीनों लोकों का सार है। इसकी महिमा दिन-रात वेद-पुराण, मुनि, यति, सति, साधु, सन्त, बुद्धिमान, तपस्वी, योगी, सिद्ध, ऋषि, भजनीक, भक्त, पूर्ण पण्डित, प्रधान पुरुष सब गाते हैं। देव और देवियां भी स्वर से इस नाम का भजन करते हैं और जितने सुगुणी और साधनवान हैं, वह स्वर संगीत से, कीर्तन कथा से, राम को रिझाते हैं। राम नाम का जाप मोहक मंत्र है, अति मधुर है। तीनों लोक में राम नाम का गुणगान होता है।

पद ४२

तीन लोक का समझिए सार,
राम नाम सब ही सुखकार ।
राम नाम की बहुत बड़ाई,
वेद पुराण मुनि जन गाई ॥ ४२ ॥

सार-	तत्व, मुख्य अभिप्राय
सुखकार-	सुख देनेवाला
वेद-	भारतीय आर्यों के प्राचीनतम धार्मिक तथा आध्यात्मिक ग्रन्थ जिनकी संख्या चार है:-ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद
पुराण-	हिन्दुओं के धर्म-सम्बन्धी आख्यान ग्रन्थ जिनमें सृष्टि, लय और प्राचीन ऋषियों तथा राजाओं आदि के वृत्तांत रहते हैं, ये अठारह हैं: विष्णु, पद्म, ब्रह्म, शिव, भागवत, नारद, मार्कण्डेय, अग्नि, ब्रह्मवैवर्त, लिग, वाराह, स्कंद, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड़, ब्रह्मांड, और भविष्य।
मुनि-	जन-ईश्वर, धर्म और सत्यासत्य आदि का सूक्ष्म विचार करने वाले व्यक्ति।
गाई-	गाया है।

अर्थ

यह समझना चाहिए कि राम नाम समस्त विश्व का तत्व है और सब प्रकार का सुख देने वाला है। राम नाम का बहुत महात्म्य वेदों ने, पुराणों ने, मुनियों ने गाया है।

पद ४३

यति सती साधु सत सयाने,
राम नाम निश दिन बखाने ।
तापस योगी सिद्ध ऋषिवर,
जपते राम-राम सब सुखकर ॥ ४३ ॥

यति-	सन्यासी, त्यागी, योगी
सती-	साध्वी, पतिव्रता
साधु-	महात्मा, संत, सज्जन
संत-	साधु, सन्यासी, धार्मिक पुरुष
सयाने-	बुद्धिमान
निश-	रात्रि
दिन-	सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक का समय
बखाने-	स्तुति, बड़ाई करना
तापस-	तप करने वाला, तपस्वी
योगी-	जिसने योगाभ्यास करके सिद्धि प्राप्त कर ली हो, आत्मज्ञानी।
सिद्ध-	जिसने योग या तप द्वारा अलौकिक सिद्धि प्राप्त की हो, योग को विभूतियाँ दिखाने वाला।

अर्थ

यति, सती, साधु, सन्त और बुद्धिमान व्यक्ति राम नाम की दिन-रात स्तुति करते हैं। तपस्वी, योगी, सिद्ध पुरुष, ऋषि सब सुखदाता राम नाम को जपते हैं।

पद ४४

भावना भक्ति भरे भजनीक,
भजते राम नाम रमणीक।
भजते भक्त भाव भरपूर,
भ्रम भय भेद-भाव से दूर॥ ४४॥

भावना-	चित्त का एक संस्कार जो अनुभव और स्मृति से उत्पन्न होता है।
भक्ति-	श्रद्धा, भक्ति सूत्र के अनुसार ईश्वर में अत्यन्त अनुराग का होना, इसके नौ प्रकार हैं: श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन।
भजनीक-	भजन करने वाले
रमणीक-	मन को रमाने वाला।
भाव-	प्रेम, ईश्वर, देवता आदि के प्रति होनेवाली श्रद्धा या भक्ति
भ्रम-	एक दुःखद मनोविचार जो किसी आनेवाली आपत्ति या बुराई की आशंका से उत्पन्न होता है।
भेद-	शत्रुपक्ष के लोगों को बहका कर अपनी ओर मिलाना अथवा उनमें द्वेष उत्पन्न करना।

अर्थ

भावना और भक्ति से भरे हुए भजन करनेवाले राम नाम को भजते हैं, जो मन को रमाने वाला है। भ्रान्ति, भय और भेदभाव से बचकर और श्रद्धा, प्रेम से परिपूर्ण होकर भक्त भजन करते हैं।

पद ४५

पूर्ण पंडित पुरुष प्रधान,
पावन परम पाठ ही मान।
करते राम-राम जप ध्यान,
सुनते राम अनाहद् तान ॥ ४५ ॥

पूर्ण-	परितृप्त, सिद्ध
पण्डित-	विद्वान्
पुरुष-	मनुष्य, नर
प्रधान-	श्रेष्ठ
ध्यान-	अन्तःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव, चेतन की प्रवृत्ति, बोध करने वाली वृत्ति।
अनाहद्-	शब्द योग में वह शब्द जो अंगूठों से दोनों कानों को बन्द करने से सुनाई देता है।
तान-	अनेक विभाग करके स्वर का खींचना

अर्थ

सिद्ध विद्वान् और श्रेष्ठ नर " राम-राम" को पावन और श्रेष्ठ पाठ मानकर जप और ध्यान करते हैं और राम नाम की अनाहद् तान को सुनते हैं।

पद ४६

इसमें सुरति सुर रमाते,
राम-राम स्वर साध समाते ।
देव-देवीगण देव विधाता,
राम-राम भजते गणत्राता ॥ ४६ ॥

सुरति-	स्मरण, ध्यान
सुर-	देवता, मुनि, ऋषि
रमाते-	लगाते
स्वर-	शब्द
साध-	साधु, महात्मा, योगी, सज्जन
समाते-	प्रवेश कर जाते हैं, रम जाते हैं
देव-	देवता, पूज्य व्यक्ति
देवीगण-	देवियाँ
विधाता-	ब्रह्मा
गणत्राता-	गणेश जी

अर्थ

देवता, ऋषि, मुनि राम नाम में ध्यान लगाते हैं। साधु, महात्मा, योगी, राम शब्द में प्रवेश कर जाते हैं, अर्थात् रम जाते हैं। देवता, देवियां, ब्रह्मा और गणेश जी राम-राम भजते हैं।

पद ४७

राम-राम सुगुणी जन गाते,
स्वर संगीत से राम रिझाते ।
कीर्तन कथा करते विद्वान्,
सार सरस संग साधनवान् ॥ ४७ ॥

सुगुणी-	गुणवान
जन-	मनुष्य
संगीत-	गायन
स्वर-	संगीत में वह शब्द जिसका कोई निश्चित रूप हो और जिसके उतार-चढ़ाव आदि का सुनते ही सहज में अनुमान हो सके।
रिझाना-	किसी को अपने ऊपर प्रसन्न कर लेना, अपना प्रेमी बनाना।
कीर्तन-	भगवान् के नाम, गुण, स्वभाव का गायन
सार-	तत्व
सरस-	रसयुक्त, आनन्दयुक्त
संग-	अनुराग
साधनवान-	साधक
कथा-	धर्म-विषयक व्याख्यान, चर्चा

अर्थ

गुणवान मनुष्य राम-राम गाते हैं और स्वर, संगीत से राम को अपना प्रेमी बनाते हैं, विद्वान् राम नाम का कीर्तन और राम की चर्चा करते हैं। साधकगण राम नाम रूपी रसयुक्त, आनन्दयुक्त तत्व से अनुराग करते हैं।

पद ४८

मोहक मन्त्र अति मधुर,
राम-राम जप ध्यान।
होता तीनों लोक में,
राम नाम गुण गान॥ ४८॥

मोहक-	मनोहर
अति-	अत्यन्त
मधुर-	जिसका स्वाद मधु के समान हो, मीठा, जो सुनने में भला जान पड़े।
जाप-	किसी मन्त्र या वाक्य को बार-बार, धीरे-धीरे या मन-ही-मन दुहराना।
ध्यान-	अंतःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव

अर्थ

राम नाम मनोहर मन्त्र का जप और ध्यान अत्यंत मधुर है। समस्त विश्व में राम नाम का गुणगान होता है।

व्याख्या

जितना बन पड़े श्रीराम का गुणगान करना चाहिए क्योंकि श्रीराम के गुणगान रूपी भजन का अनोखा ही प्रभाव है। श्रीराम का थोड़ा-सा भी भजन मनुष्य को सहज ही भवसागर से तार देता है

प्रकरण ११
अमृतवाणी
पद ४९-५४ – सत्

मन की कल्पनाएँ मिथ्या हैं, मोह मिथ्या है, वाद-विवाद, विरोध, वैर, निंदा, हठ, क्रोध, द्रोह, यह सब मिथ्या हैं, दुर्गण है, दुःखों की खान हैं। राम नाम का जप ही सच्चा है, सत्य निधान है, रचना का सत्यमूलक है। जिस प्रकार बीज से पेड़ और मकड़ी से तार बनता है, उसी प्रकार राम से जग का विस्तार हुआ है। यह कभी न भूलो कि इस विश्व-वृक्ष का मूल राम है। महान् प्रभु राम को साँस-साँस से सिमरो। यह उत्पत्ति, पालना और लय का रूप है; आदि, अंत और मध्य है; शक्ति चेतना और आनन्द का स्वरूप है; अशरण शरण है। हे मन! तू राम नाम का जप बड़े भाव से कर। राम परम पुरुष पालक प्रभु हैं ओर त्रिताप के हर्ता हैं।

पद ४९

मिथ्या मन-कल्पित मत-जाल,
मिथ्या है मोह कुमद बैताल ।
मिथ्या मन मुखिया मनोराज,
सच्चा है राम नाम जप काज ॥ ४९ ॥

मिथ्या-	असत्य, झूठा, व्यर्थ
मन-	अंतःकरण
कल्पित-	जिसकी कल्पना की गई हो, बनावटी
मत-	निश्चित सिद्धान्त, पथ, संप्रदाय
जाल-	एक में ओत-प्रोत बने या गुथे हुए बहुत से तारों या रेशों का समूह।
मोह-	अज्ञान, शरीर या सांसारिक पदार्थों को अपना या सत्य समझने की बुद्धि।
कुमद-	बुरा, अहंकार
बैताल-	वह शव जिस पर भूतों ने अधिकार कर लिया हो।
मुखिया-	अनुसार
मनोराज-	मन की व्यर्थ कल्पना
सच्चा-	यथार्थ
काज-	प्रयोजन

अर्थ

मन गढ़न्त अनेक मतों का समूह व्यर्थ है। अज्ञान और अहंकार का बैताल भी व्यर्थ है। मन की रुचि के अनुसार मन की व्यर्थ की कल्पनाए व्यर्थ हैं। राम नाम का जप करना यथार्थ प्रयोजन है।

पद ५०

मिथ्या है वाद-विवाद विरोध,
मिथ्या है बैर निंदा हठ क्रोध ।
मिथ्या द्रोह दुगुण दुःख खान,
राम नाम जप सत्य निधान ॥ ५० ॥

वाद-	तर्क
विवाद-	वाग्युद्ध
विरोध-	शत्रुता बिगाड़, अनबन
बैर-	शत्रुता, वैमनस्य, द्वेष
निंदा-	दोष कथन
हठ-	किसी बात के लिये अड़ना, आग्रह
क्रोध-	कोप, रोष
दुर्गुण-	दोष, बुराई
दुःख-	मन को कष्ट देने वाली अवस्था, क्लेश, व्यथा, व्याधि
खान-	खदान
सत्य-	यथार्थ, वास्तविक, यथार्थ तत्व
निधान-	आश्रय, निधि

अर्थ

वाद-विवाद करना, किसी से विरोध करना, किसी के प्रति वैर भाव रखना, किसी की निंदा करना, किसी बात का हठ करना, किसी पर क्रोध करना, यह सब ही व्यर्थ है। दूसरे का अहित चिन्तन करना व्यर्थ है। दोषों से ही दुःख की उत्पत्ति होती है, जो व्यर्थ है। राम नाम का जप यथार्थ तत्व है, वास्तविक निधि है।

पद ५१

सत्य मूलक है रचना सारी,
सर्व सत्य प्रभु राम पसारी।
बीज से तरु मकड़ी से तार,
हुआ त्यों राम से जग विस्तार॥ ५१॥

मूलक-	मूल स्वरूप
रचना-	रचने या बनाने की क्रिया या भाव, निर्मित वस्तु
सर्व-	सब
पसारी-	फैलाव, विस्तार, सृष्टि
बीज-	फूलवाले वृक्षों के गर्भांग जिससे वृक्ष अंकुरित होकर उत्पन्न होता है, जड़।
तरु-	वृक्ष
मकड़ी-	आठ पैरों और आठ आँखों वाला एक प्रसिद्ध कीड़ा जिसकी सैकड़ों हजारों जातियाँ होती हैं।
तार-	धातु तंतु
त्यों-	उस प्रकार
जग-	विश्व
विस्तार-	फैलाव

अर्थ

राम की समस्त रचना मूल स्वरूप से सत्य है। राम की बनाई हुई सृष्टि सर्वथा सत्य है। जिस प्रकार बीज से वृक्ष का विस्तार होता है और जिस प्रकार मकड़ी से तार बनता है, उसी प्रकार राम से विश्व का विस्तार हुआ है।

पद ५२

विश्व वृक्ष का राम है मूल,
उसको तू प्राणी कभी न भूल ।
साँस-साँस से सिमर सुजान,
राम-राम प्रभु राम महान् ॥ ५२ ॥

विश्व-	चौदह भुवनों का समूह, समस्त ब्रह्मांड, संसार, जगत
वृक्ष-	पेड़
मूल-	जड़, आदि कारण, उत्पत्ति का हेतु
प्राणो-	प्राणधारी, जीवधारी, मनुष्य
साँस-	श्वास, नाक या मुँह के द्वारा बाहर से हवा खींचकर अन्दर फेफड़ों तक पहुँचाने और उसे फिर बाहर निकालने की क्रिया।
सुजान-	समझदार, चतुर, सज्जन
महान-	श्रेष्ठ

अर्थ

हे मनुष्य! तू इस बात को कभी न भूल कि समस्त ब्रह्मांड की उत्पत्ति का हेतु राम है। हे सज्जन! तू प्रत्येक साँस से सर्वश्रेष्ठ स्वामी श्रीराम का स्मरण कर।

पद ५३

लय उत्पत्ति पालना रूप,
शक्ति चेतना आनन्द स्वरूप ।
आदि अन्त और मध्य है राम,
अशरण-शरण है राम विश्राम ॥ ५३ ॥

लय-	विलीन होना, लोप
उत्पत्ति-	जन्म
पालना-	भरण-पोषण करना,
रूप-	अवस्था, लक्षण
शक्ति-	बल, पराक्रम
चेतना-	ज्ञान, बुद्धि
आनन्द-	एक आन्तरिक अनुभूति जो रसमय होती है और जिसका संबंध आत्मा से होता है।
स्वरूप-	आकार
आदि-	मूलकरण
अन्त-	समाप्ति
मध्य-	किसी पदार्थ के बीच का भाग
अशरण-	जिसे कहीं शरण न हो, अनाथ, निराश्रय
शरण-	आश्रय, रक्षा
विश्राम-	शारीरिक आराम, सुख, मानसिक शान्ति देने-वाला, सहारा देनेवाला।

अर्थ

राम ही से जन्म, राम ही से पालन, राम ही से लय होता है। राम ही बल है, राम ही ज्ञान है, राम ही बुद्धि है, राम ही आनन्द का आकार है। मूल कारण में राम है, मध्य में राम है और अन्त में राम है। जिसका कोई आश्रय नहीं उसको आश्रय देने-वाला, शारीरिक सुख देनेवाला और रक्षा करनेवाला, शान्ति देनेवाला राम ही है।

पद ५४

राम नाम जप भाव से,
मेरे अपने आप ।
परम पुरुष पालक प्रभु,
हर्ता पाप त्रिताप ॥ ५४ ॥

भाव-	प्रेम, विश्वास
परमपुरुष-	श्रीराम
पालक-	स्वामी
हर्ता-	नाश करने वाला
पाप-	वह कर्म जिसका फल इस लोक और परलोक में अशुभ हो, अनिष्ट।
त्रिताप-	तीन प्रकार के ताप दैहिक, दैविक, भौतिक दुःख

अर्थ

हे मन! तू विश्वास और प्रेमपूर्वक राम नाम का जप कर। राम पालनकर्ता स्वामी है। राम पाप, अनिष्ट और तीनों प्रकार के ताप (दैहिक, दैविक और भौतिक दुःखों) का नाश करने वाला है।

प्रकरण १२
अमृतवाणी
पद ५५-६० – असत्

राम नाम के बिना धन-धान्य, सुख, भोग, विहार, सम्मान, साज-सिंगार, ज्ञान, विवेक, ग्रन्थ, पंथ, मत, वाद और विचार, ये सब वृथा हैं, शून्य हैं और थोथे हैं और उस प्रकार है जैसे प्राण के बिना तन अथवा स्वर के बिना राग।

राम नाम के बिना यह मोहिनी माया उसी प्रकार है जिस प्रकार शरीर की छाया जीवन हीन होती है। जगत का जीवन राम है, जग की ज्योति राम ही है।

राम नाम दीपक के बिना जन-मन में अन्धकार रहता है। हे मन! तू राम नाम की सुमाला को फेर।

<u>पद ५५</u>

राम नाम बिना वृथा विहार,
धन-धान्य सुख-भोग पसार ।
वृथा है सब सम्पद सम्मान,
होवे तन यथा रहित प्राण ॥ ५५ ॥

वृथा-	निष्प्रयोजन, व्यर्थ
विहार-	संसार के भोगों का भोगना
धन-	संपत्ति
धान्य-	अन्न मात्र
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
भोग-	सुख या दुःख आदि का अनुभव करना, सुख-विलास
पसार-	विस्तार
सम्पद-	सिद्धि, ऐश्वर्य, वैभव, गौरव
सम्मान-	प्रतिष्ठा
तन-	शरीर
यथा-	जिस प्रकार
राहत-	बिना
प्राण-	शरीर की वह वायु जिससे मनुष्य जीवित रहता है, श्वास।

<u>अर्थ</u>

अन्न, सम्पत्ति, सुख, भोग, बिहार इन सबका विस्तार श्रीराम के बिना निष्प्रयोजन है, व्यर्थ है। जिस प्रकार प्राण के बिना शरीर हो उसी प्रकार राम नाम के बिना सब सिद्धि, ऐश्वर्य, वैभव, गौरव, प्रतिष्ठा निष्प्रयोजन हैं, व्यर्थ हैं।

पद ५६

नाम बिना सब नीरस स्वाद,
ज्यों हो स्वर बिना राग विषाद ।
नाम बिना नहीं सजे सिंगार,
राम नाम है सब रस सार ॥ ५६ ॥

नीरस-	रसहीन, शुष्क, फीका
स्वाद-	रसानुभूति
स्वर-	प्राणी के कंठ से अथवा किसी पदार्थ पर आघात पड़ने के कारण होने वाला शब्द जिसमें कोमलता, उदात्तता, अनुदात्तता आदि गुण हो; संगीत के स्वर।
राग-	किसी विशेष धुन में बैठाये हुए स्वर जिनके उच्चारण से गान होता है।
सजे-	शोभा पाये
विषाद-	दुःख, जड़ या निश्चेष्ट होने का भाव
सिंगार-	श्रृंगार
रस-	तत्व, मन की तरंग
सार-	तत्व, सत्त

अर्थ

जिस प्रकार राग के बिना संगीत का स्वर जड़ या निश्चेष्ट होता है, उसी प्रकार राम नाम के बिना सब शब्द फीके हैं। राम नाम के बिना श्रृंगार शोभा नहीं पाता। समस्त रस का तत्व राम नाम है।

पद ५७

जगत का जीवन जानो राम,
जग की ज्योति जाज्वल्यमान ।
राम नाम बिना मोहिनी माया,
जीवन-हीन यथा तन छाया ॥ ५७ ॥

जगत-	विश्व
जीवन-	प्राणाधर, परमप्रिय
ज्योति-	प्रकाश
जाज्वल्यमान-	प्रज्वलित, जगमग करती
मोहिनी-	धोखे में डालनेवाली
माया-	लक्ष्मी, धन, द्रव्य, ईश्वर की वह कल्पित शक्ति जो उसकी आज्ञा से सब काम करती हुई मानी गई है।
हीन-	रहित
छाया-	किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब या अक्स, किसी वस्तु अथवा बात का सामान्य या क्षीण आभास।

अर्थ

यह जान लो कि विश्व का प्राणाधार और जगमग करती हुई जगत को ज्योति राम ही है।

जिस प्रकार शरीर की छाया प्राणरहित होती है, उसी प्रकार राम नाम के बिना लक्ष्मी, धन, द्रव्य सब धोखे में डालने वाले हैं, अर्थात् व्यर्थ हैं।

पद ५८

सूना समझिये सब संसार,
जहाँ नहीं राम नाम संचार।
सूना जानिए ज्ञान विवेक,
जिसमें राम नाम नहीं एक ॥ ५८ ॥

सूना-	जिसमें या जिस पर कोई न हो; निर्जन
संसार-	जगत
संचार-	चलना, प्रचार
ज्ञान-	वस्तुओं और विषयों का बोध
विवेक-	भली-बुरी बात का ज्ञान, बुद्धि

अर्थ

जहाँ राम नाम का प्रचार नहीं है वहाँ के संसार को निर्जन समझना चाहिए।

जिस ज्ञान या बुद्धि के साथ राम नाम संयुक्त नहीं है, उसे व्यर्थ समझना चाहिए।

पद ५९

सूने ग्रन्थ पन्थ मत पोथे,
बने जो राम नाम बिन थोथे।
राम नाम बिन वाद विचार,
भारी भ्रम का करे प्रचार॥ ५९॥

ग्रन्थ-	बड़ी-बड़ी पुस्तकें
पन्थ-	सम्प्रदाय
मत-	सम्प्रदाय
पोथे-	पुस्तक
थोथे-	खोखले
वाद-	तर्क
भारी-	भीषण, अधिक
भ्रम-	मिथ्या ज्ञान, भ्रान्ति
प्रचार-	किसी वस्तु का निरंतर व्यवहार या उपयोग, विज्ञापन

अर्थ

वह मत, सम्प्रदाय, ग्रन्थ, पुस्तकें खोखले हैं, जिनमें राम नाम नहीं है।

जिस तर्क और जिस विचार में राम नाम नहीं है वह भीषण मिथ्या ज्ञान अथवा भ्रान्ति का विज्ञापन मात्र है।

पद ६०

राम नाम दीपक बिना,
जन-मन में अन्धेर ।
रहे, इससे हे मम मन,
नाम सुमाला फेर ॥ ६० ॥

दीपक-	दिया, प्रकाश करनेवाला
जन-	मनुष्य
मन-	अन्तःकरण की चार वृत्तियों में से एक जिसमें संकल्प, विकल्प होता है।
अन्धेर-	अन्याय, अत्याचार, उपद्रव, अन्धकार, अज्ञान
मम-	मेरा
सुमाला-	सुन्दर, कल्याणकारी माला
फेर-	उंगलियों को माला को गुरियों पर चलाना, जपना

अर्थ

मनुष्य के अन्तःकरण में जब तक राम नाम के दीपक का प्रकाश नहीं होता तब तक अन्याय, अत्याचार, उपद्रव, अज्ञान अन्धकार रहते हैं, इसलिए हे मेरे मन! तू राम नाम की सुन्दर कल्याणकारी माला फेरा कर।

प्रकरण १३
अमृतवाणी
पद ६१-६८ – निरन्तर जप

श्रीराम भज कर नित्य ही अपना उत्तम कर्तव्य, कर्म करिये। सोते-जागते राम नाम का पाठ करिये। इससे कर्म-बंधन जलते हैं। यह चिन्तामणि और पारसमणि जैसा है; सुधा रस का सागर है; ज्ञान, गुण का भंडार है, भवसिंधु के लिए अतुल जहाज है। राम नाम सब तीर्थ स्थान है, जो सब पाप-ताप को और भय, भ्रम की धूल को धो देता है; सूर्य के तेज समान मोह के अन्धकार और अज्ञान को हरता है और महान् आनन्द देता है। हे मन! राम नाम सुमिरन एक तार से कर। यह भाग्य उसे मिलता है, जिसे भगवान देते हैं।

पद ६१

राम-राम भज कर श्रीराम,
करिए नित्य ही उत्तम काम ।
जितने कर्तव्य कर्म कलाप,
करिए राम-राम कर जाप ॥ ६१ ॥

नित्य-	सर्वदा, सदा
उत्तम-	श्रेष्ठ
काम-	कार्य
कर्तव्य-	करणीय कार्य
कर्म-	वह जो किया जाय
कलाप-	समूह
जाप-	किसी मंत्र या वाक्य को बार-बार, धीरे-धीरे या मन-ही-मन में दुहराना।

अर्थ

श्रीराम राम नाम का सुमिरन करके सदा श्रेष्ठ कार्य करना चाहिए। कर्तव्य कर्म राम नाम का जप करके करना चाहिए।

पद ६२

करिए गमनागम के काल,
राम जाप जो करता निहाल।
सोते-जगते सब दिन याम,
जपिए राम-राम अभिराम ॥ ६२ ॥

गमन-	जाना
आगम-	प्रवेश, आना
निहाल-	जो सब प्रकार से संतुष्ट और प्रसन्न हो गया हो
दिन-	आठ पहर या चौबीस घंटे का समय
याम-	तीन घंटे का समय, प्रहर
अभिराम-	मनोहर, प्रिय

अर्थ

आते-जाते समय राम नाम का जप करने से सिद्धि होती है। प्रिय राम नाम का जप सोते-जागते चौबीस घंटे करना चाहिए अथवा तीन घंटे तो करना ही चाहिए।

पद ६३

जपते राम नाम महा माला,
लगता नरक द्वार पै ताला।
जपते राम-राम जप पाठ,
जलते कर्मबन्ध यथा काठ ॥ ६३ ॥

महा-	सर्वश्रेष्ठ
नरक-	पुराणों और धर्मशास्त्रों आदि के अनुसार वह स्थान जहाँ पापी मनुष्यों को आत्मा पाप का फल भोगने के लिए भेजी जाती है; वह स्थान जहाँ बहुत ही अधिक पीड़ा हो।
द्वार-	दरवाजा, मुख
पाठ -	धार्मिक पुस्तक को नियमपूर्वक पढ़ने की क्रिया या भाव
कर्मबन्ध-	कर्म करने का बन्धन, शुभ कर्म करने से अभिमान् और अशुभ कर्म करने से दोष उत्पन्न होते हैं और दोनों जीव के लिये बन्धनकारी हैं।
काठ-	लकड़ी, ईंधन

अर्थ

राम नाम की सर्वश्रेष्ठ माला जपने से नरक के द्वार पर ताला लग जाता है अर्थात् नरक में नहीं जाना पड़ता। दोषों का कुप्रभाव नष्ट होता है। राम नाम का नियमपूर्वक नित्य जप करने से कर्मों का बन्धन लकड़ी की भाँति जल जाता है।

पद ६४

तान जब राम नाम की टूटे,
भांडा भरा अभाग्य भय फूटे।
मनका है राम नाम का ऐसा,
चिन्ता-मणि पारस-मणि जैसा ॥ ६४ ॥

तान टूटे-	जब नाम का अखण्ड जप होने लगे
भांडा-	पात्र
अभाग्य-	प्रारब्धहीनता
भय-	एक दुःखद मनोविचार जो किसी आने वाली आपत्ति या बुराई की आशंका से उत्पन्न होता है।
मनका-	गुरिया, जप
चिन्तामणि-	कल्पिक रत्न जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि उससे जो अभिलाषा की जाय वह पूर्ण कर देता है।
पारस मणि-	कल्पित पत्थर जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि यदि लोहा उससे छुआया जाय तो सोना हो जाता है।

अर्थ

जब राम नाम का अखण्ड जप होने लगता है तब अभाग्य और भय समाप्त हो जाते हैं। श्रीराम नाम का जप समस्त अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाला और उन्नति प्रदान करने वाला है।

पद ६५

राम नाम सुधा-रस सागर,
राम नाम ज्ञान-गुण-आगर ।
राम नाम श्रीराम महाराज,
भव-सिन्धु में है अतुल जहाज ॥ ६५ ॥

सुधा- अमृत, पीयूष
रस- सार, तत्व
ज्ञान- तत्वज्ञान
गुण- निपुणता
आगर- आगार, घर
भवसिन्धु- संसार रूपी समुद्र
अतुल- अनुपम, जिसके समान दूसरा न हो
जहाज- समुद्र में चलने वाली बड़ी नाव

अर्थ

श्रीराम नाम अमृत तत्व का समुद्र है। राम नाम में तत्व ज्ञान और निपुणता बसती है। श्रीराम महाराज का नाम 'राम' संसार-रूपी समुद्र से पार होने के लिए अनुपम नाव है अर्थात् श्रीराम नाम संसार के दुःखों को सहज में दूर कर देता है।

पद ६६

राम नाम सब तीर्थ स्थान,
राम-राम जप परम स्नान ।
धोकर पाप-ताप सब धूल,
कर दे भय-भ्रम को उन्मूल ॥ ६६ ॥

तीर्थ-	वह पवित्र या पुण्य स्थान जहाँ धर्मभाव से लोग यात्रा, पूजा या स्नान आदि के लिये जाते हों।
स्थान-	स्थल
परम-	उत्कृष्ट
स्नान-	अवगाहन, नहाना
पाप-	वह कर्म जिसका फल इस लोक और परलोक में अशुभ हो।
ताप-	कष्ट, दुःख
भय-	एक दुःखद मनोविकार जो किसी आने वाली आपत्ति या बुराई की आशंका से उत्पन्न होता है।
भ्रम-	मिथ्या ज्ञान, संशय
उन्मूल-	समूल नष्ट करने वाला

अर्थ

श्रीराम नाम सब तीर्थों का स्थान है! राम-राम का जप उत्कृष्ट स्नान है अर्थात् श्रीराम नाम का जप समस्त तीर्थों में जाने और स्नान करने का फल प्रदान करता है, समस्त पाप-ताप की धूल को धो देता है, भय और भ्रम को समूल नष्ट कर देता है।

पद ६७

राम जाप रवि-तेज समान,
महा मोह-तम हरे अज्ञान।
राम जाप दे आनन्द महान्,
मिले उसे जिसे दे भगवान्॥ ६७॥

रवि-	सूर्य
तेज-	ज्योति
समान-	तुल्य
महा-	बहुत अधिक, घोर
मोह-	शरीर और सांसारिक पदार्थों को अपना या सत्य समझने की बुद्धि।
तम-	अन्धकार
अज्ञान-	बोध का अभाव, जड़ता, जीवात्मा को त्रिगुण और उनके कार्यों से पृथक न समझने का अविवेक।
आनन्द-	वह आन्तरिक अनुभूति जिसमें बड़ा रस होता है और जिसका सम्बन्ध आत्मा से है।
महान्-	श्रेष्ठ
भगवान्-	ईश्वर, परमेश्वर, विष्णु

अर्थ

राम नाम का जप सूर्य की ज्योति के समान है जो मोह के घोर अंधकार को नष्ट कर देता है। श्रेष्ठ आनन्द प्रदान करता है। यह उसे मिलता है जिसे भगवान् देते हैं।

<u>*पद ६८*</u>

राम नाम को सिमरिये,
राम-राम एक तार ।
परम पाठ पावन परम,
पतित अधम दे तार ॥ ६८ ॥

पतित-	महा अपावन
अधम-	पापी
तारना-	सद्गति देना

<u>अर्थ</u>

हे मन! तू राम नाम का निरन्तर सुमिरन कर। राम नाम का नियमित रूप से जप परम पवित्रता प्रदान करता है और पापी को भी संसार के क्लेश आदि से छुड़ा देता है, अर्थात् सद्गति देता है।

प्रकरण १४
अमृतवाणी
पद ६९-७७ – राम-कृपा

मैं दिन-रात राम-कृपा माँगता हूँ, जिससे सब उत्पात समाप्त होते हैं, अन्त सम्हलता है। राम-कृपा उच्चतर योग, शुभ संयोग, सब साधन मर्म, संयम और सत्य धर्म है। राम नाम को मन में बसाने से और मन में राम धुन करने से रामकृपा अवतरित होती है। जल में मीन के समान राम नाम में लीन होने से भरपूर रामकृपा मिलती है और परम प्रभु भीतर बसते हैं। सज्जन लोग भक्ति-भाव से राम को भजते हैं, जिससे राम-कृपा होती है। कृपा प्रसाद राम की देन है, उससे काल, व्याल, जंजाल मिटते हैं और सुधा-सुख स्वाद मिलता है। राम नाम से यह कृपा प्रसाद मिलता है। यह कल्याण और शान्ति का दाता है और ब्रह्म धाम में पहुँचाता है। राम नाम की औषधि से मृत्यु, जन्म के रोग मिटते हैं और राम नाम अमृत रस को पीकर निर्मल, स्थायी, शान्ति प्राप्त होती है। राम नाम की धुन जब गूंजती है तो भव भय भागते हैं, और राम नाम के ध्यान से सब शुभ जागते हैं।

पद ६९

माँगू मैं राम-कृपा दिन-रात,
राम-कृपा हरे सब उत्पात ।
राम-कृपा लेवे अन्त सम्हाल,
राम प्रभु है जन प्रतिपाल ॥ ६९ ॥

दिन-रात-	सदा
राम-	रामचन्द्रः ईश्वर, भगवान्
कृपा-	अनुग्रह, करुणा
हरे-	नष्ट करे, दूर करे
उत्पात-	कष्ट पहुँचाने वाली आकस्मिक घटना, उपद्रव, अशांति, विघ्न।
अन्त-	अन्तकाल
सम्हाल-	रक्षा
प्रभु-	भगवान्, स्वामी, अधिपति
जन-	अनुचर, दास
प्रतिपाल-	पालन, रक्षक

अर्थ

मैं सदा राम-कृपा का अभिलाषी हूँ। राम-कृपा से सब उपद्रव नष्ट होते हैं। रामकृपा अन्तकाल में रक्षा करती है। दास का पालन-पोषण करने वाला राम भगवान् है।

पद ७०

राम-कृपा है उच्चतर योग,
राम-कृपा है शुभ संयोग ।
राम-कृपा सब साधन मर्म,
राम-कृपा संयम सत्य धर्म ॥ ७० ॥

कृपा-	अनुग्रह
उच्चतर-	ऊँचा
योग-	तप और ध्यान, चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना।
संयोग-	मेल, मिलान, दो या कई बातों का इकट्ठा होना
साधन-	काम को सिद्ध करने की क्रिया
मर्म-	स्वरूप, रहस्य
संयम-	आत्मनिग्रह, हानिकारक या बुरी वस्तुओं से बचने की क्रिया, मनोनिग्रह।
सत्य-	यथार्थ, धर्म की बात
धर्म-	वह कृत्य, आचरण, व्यवहार या विधान जिसका फल शुभ बताया गया है। कल्याणकारी कर्म, पुण्य, सत्कर्म।

अर्थ

राम-कृपा ऊंचा योग है। राम-कृपा शुभ संयोग है, राम-कृपा सब साधन का रहस्य है। राम-कृपा से संयम, सत्य और धर्म का पालन होता है।

<u>पद ७१</u>

राम नाम को मन में बसाना,
सुपथ राम-कृपा का है पाना ।
मन में राम-धुन जब फिरे,
राम-कृपा तब ही अवतरे ॥ ७१ ॥

मन-	प्राणियों में वह शक्ति जिससे उनमें वेदना, संकल्प, इच्छा और विचार आदि होते हैं; अन्तःकरण की चार वृत्तियों में से एक जिसमें संकल्प-विकल्प होता है।
बसाना-	ठिकाना, ठहराना
सुपथ-	उत्तम पथ, अच्छा मार्ग
धुन-	बिना आगा-पीछे सोचे कोई काम करते रहने की प्रवृत्ति, ध्वनि।
अवतरे-	प्रकट हो

<u>अर्थ</u>

राम-कृपा पाने का उत्तम मार्ग है राम नाम को मन में बसाना। जब मन में राम नाम की लगन लगती है, तब राम-कृपा प्रकट होती है।

पद ७२

रहूं मैं नाम में होकर लीन,
जैसे जल में हो मीन अदीन।
राम-कृपा भरपूर मैं पाऊँ,
परम प्रभु को भीतर लाऊँ ॥ ७२ ॥

लीन-	तन्मय, मग्न
नल-	पानी
मीन-	मछली
अदीन-	दीनता रहित, निडर, निर्भय
भरपूर-	परिपूर्ण
परम-	सर्वश्रेष्ठ
भीतर-	हृदय
लाऊँ-	बसाऊँ

अर्थ

मेरी अभिलाषा है कि मैं राम नाम में ऐसा तन्मय रहूँ जैसे जल में मछली निर्भय रहती है। मुझे परिपूर्ण राम-कृपा मिले और मैं सर्वश्रेष्ठ स्वामी को अपने हृदय में बसाऊँ।

पद ७३

भक्ति भाव से भक्त सुजान,
भजते राम-कृपा का निधान ।
राम-कृपा उस जन में आवे,
जिसमें आप ही राम बसावे ॥ ७३ ॥

सुजान-	चतुर, प्रेमी
निधान-	आधार
जन-	दास

अर्थ

प्रेमी भक्त राम नाम को भक्ति-भाव से भजते हैं। वह राम-कृपा उस दास को मिलती है जिसको स्वयं राम देते हैं।

पद ७४

कृपा-प्रसाद है राम की देनी,
काल व्याल जंजाल हर लेनी।
कृपा-प्रसाद सुधा-सुख-स्वाद,
राम नाम दे रहित विवाद॥ ७४॥

प्रसाद-	अनुग्रह, वह पदार्थ जिसे देवता या बड़े लोग प्रसन्न होकर अपने भक्तों या सेवकों को दें।
देनी-	प्रदत्त वस्तु, दी हुई चीज
काल-	मृत्यु
व्याल-	साँप
जंजाल-	संसार के उपद्रव
सुधा-	अमृत
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
स्वाद-	रसानुभूति
रहित विवाद-	निःसंशय

अर्थ

रामकृपा का प्रसाद राम के अनुग्रह से ही मिलता है। वह काल रूपी सर्प और संसार के उपद्रवों को मिटा देता है। राम नाम निःसंशय रामकृपा का प्रसाद प्रदान करता है, जिसका सुख और स्वाद अमृतमय है।

पद ७५

प्रभु प्रसाद शिव शान्ति दाता,
ब्रह्म धाम में आप पहुँचाता ।
प्रभु-प्रसाद पावे वह प्राणी,
राम-राम जपे अमृत वाणी ॥ ७५ ॥

प्रसाद-	अनुग्रह, वह पदार्थ जिसे देवता या बड़े लोग प्रसन्न होकर अपने भक्तों या सेवकों को दें।
शिव-	कल्याण
शान्ति-	वेग, क्षोभ, क्रिया का अभाव; चित्त का ठिकाने होना; स्वस्थता; वासनाओं से छुटकारा।
ब्रह्म-	एकमात्र नित्य चेतन सत्ता जो जगत का कारण और
सत्-	चित् आनन्दस्वरूप है।
धाम-	स्थिति
प्राणी-	मनुष्य
अमृत-	सुधा
वाणी-	वचन

अर्थ

राम का अनुग्रह कल्याण और शान्ति का दाता है और ब्रह्म में स्थिति करता है। जो मनुष्य राम नाम को अमृतवाणी को जपता है उसे राम का अनुग्रह प्राप्त होता है।

पद ७६

औषध राम नाम की खाइये,
मृत्यु-जन्म के रोग मिटाइये ।
राम नाम अमृत रस-पान,
देता अमल अचल निर्वाण ॥ ७६ ॥

औषध-	रोग दूर करने वाली वस्तु
मृत्यु-	शरीर से जीवात्मा का वियोग
जन्म-	उत्पत्ति
रोग-	व्याधि
रस-	खाने की चीज का स्वाद, सार
पान-	पेय, द्रव्य
अमल-	निर्मल, निर्दोष, पापरहित
अचल-	जो न टले, चिरस्थायी
निर्वाण-	शान्ति, मोक्ष

अर्थ

जन्म-मृत्यु की व्याधि को मिटाना हो तो राम नाम की औषधि खाना चाहिए। राम नाम का अमृत रूपी पेय रस निर्मल चिरस्थायी शान्ति प्रदान करता है।

पद ७७

राम-राम धुन गूंज से,
भव भय जाते भाग।
राम नाम धुन ध्यान से,
सब शुभ जाते जाग॥ ७७॥

धुन- ध्वनि

गूँज- प्रतिध्वनि

भव- जन्म-मरण का दुःख

भय- डर, एक दुःखद मनोविकार जो किसी आने वाली आपत्ति या बुराई की आशंका से उत्पन्न होता है।

ध्यान- अन्तःकरण में उपस्थित करने की क्रिया या भाव

शुम- कल्याणकारी, मंगलप्रद

अर्थ

राम नाम की प्रतिध्वनि से जन्म मरण के दुःख का भय नष्ट होता है। राम नाम के जप से और ध्यान से सब प्रकार के कल्याण जाग्रत होते हैं।

प्रकरण १५
अमृतवाणी
पद ७८-८४ – महादान की माँग

मैं, जन्म का भूखा, अपने देव के द्वार पर राम नाम का महादान माँगता हूँ, जो निर्धन का कल्याण करता है। यद्यपि भक्ति, प्रेम, अनुराग से रूखा हूँ, पर भगवान! मेरी टेर यह है कि मैं तेरा हूँ इसलिए चरण पड़े की लाज रखिये और अपना विरद का विचार करके अपने नाम का प्यार दीजिए।

राम नाम ने अधर्मी, अधम, हत्यारे, कपटी, कुटिल, कुकर्मी, धृति धारणाहीन, और जो धर्म-कर्म में अति दीन थे, सबको तार दिया और वे सब विमल हो गये।

राम नाम मुख से बोलने से भीतर के पट खुल जाते हैं, कमल का विकास होता है। वह सब सुख का साधन है।

राम नाम घट में बस जाय, साँस-साँस और नस-नस में उसका रस मिले और स्वप्न में भी उसकी विस्मृति न हो।

राम नाम के मेल से सब काम सध जाते हैं और देव की दया से सदा सुखधाम का महादान मिलता है।

पद ७८-७९

मांगू मैं राम नाम महादान,
करता निर्धन का कल्याण।
देव-द्वार पर जन्म का भूखा,
भक्ति प्रेम अनुसार से रूखा ॥ ७८ ॥
'पर हूँ तेरा'-यह लिए टेर,
चरण पड़े की रखियो मेर।
अपना आप विरद विचार,
दीजिए भगवन्! नाम प्यार ॥ ७९ ॥

महादान-	वे बड़े दान जिनसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है
निर्धन-	धन होना
कल्याण-	मंगल
देव-	देवता
द्वार-	दरवाजा
भूखा-	इच्छुक
प्रेम-	अनुराग
अनुराग-	प्रीति
रूखा-	रहित
मेर (मेल)-	लाज
विरद-	ख्याति, प्रसिद्धि, यज्ञ, कीर्ति
विचार-	भावना
प्यार-	प्रीति

अर्थ

मैं राम नाम के महादान का अभिलाषी हूँ, जो धनहीन का मंगल करता है। मैं अपने देव के द्वार पर जन्म का भिखारी हूं। यद्यपि मुझ में न अनुराग है, न प्रीति है, तथापि "मैं तेरा हूँ" यह टेर लिये हुए शरण आया हूँ। हे भगवन्! अपने विरद का विचार कर मेरी लाज रखिए, और मुझे अपने नाम में प्रीति दीजिए।

व्याख्या

पद ७८-७९ का एक साथ पाठ होना उचित है। इन दो पदों में जापक राम नाम के महादान की अपने परम इष्ट श्रीराम से भिक्षा माँगता है। अत्यन्त दीनभाव से प्रार्थना करता है कि "मैं तेरे द्वारे पर आया है, मैं तेरे अनुग्रह के लिये जन्म से भूखा हूँ तेरी कृपा मुझे मिले कैसे ? मुझ में न दास्य-भाव है, न सख्य-भाव है, न प्रीति है, फिर भी तेरे द्वार पर एक पुकार लेकर आया है कि "मैं तेरा हूँ"। अब तुझे अपने ही यश और कीर्ति का विचार करके मुझ शरणागत पर कृपा करना ही होगी, क्योंकि तू शरणागतवत्सल प्रसिद्ध है। शरणागत् को सदा ही तेरे चरण में शरण मिलती है।[१] पात्र भले ही अयोग्य हो परन्तु यह पुकार सुनते हो कि 'मैं तेरा हैं' आप कृपा किये बिना रह नहीं सकते, यह आपका स्वभाव ही है।[२]

आप मुझे अपने नाम में प्रीति दीजिए।

मेर

मैं तेरा हैं' यह टेर लिए हुए मैं तेरी शरण पड़ा हूँ। तू शरणागत वत्सल अपनी कृपा, अपना आश्रय, अभयदान मुझे प्रदान कर। जब कोई किसी की शरण में आपड़े तो उसे आश्रय देना ही मेल' है अन्यथा 'बेमेल' हो जायगा। जैसे भगवान् और भक्त का 'मेल' है, वैसे ही 'शरणागति' और, आश्रयदान' का मेल है।

श्रीराम नाम जापक अपनी पूर्ण दीनता, हीनता स्वीकार करते हुए और यह टेर लिये हुए कि "मैं तेरा हैं" श्रीराम की शरण में आता है, चरणों में आ पड़ता है। तब इसका 'मेल' यही है कि श्रीराम उस शरणागत से कहें कि 'मैं तुझे अपनाना स्वीकार करता हैं" अथवा "मैं भी तेरा हूँ"। एक ओर से शरणागति हो तो दूसरी ओर से शरणागत वत्सलता होना, यही मेल है। (३)

<u>संदर्भ नोट</u>

१. सखा नीति तुम्ह नीकि विचारी। मम पन सरनागत भयहारी॥
   कोटि विप्र बध लागहि जाहू। आए सरन तजऊं महि ताहू॥
   सनमुख होई जीव मोहि जवहिं। जन्म कोटि अघ नासहि तबहीं॥
   जौं सभीत आवा सरनाई। रखिहऊँ ताहि प्राण की नाई॥
२. राम सुस्वामि कुसेवकु मोसो। निज दिसि देखि दयानिधि पोसो॥
३. 'अब की टेक हमारी,लाज राखो गिरधारी।

पद ८०

राम नाम ने वे भी तारे,
जो थे अधर्मी अधम हत्यारे ।
कपटी कुटिल कुकर्मी अनेक,
तर गये राम नाम ले एक ॥ ८० ॥

तारे-	सद्गति दी
अधर्मी-	दुराचारी
अधम-	दुष्ट
हत्यारे-	घाती
कपटो-	छली, धूर्त
कुटिल-	कुंचित
कुकर्मी-	बुरा काम करने वाला, पापी
अनेक-	बहुत
तर गये-	संसार 'के क्लेश से छूटे गये
एक-	अनुपम, अद्वितीय

अर्थ

राम नाम ने ऐसों को भी सद्गति दी है जो दुराचारी, दुष्ट, हत्यारे थे। अनुपम राम नाम लेकर बहुत से कपटी, कुटिल और पापी भी संसार के क्लेश से छूट गए।

व्याख्या

इस पद का यह अर्थ नहीं है कि जापक राम नाम जपता रहे और साथ साथ यदि अधर्म, हत्या, कपट, कुटिलता, कुकर्म करता रहे तो कोई बुराई नहीं क्यों कि राम नाम से उन सबका दोष मिट जाता है। ऐसा अर्थ लगाना स्वयं को धोखा देना है। इस पद का यह 'अर्थ' नहीं, 'अनर्थ' होगा। इस पद का वास्तविक अर्थ यह है कि

यदि कभी राम नाम जापक के मन में अपना भूत काल का किया हुआ कोई अधर्म, हत्या, कपट, कुटिलता अथवा कुकर्म याद आ जाय और वह निरुत्साह होने लगे तो उस समय के लिये यह पद है।

संतों का अनुभव है कि भूतकाल में की हुई भूल न दोहराने का संकल्प करने और उसको अपने आराध्य देव के सम्मुख निवेदन कर देने से, और उनके नाम का जप करने से, दोष मिट जाता है और उसका कुप्रभाव नहीं भोगना पड़ता। परन्तु प्रत्येक वर्तमान क्षण निर्दोष है उस वर्तमान क्षण में दोष को न दोहराने का नाम-जापक को अधिकार है। अतः प्रत्येक वर्तमान क्षण में जापक को सावधान और सतर्क रहना चाहिये कि वह कोई विवेक विरोधी कार्य न करे, और विवेक विरोधी संकल्प अथवा विचार को अपने मन में टिकने न दे। जब इस भावना से नाम जप होगा तो उसके भूतकाल के अधर्म, कपट, कुकर्म आदि तरने में बाधक नहीं हो सकते।

पद ८१

तर गए धृति धारणा हीन,
धर्म-कर्म में जन अति दीन।
राम-राम श्रीराम जप जाप,
हुए अतुल विमल अपाप ॥ ८१ ॥

धृति	वीरता, धैर्य, स्थिर ध्यान
धारणा-	दृढ़-निश्चय, योग में मन की वह स्थिति जिसमें केवल ब्रह्म का ही ध्यान रहता है।
हीन-	रहित
धर्म-	वह कृत्य आचरण, व्यवहार या विधान जिसका फल शुभ (स्वर्ग या उत्तमलोक की प्राप्ति आदि) बताया गया हो।
जन-	मनुष्य
अति-	बहुत
दीन-	हतोत्साह
अतुल-	अनुपम
विमल-	निर्मल
अपाप-	पापरहित

अर्थ

श्रीराम नाम का जाप करके ऐसे मनुष्य भी तर गये जिनमें न धैर्य था न दृढ़ निश्चय था और जो धर्म-कर्म में बहुत हतोत्साह थे। श्रीराम नाम के जप से निर्मल और पापरहित हो गये।

यहाँ भी वह भाव हैं जो पिछले पद (८०) की व्याख्या में व्यक्त हैं।

पद ८२

राम नाम मन मुख में बोले,
राम नाम भीतर पट खोले।
राम नाम से कमल विकास,
होवें सब साधन सुख-रास ॥ ८२ ॥

मन में बोलना-	मानसिक जाप
मुख में बोलना-	जिह्वा जाप, बैखरी जाप
पट-	पर्दा
कमल-	कमल के आकार का मांसपिंड जो पेट में दाहिनी ओर होता है।
विकास-	खिलना
साधन-	काम को सिद्ध करने की क्रिया, उपासना
सुखरास-	जो सर्वदा सुखमय हो

अर्थ

राम नाम का मानसिक अथवा बेखरी अथवा जिह्वा जाप अन्दर के पट खोल देता है। राम नाम से आन्तरिक कमल खिलता है जो सर्वदा सुखमय साधन है।

पद ८३

राम नाम घट भीतर बसे,
साँस-साँस नस-नस से रसे ।
सपने में भी न बिसरे नाम,
राम-राम श्रीराम राम-राम ॥ ८३ ॥

घट-	हृदय
भीतर-	अन्दर, में
साँस-	श्वास
नस-	शरीर के भीतर तंतुओं का वह बंध या लच्छा जो मांसपेशियों के छोर पर उन्हें दूसरी पेशियों या अस्थि आदि कड़े स्थानों से जोड़ता है।
रसे-	रस रूप में बहे
सपने-	स्वप्न
बिसरे-	विस्मरण हो

अर्थ

राम नाम हृदय में बसे, प्रत्येक सांस से रस रूप में बहे, प्रत्येक नस में रस रूप में बहे। स्वप्न में भी राम नाम का विस्मरण न हो। राम-राम की रटन लगी रहे।

<u>पद ८४</u>

राम नाम के मेल से,
सध जाते सब काम ।
देव-देव देवे यदा,
दान महा सुख धाम ॥ ८४ ॥

मेल-	संयोग
सध जाते-	सिद्ध हो जाते
देव-	देव-देवताओं के देवता, महादेव, भगवान, श्रीराम
यदा-	जब
दान-	कृपा
महा-	सर्वश्रेष्ठ
सुख-	वह अनुकूल और प्रिय वेदना जिसकी सबको अभिलाषा रहती है।
धाम-	पुण्य स्थान

<u>अर्थ</u>

जब श्री राम अपने नाम का दान देते हैं जो सर्वश्रेष्ठ सुख घाम है तब उस राम नाम की संगति से सब काम सिद्ध होते हैं।

<u>व्याख्या</u>

श्री राम के अनुग्रह से राम नाम जाप में प्रवृत्ति होती है और राम नाम के प्रभाव से सब काम सिद्ध होते हैं।

प्रकरण १६
अमृतवाणी
पद ८५-९३ – प्रसाद

जब मेरे कान में राम नाम आया, जब मैंने मुख से राम नाम गाया, जब मैंने मन से राम नाम ध्याया, तब मैंने राम नाम-धन पाया। यह धनराशि घोर अविद्या और विपद का विनाश करती है।

राम प्रेम से संकट, संशय दूर होते हैं। एक बार भी राम नाम का जाप कुबेर के कोष के समान, दीन-दुखिया, दरिद्र और कंगाल को निहाल करता है।

राम नाम से हृदय को भरिये। राम नाम का संचय करिये। अपने घट में राम नाम की मूर्ति को रखिये। अंतर्मुख होकर पूजा करिए। आँखें मूँद कर उस सितार को सुनिए जिससे राम नाम की सुमधुर झंकार निकलती है। उसमें अपने मन का मेल मिलाइये और राम-राम सुर में ही समाए रहिए।

मैं राम-राम जपूँ, राम-राम ध्याऊँ और श्री राम-राम गाऊँ।

अमृतवाणी का नित्य गाना और नाम को मन में रमाना, संकट विपद का निवारण करता है। वह शुभ-मंगलाचार है।

राम-राम के जपने से अमृत का संचार होता है, राम धाम में प्रीति होती है, और सगुण गुण का विस्तार होता है।

"राम" तारक मंत्र है। इसका सुफल अपार है। इसके जाप से निश्चय ही निस्तार होता है।

पद ८५

अहो! मैं राम नाम धन पाया,
कान में राम नाम जब आया।
मुख से राम नाम जब गाया,
मन से राम नाम जब ध्याया ॥ ८५ ॥

अहो-	एक अव्यय जिसका प्रयोग कभी संबोधन की तरह और कभी करुणा, खेद, प्रशंसा, हर्ष या विस्मय सूचित करने के लिये होता है।
धन-	संपत्ति
मुख-	मुंह
गाया-	गान किया
ध्याया-	ध्यान किया

अर्थ

जब मेरे कान में राम नाम आया, जब मैंने मुख से राम नाम का गान किया, और जब मैंने मन से राम नाम का ध्यान किया, तो मुझे राम नाम रूपी जीवन सर्वस्व प्राप्त हुआ है।

व्याख्या

राम नाम के श्रवण, कीर्तन, मनन से राम नाम में ऐसी प्रीति होती है कि राम ही जीवन सर्वस्व बन जाता है।

पद ८६

पाकर राम नाम धन राशी,
घोर अविद्या विपद् विनाशी ।
बढ़ा जब राम प्रेम का पूर,
संकट संशय हो गये दूर ॥ ८६ ॥

राशी-	पुंज
घोर-	भयंकर
अविद्या-	अज्ञान, मोह, माया
विपद्-	विपत्ति, दुःख
विनाशी-	विनाश हो गया
पर-	परिपूर्ण
संकट-	विपत्ति
संशय-	अनिश्चयात्मक ज्ञान, सन्देह, आशंका

अर्थ

राम नाम रूपी संपत्ति का पुंज प्राप्त होते ही भयंकर माया के मोह अज्ञान और दुःखों का विनाश हो गया। जब श्रीराम में अनुराग बढ़कर परिपूर्ण हुआ तब विपत्तियाँ और आशंकाए नष्ट हो गई।

पद ८७

राम नाम जो जपे एक बेर,
उसके भीतर कोष कुबेर ।
दीन दुखिया दरिद्र कंगाल,
राम-राम जप होवे निहाल ॥ ८७ ॥

कोष-	समूह, वेदान्त में निरूपित आत्मा को ढंके रहने वाले अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, ज्ञानमय या आनन्दमय नामक पाँच आवरण जो प्राणियों में होते हैं।
कुबेर-	देवताओं के कोषाध्यक्ष माने जाते हैं
दरिद्र-	निर्धन
कंगाल-	किंचन
निहाल-	जो सब प्रकार से संतुष्ट और प्रसन्न हो गया हो, पूर्णकाम।

अर्थ

श्रीराम नाम का जो एक बार भी जप करता है उसके भीतर कुबेर जैसा कोष स्फुटित होता है। इस प्रकार राम-राम जपने से दीन, दुःखी, दरिद्र, कंगाल सब पूर्ण काम हो जाते हैं।

पद ८८

हृदय राम नाम से भरिए,
संचय राम नाम धन करिए ।
घट में नाम मूर्ति धरिए,
पूजा अन्तर्मुख हो करिए ॥ ८८ ॥

हृदय-	प्रेम, हर्ष, शोक, करुणा, क्रोध आदि मनोविकारों का स्थान। अन्तःकरण। अंतरात्मा।
संचय-	संग्रह करना
धन-	संपत्ति
घट-	हृदय
मूर्ति–	प्रतिमा, आकृति, विग्रह
पूजा-	अर्चना। आराधना, ईश्वर या देवी-देवता के प्रति श्रद्धा और समर्पण का भाव प्रकट करने वाला कार्य।
अन्तर्मुख-	जो बाहर संसार से हटकर भीतर हृदय में ही लीन हो।

अर्थ

अपने हृदय में राम नाम को भरिये। राम नाम रूपी संपत्ति को संचित कीजिये। अपने हृदय में राम नाम की मूर्ति को स्थापित रखिये और बाहरी संसार से हट कर भीतर हृदय में प्रवेश करके पूजा कीजिये।

<u>*पद ८९*</u>

आँखें मूंद के सुनिए सितार,
राम राम सुमधुर झंकार ।
उसमें मन का मेल मिलाओ,
राम-राम सुर में ही समाओ ॥ ८९ ॥

आँखें-	नेत्र
सितार-	एक प्रकार का प्रसिद्ध बाजा जो तारों को उंगली से झंकारने से बजता है।
सुमधुर-	अत्यन्त मीठी
झंकार-	झनझनाहट का शब्द
मेल-	संयोग, समागम
सुर-	ध्वनि
समाओ-	लीन होना

<u>अर्थ</u>

अपने नेत्र बंद करके सितार से निकली हुई जैसी श्री राम नाम की अत्यन्त मधुर झंकार में अपने मन का समागम कीजिये और उस ध्वनि में अपने-आपको लीन कर दीजिये।

पद ९०

जपूँ मैं राम-राम प्रभु राम,
ध्याऊँ मैं राम-राम हरे राम ।
सिमरूँ में राम-राम प्रभु राम,
गाऊँ मैं राम-राम श्रीराम ॥ ९० ॥

अर्थ

मेरा अभीष्ट यह है कि मैं अपने स्वामी का राम नाम जपता रहूँ, श्रीराम का ध्यान करता रहूं, राम का सुमिरन करता रहूं और राम नाम का गान करता रहूँ।

<u>पद ९१</u>

अमृत वाणी का नित्य गाना,
राम-राम मन बीच रमाना।
देता संकट विपद् निवार,
करता शुभ श्री मंगलाचार ॥ ९१ ॥

नित्य-	प्रतिदिन का
मन-	हृदय
बीच-	में
रमाना-	ठहराना, विराजमान रखना, अनुभूति रखना
संकट-	कष्ट, दुःख
विपद्-	विपत्ति
निवार-	निवारण करना, दूर करना
मंगलाचार्य-	शुभ कार्य

<u>अर्थ</u>

अमृतवाणी का प्रतिदिन गाकर पाठ करने से और अपने हृदय में राम-राम की अनुभूति रखने से संकट, विपत्तियाँ दूर होती है और शुभ-कल्याणकारी कार्यों का सम्पादन होता है।

पद ९२

राम नाम जप पाठ से,
हो अमृत संचार ।
राम-धाम में प्रीति हो,
सुगुण-गण का विस्तार ॥ ९२ ॥

संचार-	भरना
धाम-	महिमा, स्वभाव, गुण
प्रीति-	प्रेम
सुगुण गण-	अच्छे या शुभ गुणों का समूह
विस्तार-	फैलाव

अर्थ

श्रीराम नाम के जप से और नियमित मनन से अमृत का संचार होता है, राम के गुण से महिमा और स्वभाव में प्रीति होती है और शुभ गुणों के समूह फैलते है।

<u>पद ९३</u>

तारक मंत्र राम है,
जिसका सुफल अपार ।
इस मन्त्र के जाप से,
निश्चय बने निस्तार ॥ ९३ ॥

तारक-	राम या शिव का षडाक्षर मंत्र. "श्री रामाय नमः", भव-सागर से पार करने वाला।
मंत्र-	गोप्य या रहस्यपूर्ण बात। तंत्र में वे शब्द या वाक्य जिनका जप देवताओं की प्रसन्नता या कामनाओं की सिद्धि के लिये करने का विधान है।
सुफल-	सुन्दर फल
अपार-	असीम, अतिशय
निश्चय–	ऐसी धारणा जिसमें कोई सन्देह न हो। दृढ़-संकल्प
निस्तार-	मोक्ष, उद्धार

अर्थ

राम नाम तारक मंत्र है। भवसागर से पार करने वाला है। उसका कल्याणकारी फल असीम है। है। उसके जाप से निःसंदेह उद्धार होता है

साधना सत्संग की एक झाँकी



जीवन कला

(१)

प्रातः स्मरणीय श्रद्धेय स्वामी सत्यानन्द जी महाराज के (पंचरात्रि) साधना-सत्संग बड़े ही महत्वपूर्ण होते थे। लगातार पाँच रात्रि और चार दिन उनके निकट सम्पर्क में रहने से शेष ३६० दिन के लिए सार्थक जीवन जीने की कला सीखने को मिलती थी। अपनी उस विलक्षण मधुर मुस्कान के साथ जो प्रत्येक के हृदय पर शासन करती थी और अद्भुत प्यार के साथ जो जीवन भर भुलाया नहीं जा सकेगा, पूज्य महाराज जी अपने सदुपदेशों में अति गूढ़ तथ्यों पर प्रकाश डालते थे। मानव जीवन का रहस्य क्या है, लक्ष्य क्या है, लक्ष्य प्राप्ति के लिये अनुभव किया हुआ पथ क्या है? शरणागति का पथ सुगम और सरस होते हुए भी पथिक से कहां भूल

होती है और कहाँ क्या सावधानी रखनी चाहिए? श्री महाराज जी की अनूठी शैली थी। थोड़े-से-थोड़े शब्दों में, गूढ़-से-गूढ़ बात को ऐसे ढंग से समझा देना कि प्रत्येक साधक उसे अपने जीवन में उतार सके।

(२)

१. जिस रात्रि साधना-सत्संग की स्थापना होना निश्चित होता उस दिन सायं सब साधक, जिन्होंने अनुमति प्राप्त कर ली होती, निश्चित स्थान पर आवश्यक वस्तुयें, कपड़े और बिछौना लेकर पहुंच जाते। एक-दूसरे से मिल-मिल कर हर्षित होते। व्यवस्थापक द्वारा जिसको जो स्थान बताया जाता, उसी स्थान पर वह अपना बिछौना जमा देता। ठीक ५ बजे सायं प्रारंभिक सभा होती जिसमें स्वामी जी महाराज के समक्ष सब साधक उपस्थित होते। दिनचर्या की एक समय-सारिणी निर्धारित होती। शिविर का प्रत्येक कार्यक्रम निश्चित समय पर ही होता। सब साधक एक संख्या नाम जप को निश्चित करते और प्रतिदिन उतना जाप कर लिया करते। प्रारंभिक सभा के पश्चात् ६ बजे से ही एक पृथक कमरे में श्री अधिष्ठान के सम्मुख अखण्ड जाप आरंभ हो जाता, जो साधना सत्संग के समापन तक दिन-रात चलता रहता। साधक बारी-बारी से एक घंटा जप करते। सब साधकों की बारियाँ पहिले से निश्चित हो जातीं।

२. अधिकांश साधक प्रातः ४ बजे या उससे पहले उठ बैठते थे। शौच, स्नान, पूजन और व्यायाम ५ बजे तक कर चुकते थे। प्रातः सर्वप्रथम साधकों की सभा ५ बजे से ६ बजे होती, जब श्री महाराज जी के पास बैठकर शान्त होकर सब साधक आधा घण्टे जाप और आधा घंटा कीर्तन करते। ६ से ८ बजे तक साधक अपने-अपने नित्य नियम करते। ६ बजे से पाँच-पाँच या छः-छः साधकों की टोलियाँ (पूर्व-निश्चित क्रम के अनुसार) श्री महाराज जी के पास ध्यान में बैठती

(प्रत्येक टोली १५ मिनिट के लगभग)। उस समय अद्भुत अनुभव हुआ करते। उस समय अन्य सब साधक पाठ स्वाध्याय अथवा जप करते रहते।

३. दोपहर ११ बजे से ११:३० बजे तक श्री स्वामी जी महाराज का प्रवचन होता था जिसमें वह मानव दर्शन और व्यावहारिक जीवन की कला संबंधी अत्यन्त उपयोगी बातों की व्याख्या करते। उसके बाद भोजन होता। १ से ३ बजे तक साधक मौन रहकर विश्राम, स्वाध्याय, और जप करते।

४. तीसरे पहर ३:३० बजे से अमृतवाणी का पाठ और महाराज जी का प्रवचन होता। फिर कुछ समय कीर्तन होता। ४:30 बजे तक यह सभा चलती। उसके बाद साधक बाहर सैर को निकल जाया करते अथवा वहीं स्थान पर चलते-फिरते, हाथ में माला लिये हुए, जाप करते दिखाई देते। *

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"माला भी बड़ी अच्छी चीज है। भाव से फेरने से बड़ा लाभ होता है। इससे जप में दिल बड़ा लगता है। जो कहते हैं हमारा माला में दिल नहीं लगता, उन्होंने कभी माला नहीं फेरी। साधना के लिये माला फेरना बड़ी अच्छी विधि है। माला से नाम का संस्कार अन्दर भर जाता है। एक क्षण के लिये भी नाम में मन लग जाने पर जन्म-जन्मान्तर के मैल धुल जाते हैं। और जप करते समय कभी-न-कभी मन लग ही जाता है। माला काम-काज में लगे आदमियों के लिये बड़ा अवलम्बन है। जब नींद रात को खुल जाए तो उस समय माला फेरने लग जायें। इससे बड़ा लाभ होगा। माला एक औषधि भी है। हर वक्त मन से काम करना कठिन होता है, उस समय माला फेरने से थकान नहीं होती। भोजन के फौरन उपरान्त माला फेरना पाचन को भी ठीक करता है। राम नाम से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं। यह कमाल का वशीकरण मन्त्र है। माला ताबीज का भी काम देती है। यह असुरों से रक्षा करती है। मैं वहम की चीजों को नहीं मानता। सीधी-साधी चीज

पेश करता हूँ। माला संकटों का भी निवारण करती है, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। न्याय-संगत प्रार्थना होनी चाहिये। अपराध, पाप आदि की क्षमा के लिए भी प्रार्थना करनी चाहिये। माला संकट-हारिणी, पाप-नाशिनी, और सुख-दायिनी है। माला से हस्त-लाघव पैदा होता है और उंगलियों में विद्युत् शक्ति पैदा हो जाती है। यह शरीर की विद्युत् को जाग्रत करती है। अंगुलियों को कहीं भी फेरो इससे लाभ होगा। इससे रोग-निवारण की शक्ति भी आ जाती है।"

५. सायं ६ से ७ बजे की सभा में सामूहिक ध्यान के बाद दो एक कीर्तन होते। सात बजे से साढ़े सात बजे तक प्रति दिवस बारी-बारी से पूज्य गुरुदेव साधकों के कमरे में जाते और उनके साथ बैठकर उन्हें आनन्द विभोर कर देते। उस आनन्द को शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है। जिन्हें वह सौभाग्य प्राप्त हुआ है वे आज भी इन क्षणों का स्मरण कर आनन्द लूटते हैं:-

इस अनुपम आनन्द की, जो कोई पूछे बात।
सो गूंगा गुड़ खाइके, कहे कौन मुख स्वाद॥

फिर ७:३० बजे भोजन। उसके बाद ८:३० बजे की सभा में १०-१५ मिनट मनोरंजन (हंसने-हंसाने) के लिये नियत रहते और फिर आगामी २४ घंटों के लिये 'वृत्ती' साधक स्वेच्छापूर्वक नियुक्त हो जाते। फिर भजन कीर्तन होता, जिसमें साधक विभोर हो जाते। सोने के पूर्व सब जप करते।

६. साधना-सत्संग में सब साधक दिन-रात नाम जाप और ध्यान की लौ लगाये रहते। प्रवचन, कीर्तन, भजन, स्वाध्याय और सत्चर्चा से समस्त वायुमण्डल प्रभावित रहता। स्वच्छता, अनुशासन, पारस्परिक स्नेह और मधुरता मूर्तिमान दिखाई देते। धनी-मानी और ऊंचे पदों पर आसीन साधक भी सत्संग-शिविर में अन्य सभी की भांति अत्यन्त सरलता से रहते। सबका भोजन एक ही रसोई में बनता, नाश्ते में दलिया दूध और दोपहर व सायं के भोजन में दाल, रोटी, सब्जी,

चावल। सादा होते हुए भी भोजन इतना स्वादिष्ट होता कि समृद्ध साधक भी बड़ी रुचि से पाते। सब साधक और श्री महाराज जी साथ-साथ बैठकर भोजन करते। प्रार्थना करके एकसाथ भोजन आरंभ होता और सब एकसाथ ही उठते। प्रत्येक साधक आवश्यक मात्रा में ही प्रत्येक वस्तु लेता। दोबारा कुछ नहीं लेने का और थाली में जूठा नहीं छोड़ने का नियम था। लगभग २० मिनट में भोजन होता, उस बीच में विनोद भी चलता, हँसना-हँसाना होता, जिसमें श्री महाराज जी भी सम्मिलित हो जाया करते। प्रत्येक साधक निश्चित दिनचर्या का पालन करता।

प्रत्येक कार्य निश्चित समय पर सुचारु रूप से होता। एक-दूसरे को सहयोग देते। जिस दिन जो साधक वृती होते वह समस्त व्यवस्था करते। कहीं भी आलस्य, प्रसाद या अनावश्यक निद्रा का नाम नहीं। खाली समय में अथवा विश्राम करते हुए (रामचरित मानस, गीता, महाराज जी की वाल्मीकि रामायण, या भक्ति प्रकाश पढ़ते हुए) दिखते और आपस में बातचीत भी होती तो साधना संबंधी। हास्य-विनोद मनोरंजन भी होता तो सभ्य और परनिन्दारहित। शास्त्रों में अनेकानेक प्रसंग हैं जिनमें विनोद हैं, जो मनोरंजक हैं और हँसाते हैं।

७. पूज्य महाराज जी अपने प्रवचनों में मुख्यतः नाम जप और रामकृपा में विश्वास की महिमा का निरूपण करते। साथ ही जीवन के उन मौलिक तत्वों की व्यावहारिक व्याख्या किया करते जिनको साधक सदा अपने सामने रखे और उनके अनुसार अपने व्यवहारिक जीवन का निर्माण करे। राम की सर्वव्यापकता, अनन्तता, सर्वज्ञता सर्वसमर्थता असीम दयालुता, आदि महिमा पर विशेष बल देते।

१. "नाम को बसाओ। जहाँ नाम है वहाँ नामी है। जहाँ राम है वहां रामकृपा है। जहाँ राम है वहाँ सर्वतोमुखी कल्याण है। नाम का जाप विश्वास

पूर्वक हो। जिसने राम का आश्रय पकड़ा वह अन्य का सहारा नहीं ढूंढता फिरता। नाम का आश्रय लेकर निश्चित हो जाओ।

२. अपने समस्त जीवन को साधना बनाओ।"

गीता में स्थितिप्रज्ञ के लक्षण (अ० २ श्लो० ५३ से ७२) और भक्त के लक्षण (अ० १२ श्लो० १ से २०) के अध्ययन और मनन के लिये कहा करते। साधक का व्यावहारिक जीवन कैसा हो उसके आचार, विचार और व्यवहार कैसे हो वह सब बड़े प्यार से परन्तु दृढ़ शब्दों में समझाया करते।

८. इस प्रकार पाँच रात्रि और चार दिन का साधना-सत्संग पांचवें दिन प्रातः सामूहिक ध्यान के बाद आरती होकर समापन होता था। पूज्य महाराज जी मंगल कामनाएँ श्रीराम के चरणों में निवेदन करते फिर अपने हाथ से प्रसाद का वितरण करते हुए एक-एक साधक को हृदय से चिपटाते। उस समय वातावरण करुणा से उमड़ पड़ता। साधना सत्संग से लौट जाना सबको अरुचिकर प्रतीत होता था। फिर भी सब साधक यह गाते-गाते एक-दूसरे से विदा लेतेः-

"मुझे मिले मेरे राम! मेला सज्जनों का ।
बार-बार मिले राम! मेला सज्जनों का ।"

९. साधना सत्संग में साधक की जो रहनी होती और जो साधना वह करता और श्री महाराज जी के जो उपदेश होते उन सबका साररूप यही होता कि साधक एक ऐसे पथ पर आ खड़ा हो गया है जो स्पष्ट है और जिस पर चलने से सभी अभीष्ट सिद्ध हो सकते हैं; साधक अपने जीवन को सफल, सार्थक और सरस कर सकता है, और अपने लक्ष्य पर पहुँच सकता है और उस पथ पर आगे बढ़ना या न बढ़ना, और बढ़ना तो दृढ़तापूर्वक बढ़ते रहना या लड़खड़ाते रहना, इसमें प्रत्येक साधक स्वाधीन है।

उस प्रदर्शित पथ के १० प्रमुख अंगों का वर्णन करने से पूर्व, आइये, अपने **जीवन का अध्ययन** करें।

मानव जीवन का अध्ययन

(३)

१. **जीवन के अध्ययन** से यह निर्विवाद स्पष्ट होता है कि **मानव के चार अभीष्ट** हैं:-

(१) मानव अपने शरीर को कायम रखना चाहता है। शरीर रहे और दीर्घकाल तक रहे। इसके लिये उसे अरोग्यता, भोजन और विश्राम यह तीनों अनिवार्य रूप से चाहिए। यह मानव की जन्मजात "आवश्यकताएँ" हैं। यह आवश्यकताएं सभी की है, और सभी को अभीष्ट हैं। बालक, युवा, वृद्ध, धनी, निर्धन, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी, कोई भी हो।

(२) इन आवश्यकताओं की उपलब्धि के बाद मानव की इच्छाएँ होती हैं कि स्वादिष्ट भोजन मिले जिनके खाने से सुख मिलता है, कोमल वस्तुएँ मिले जिनके स्पर्श से सुख मिलता है, सुन्दर वस्तुएँ और व्यक्ति मिलें जिनको देखने से सुख मिलता है, मधुर शब्द सुनें जिनको सुनने से सुख मिलता है, और सुगन्धित वस्तुएँ मिले, जिनको सूंघने से सुख मिलता है।

दूसरे शब्दों में जिह्वा को रस, त्वचा को स्पर्श, नेत्रों को रूप, कानों को शब्द और नासिका को गंध के सुख की इच्छाएं होती हैं। वास्तव में यह इच्छाएँ मन में होती हैं जो एक-एक इन्द्रियों के द्वारा एक-एक विषय को पाने की इच्छा करता है।

एक-एक विषय को एक-एक इन्द्रिय द्वारा इच्छा होती है। इच्छाएं उन 'आवश्यकताओं' से भिन्न हैं जो पूरे शरीर की होती है।

इन इच्छाओं के अतिरिक्त यश कीर्ति और प्रशंसा की इच्छाएं भी मन में रहती हैं। इन इच्छाओं की बहुत निन्दा सुनने में आती है, परन्तु गंभीरता से विचार करने पर यह स्पष्ट होता है कि यह इच्छाएं भी स्वाभाविक अर्थात् प्राकृतिक है। कारण कि मन और इन्द्रिय जो मानव को मिले हैं उनका स्वभाव ही है कि अपने-अपने विषय के सुख की इच्छाएं हों।

उन इच्छाओं की पूर्ति के लिये मानव को क्रिया शक्ति भी मिली है। मानव को इन्द्रियों के विषयों से सुख मिलता है अतः मानव को "सुख" भी अभीष्ट है। "सुख" क्रिया साध्य है। जो जितना परिश्रम करता है उसे उतने अधिक सुख देने वाले पदार्थ प्राप्त होते हैं।

(३) यह सभी का अनुभव है और सर्वथा निर्विवाद है कि मानव को शान्ति चाहिए। शान्ति का अर्थ है अशान्ति का अभाव शान्ति के जितने कारण हैं उन सबको तीन शब्दों में बटोरा जा सकता है, असन्तोष, चिन्ता और भय। मानव यह चाहता है कि उसके मन में असन्तोष, चिन्ता और भय न हो। अतः मानव को "शान्ति" भी अभीष्ट है।

(४) मानव स्वभावतः यह चाहता है कि उसका कोई अपना हो ओर वह स्वयं किसी का हो जाय। दूसरे शब्दों में वह प्रीति चाहता है। प्रीति में ही रस मिलता है और आनन्द की अनुभूति होती है। एक राम ही है जो हमारा अपना हो सकता है और हम जिसके हो सकते हैं। अतः राम-प्रीति मानव की सर्वोच्च और उत्कृष्ट मांग है। "आनन्द" मानव का लक्ष्य है।

सुख का सम्बन्ध शरीर से, शान्ति का मन से, और आनन्द का आत्मा से है।

उपयुक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि मानव के स्वभावतः चार अभीष्ट हैं जिनमें उस सबका समावेश है जो वह चाहता रहता है :-

(१) जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ,

(२) इन्द्रियों को सुख

(३) मन को शान्ति,

(४) आत्मा को आनन्द (रस)।

यहीं पर यह गूढ़ रहस्य समझ लेना चाहिए कि इन्द्रियों का सुख और उसकी कामनाएं तभी तक शुद्ध हैं जब तक वह जीवन की आवश्यकताओं, मानसिक शान्ति और आत्मिक आनन्द में बाधक नहीं है। अन्यथा 'सुख' प्रमाद ही है और वैसा सुख निन्दनीय है।

२. अब यह देखना है कि **मानव के कर्तव्य** क्या है। कर्तव्य भी चार हैं:-

(१) शरीर को स्वस्थ रखना। यदि अरोग्यता, भोजन और विश्राम अर्थात् शरीर की प्राथमिक आवश्यकताएं उपलब्ध न होंगी तो साधना (सुख शान्ति और आनन्द की प्राप्ति) सुचारू रूप से नहीं होगी।

(२) श्रीराम से अपने संबंध की अनुभूति और श्रीराम में अनुराग बढ़ाते रहना और सतत् उनके सान्निध्य की स्मृति रखना मानव शरीर पाकर सुमिरन करना प्रथम कर्तव्य है, यह न किया तो जीवन व्यर्थ ही गया।

(३) श्रीराम ने जो कार्य दिया है उसको पूरी योग्यता और सामर्थ्य लगा कर निपुणता से करना। प्रत्येक मानव को जो वर्तमान कार्य मिला है वह श्रीराम की आज्ञा से मिला है जैसे कोई डाक्टर है, कोई जज है, कोई इंजीनियर है, कोई वकील है, कोई प्रशासक है, कोई किसान है, कोई मजदूर है, कोई व्यापारी है इत्यादि। प्रत्येक का वर्तमान कर्तव्य "राम काज" है। इसे 'स्वधर्म' भी कहते हैं।

(४) मन, वचन और कर्म से परहित करना। सेवा मानव का विशेष कर्तव्य है।

संक्षेप में मानव के कर्तव्यों को चार शब्दों में कह सकते हैं:-

(१) स्वास्थ्य

(२) सुमिरन

(३) स्वधर्म

(४) सेवा।

यहीं पर दूसरा गूढ़ तत्व भी समझ लेना है कि इन चार कर्तव्यों के सम्पादन के अतिरिक्त जो भी किया जाता है या विचार किया जाता है वह सब प्रमाद ही है।

३. उपरोक्त कर्तव्यों के सम्पादन के लिये और उपरोक्त जो चारों अभीष्ट है उन सबके लिये प्रत्येक मानव को साधन रूप शरीर के साथ क्रिया-शक्ति, विवेक-शक्ति और भाव-शक्ति जन्मजात श्रीराम की अहेतुकी कृपा से मिली हुई हैं। यह उनका मंगलमय विधान है। यह मानव पर है कि वह शरीर का और इन तीन शक्तियों का सदुपयोग करे अथवा दुरुपयोग।

(१) मानव शरीर एक विलक्षण रचना है जिसके आठ भाग हैं। पांच तत्व, (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी) मन, बुद्धि और अहंकार। पांच तत्वों से ही पांच कर्मेन्द्रियाँ (वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ, गुदा) और पांच ज्ञानेन्द्रियां (श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा और घ्राण) उत्पन्न है। इन दस इन्द्रियों के द्वारा बुद्धि क्रिया-शक्ति का संचालन करती है।

जब विवेक के प्रकाश में बुद्धि कार्य करती है तब क्रिया-शक्ति का सदुपयोग होता है। क्रिया-शक्ति के सदुपयोग से कर्तव्य परायणता होती है (चारों कर्तव्यों का संपादन) और साथ ही शुद्ध इन्द्रिय सुख का भोग भी होता है। परन्तु बुद्धि जब विवेक का अनादर करती है तब क्रिया-शक्ति का दुरुपयोग होता है और इन्द्रियों द्वारा जो कुछ होता है और जो कुछ सुख प्रतीत होता है वास्तव में वह सब प्रमाद ही है।

(२) विवेक-शक्ति मानव की विशेषता है और सबसे महत्व पूर्ण है। विवेक और बुद्धि का सम्बन्ध हमने ऊपर देखा है। अब विवेक और मन के सम्बन्ध पर विचार करें। मन में ही अभिमान कामना और आसक्ति रहती है, जिनके कारण असन्तोष चिन्ता और भय मन में रहते हैं। अशान्ति के यही तीन मुख्य कारण है। जब विवेक का प्रकाश और प्रभाव मन पर रहता है तब इन तीनों का अभाव रहता है। इन तीनों के अभाव का नाम ही शान्ति है इसके विपरीत, जब मन पर विवेक का प्रभाव नहीं रहता अर्थात जब वह विवेक का अनादर करता है तब यह तीनों मूल विकार उस पर अधिकार जमा लेते हैं और मन अशान्त हो जाता है। अतः विवेक के आदर से ही सन्तोष, निश्चिन्ता और निर्भयता होती है। "शान्ति" क्रिया साध्य नहीं है। विवेक का आदर ही शान्ति का रहस्य है।

(३) विवेक-शक्ति का जब अहंकार पर प्रभाव होता है तब उसे सत्-असत्, नित्य-अनित्य, के भेद का ज्ञान होता है, तभी यह ज्ञान होता है कि "मैं" की "यह" (संसार अर्थात् शरीर, वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति) से आत्मीयता नहीं है; "मैं" और "शरीर" का तादात्म्य मानना भूल है, और तभी राम में प्रीति जागती है; वह मेरा है और मैं उसका हूँ यह अनुभूति होती है। परन्तु जब अहंकार विवेक का अनादर करता है तो संसार (वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति) में आसक्ति बढ़ती है। भाव-शक्ति मानव को महान प्रसाद के रूप में मिली है इसके सदुपयोग (भक्ति) से ही श्रीराम में अनुराग बढ़ता है और राम से आत्मीयता का ज्ञान होता है।

गंभीरता पूर्वक विचार करने से स्पष्ट होता है कि शान्ति की प्राप्ति और सुरक्षा विवेक के आदर में निहित है। वह क्रिया साध्य नहीं है और न वह किसी विशेष वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति पर निर्भर है।

इसी प्रकार आत्मिक आनन्द भी (जो राम के सान्निध्य की स्मृति, राम की महिमा में विश्वास, राम-कृपा का अवलम्बन और राम से संबंध की अनुभूति में निहित हैं) किसी विशेष वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति पर निर्भर नहीं है, न वह क्रिया साध्य है।

भाव-शक्ति का सदुपयोग इन चारों की साधना है।

जप, ध्यान, कीर्तन, स्वाध्याय, सत्संग पूजन, अर्चन आदि के माध्यम से भाव-शक्ति के सदुपयोग में विशेष सहायता मिलती है।

(देखिये 'राम-कृपा अवतरण' और 'नमस्कार सप्तक' की व्याख्या)।

४. उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि :-

(क) हमें और सभी को चार अभीष्ट है:-

१. जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएं
२. इन्द्रियों को सुख
३. मन को शान्ति
४. आत्मा को आनन्द

(ख) हमारे और सभी के कर्तव्य है :-

१. स्वास्थ्य रक्षा
२. सुमिरन
३. स्वधर्म
४. सेवा

(ग) हमें और सभी को साधन रूप से मिले हुए हैं :-

१. मानव शरीर

२. क्रिया-शक्ति

३. विवेक-शक्ति

४. भाव-शक्ति

उपरोक्त बारह शब्दों में **मानव दर्शन का सार** है।

५. अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है कि इन्द्रियों के सुख यद्यपि प्राकृतिक है और उनको चाहना स्वाभाविक है अतः उनको प्राप्त करना भी चाहिए, किन्तु उसी सीमा तक जब तक वह मानसिक शान्ति और आत्मिक आनन्द में बाधक न हो और विवेक विरुद्ध न हो। भगवान ने संसार में भांति भांति के सुन्दर पदार्थ बनाये ही इसलिये है कि उस लीलामय के कौतुक की मौज में मानव भी सम्मिलित हो। परन्तु मानव से भूल यह होती है कि वह इन्द्रियों के सुख के पीछे इतना दौड़ता है कि वह मानसिक शान्ति (सन्तोष, निश्चिन्तता और निर्भयता) की अपेक्षा करने लगता है और यह भी समझने लगता है कि शान्ति भी उसे इन्द्रियों के सुख में अर्थात् वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों में मिलेगी। दूसरी भयंकर भूल यह होती है कि अभीष्टों के क्रम को उल्टा कर रखते हैं। पहले सुख चाहते हैं; फिर 'शान्ति' और तब कहीं 'आनन्द' का नम्बर आता है। साधक को यहां बड़ी सतर्कता और सावधानी चाहिए। 'शान्ति' और 'आनन्द' को सर्वोपरि रखना है।

जीवन कला के सार तत्व – १

(४)

साधना सत्संग में जो साधक की रहनी होती थी और श्री महाराज जी के जो उपदेश होते थे, उनसे दस सार तत्व निकलते हैं। इन दस तत्वों में जीवन की वह

सम्पूर्ण कला निहित है, जिनसे साधक के साधन रूप शरीर और शक्तियों का सदुपयोग हो, चारों कर्तव्यों का पालन हो और चारों अभीष्ट की प्राप्ति हो।

१. नियमितता

साधक को विचार पूर्वक एक समय सारिणी बनना चाहिए। इसका दृढ़ता से पालन हो तो कर्तव्य परायणता में बड़ी सुगमता आती है, सब कार्य सुचारू रूप से होता है और प्रसन्नता का अनुभव होता है। विद्यार्थी साधक तो अपने अध्ययन के समय के अनुसार सारिणी बनायें। गृहस्थ साधक दो भाग में बना सकते हैं, जैसे सायं ७ से प्रातः ७ बजे तक (जिसमें राम नाम प्रधान हो)। और प्रातः ७ बजे से सायं ७ बजे तक (जिसमें राम काज प्रधान हो)।*

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"जीवन नियम के अनुसार चलाना सीखना चाहिये। अक्सर कर्मचारी कचहरी में समय पर जाते हैं किन्तु इतवार को सब काम बेकायदा हो जाते हैं, यह बुरी बात है। सोने खाने में भी नियम होना चाहिये। समय पर सोने खाने वाले के शारीरिक अंग भी नियम पूर्वक समय पर काम करने लगते हैं। समय पर भूख लगने लगती है। समय पर नींद खुलने लगती है। स्वास्थ्य भी सुन्दर बनते हैं।"

२. राम नाम

रात्रि में (सायं से प्रातः तक) जप, ध्यान, कीर्तन, स्वाध्याय आदि करना चाहिए। इनकी महिमा का वर्णन पूर्व पृष्ठों में है।

३. सुमिरन (सान्निध्य, अवलम्ब और प्रीति)

(१) राम सर्वदा है, राम सर्वत्र है, मेरे हृदय में बसा है, रोम रोम में रमा हैं, कण-कण अणु-अणु में व्याप्त है, इस स्मृति में सान्निध्य रहता है।

(२) राम सर्वसमर्थ, सर्व दयालु, सर्वज्ञ है, राम की महिमा में विश्वास दृढ़ रखना चाहिए और राम का ही अवलम्ब रखना चाहिये।

(३) "मैं राम का हूँ, मेरा राम है" इस संबंध की सतत् अनुभूति रहने से राम में अनुराग बढ़ता रहता है। स्मृति, विश्वास और अनुभूति, क्रिया साध्य नहीं है यह तो भावना से ही हृदयांकित होते हैं अतः सब काम काज करते में भी सन्निधि, अवलम्ब और प्रीति हृदय में दिन भर भी रह सकते हैं।

४. संयम

(१) वर्तमान स्वास्थ्य और स्थिति के अनुकूल प्रतिदिन व्यायाम (सूर्य नमस्कार, हल्का प्राणायाम, खेल, भ्रमण आदि नियम पूर्वक करना चाहिये।

(२) भोजन सन्तुलित, सुपाच्य और परिमित मात्रा में होना चाहिये। निश्चित समय पर पाना चाहिए और भोजन करते समय प्रसन्नता दायक चर्चा होनी चाहिये। जो नहीं खाना चाहिये उसकी ओर साधक का मन न चले। *

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"भोजन सादा होना चाहिए। मसालों से पौष्टिकता नहीं आती। चाट आदि भोजन में जरूरी नहीं। आहार अल्प हो, अधिक वजन करने के लिये लोग अधिक भोजन करते हैं। किन्तु आध्यात्मिक सत्संगी को नियमित भोजन करना चाहिये.....

किसी आदमी तथा अन्न की निन्दा कभी नहीं करनी चाहिये। अन्न सामने आने पर चाहे जैसा हो ठुकराना नहीं चाहिये और न छोड़ना चाहिये। चाहे कैसा भी भोजन हो, खराब हो या अच्छा हो, उसकी प्रशंसा करके खाना चाहिये, 'बहुत अच्छा है' 'बहुत अच्छा है', ऐसा कह कर खाना चाहिये। ऐसा करने से विशेषता आ गई। भोजन धीरे-धीरे चबा कर खाना चाहिये। अधिक शीघ्र भोजन करने से

मनुष्य अपने आपको धोखा देता है, वह अपने साथ, अपने शरीर के साथ, अपनी बुद्धि, दाँत, आंतों और शरीर के साथ, अन्याय करता है।

भोजन सामने आने पर क्रोध नहीं करना चाहिये। क्रोध भोजन में विष उत्पन्न करता है। बहुत खाने में तो कुछ रक्खा नहीं होता इसी तरह ज्यादा बोलना भी वाणी को कमज़ोर ही करता है। थोड़ा सुनो,थोड़ा बोलो,यह रीति है। जाप का,ध्यान का अभ्यास ज़्यादा से ज्यादा करो। सुनने की बातें भी थोड़ी सुनो।"

(३) जहां नहीं जाना चाहिये उस ओर साधक के पांव न उठे। जो नहीं करना चाहिये उसे करने का विचार भी मन में न आने पावे। प्रलोभन के आक्रमण से साधक अपने को केवल बचावे ही नहीं बल्कि सदा बचने के लिये सावधान और सतर्क रहे।

जब चलती मोटर के सामने कोई खाई या गड्ढा आता है तो मोटर ब्रेक लगाना चाहिए, भले ही धक्का लगे। ऐसा न किया तो मोटर और चालक दोनों को हानि पहुंचेगी। वैसे ही अशुद्ध प्रलोभन से अपने आपको बचाते समय कैसा भी धक्का लगे और वेदना हो कि मिलती वस्तु हाथ से जा रही है, परन्तु यदि उस समय विवेक के प्रकाश में बुद्धि दृष्टि के प्रभाव से, इन्द्रिय दृष्टि के प्रकोप को दबा दिया तो समझो बड़ी भारी विजय प्राप्त हुई।

राम भजन के लिए मन को पवित्र और शरीर का स्वस्थ होना परमावश्यक है। संयम मानव का श्रृंगार है। जीवन में जितना संयम होता है उतना मानव प्रखर होता है। *

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"मैं अपने आपको अच्छा बना लूँ। जब तक मैला धब्बा मेरे दुपट्टे पर है दूसरे के धब्बे को क्या देखें। जो अपने अन्तःकरण को देखते हैं उनका कल्याण हो जाता

है, पाप ताप उनके दूर हो जाते हैं। चरित्र निर्माण करना बड़ी ऊँची बात है। यह धर्म से होता है, राजनीति से नहीं। द्वेष की चादर फेंक कर देखो फिर आत्मा बोलता हुआ सुनाई देगा, तुम्हारा पथ प्रदर्शन अपना आत्मा करने लगेगा। चरित्र निर्माण के साथ साधना करते रहने से व्यक्ति बढ़ता जाता है। चरित्रवान् को जो सुख व शान्ति मिलती है, वह दूसरे को नहीं प्राप्त होती।"

५. राम काज

राम ने जो वर्तमान कर्तव्य कर्म दिया है उसे दिन के कार्यक्रम में प्रमुख स्थान देना चाहिए, पूरी योग्यता लगाकर बड़ी लगन से, प्रसन्नता से उत्साहपूर्वक करना चाहिये। अच्छे-से-अच्छे, निपुणता से राम काज हो यह उद्देश्य रहना चाहिये। राम ने किसी को डाक्टर बनाया, किसी को जज, किसी को इंजीनियर, किसी को अध्यापक, किसी को वकील आदि। उनकी विराट लीला में सब पात्र हैं। कोई कार्य बड़ा या छोटा नहीं। राम को रिझाने के लिये राम का दिया हुआ कार्य करना और उसी साधन सामग्री से करना जो राम से उपलब्ध हुई है, अर्थात् वर्तमान परिस्थिति का सदुपयोग करते हुए, राम की दी हुई बुद्धि और सामर्थ्य (जो सबको सीमित मात्रा में ही मिली है) का सदुपयोग करके, कर्तव्य निभाते जाना, सतत् और अथक्, यही वास्तविक साधना है। अपनी योग्यता को बढ़ाते रहने का प्रयास होना चाहिए जिससे राम के कार्य को सुन्दर से सुन्दर ढंग से किया जा सके। इससे राम रीझते हैं। सच्चरित्रता, योग्यता और परिश्रम इन तीनों का योग साधक को अपने कार्यक्षेत्र में उच्च कोटि पर पहुंचाने में सक्षम होता है। प्रत्येक क्षण यह विचार करते रहना चाहिए कि इस क्षण कौन सा कार्य प्रमुख है और कौन सा गौण।

६. शान्ति

(१) राम उपासक सदा सन्तुष्ट रहता है! सन्तोष में शान्ति निहित है। कितनी भी सम्पन्नता और सामर्थ्य मिली हो, यदि सन्तोष नहीं है तो झींकना ही रहता है। जो थोड़ी सी वस्तुओं में सन्तोष कर लेता है वह मुस्कराता रहता है। भूतकाल का इतना ही उपयोग साधक के जीवन में है कि आत्म निरीक्षण करके की हुई भूल को न दुहराने का संकल्प करे। इसके अतिरिक्त भूत-काल के मनन का साधना में कोई स्थान नहीं। साधना तो वर्तमान की बात है। भविष्य के लिये भी कामनाओं का पुल साधक को नहीं बनाना चाहिए। जो हुआ राम आज्ञा से, रामकृपा से हुआ, उसी में मेरा कल्याण निहित है। जो मिला है बहुत है। "सन्तोषी सदा सुखी।" जब मन में दीनता का विकार उठे तब ऐसे करोड़ों व्यक्तियों की ओर देखें जिनको उतना नहीं मिला है। *

*** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी**

"पढ़े-लिखे आदमी में सन्तोष बहुत कम है। कारण कि उसकी इच्छाएं बहुत हो गई हैं, जो पूर्ण होना असम्भव है। मनुष्य में धारणा नहीं रही। धार्मिक जगत भी बहुत चंचल है। इस कारण भगवान् की विभूतियों का अवतरण नहीं होता।"

(२) राम उपासक कभी अभिमान नहीं करता। जो किया या कर सके वह सब राम की दी हुई बुद्धि और सामर्थ्य से हुआ। कर्तापन का अभिमान शोभा नहीं देता। जो है वह राम का दिया हुआ है। जब मन में अभिमान की गंदगी आये तो ऐसे व्यक्तियों की ओर देखें जो महान् हैं, जिन्होंने त्याग और सेवा से महान् कार्य किये। असन्तोष अथवा अभिमान न हो तो शान्ति रहेगी। राम उपासक में ऐंठन नहीं होती, वह सतत अभिमान को क्षीण करता रहता है।

(३) श्रीराम की सर्वज्ञता, सर्व-समर्थता और श्रीराम-कृपा में विश्वास रखते हुए निश्चिन्त रहता है। राम सर्वदयालु है, करुणा-निधान, पतित-पावन, दीनानाथ,

दयासिन्धु। राम सब पर प्रतिक्षण दया करते रहते हैं। राम-कृपा अनन्त है। राम सर्वत्र हैं. हर स्थान पर हर समय हैं। राम सर्वज्ञ हैं, वह अन्तर्यामी भूतकाल, भविष्य-काल और वर्तमान काल की सब जानते हैं। यदि किसी सम्पन्न शक्तिशाली व्यक्ति की मित्रता से सुरक्षा की भावना रहती है तो सर्वशक्तिमान और सर्व दयालु राम की शरण पकड़ने पर पूर्ण सुरक्षा का विश्वास होना चाहिए। दृढ़, अविचल, अडिग विश्वास होना चाहिए। साधक का यह विश्वास होना चाहिये कि जो होता है वह राम के मंगलमय विधान से होता है जो न्याय और दया पर आधारित हैं। राम की समस्त सृष्टि एक विधान से चल रही है। बह विधान मंगलमय है। सबको अपने-अपने विचार, आचार और व्यवहार के अनुसार न्याय मिलता है। शरणागत को तुरन्त राम की दया भी मिलती है। राम की 'याद' उलट कर 'दया' का प्रसाद देती है। साधक को यह विश्वास होना चाहिये कि जो हुआ वह राम-कृपा से हुआ और उसमें कल्याण निहित है। मेरी वर्तमान परिस्थिति मेरी योग्यता से अधिक हो सकती क्योंकि मंगलमय विधान में न्याय है, हां, योग्यता से अधिक हो सकती क्योंकि दया का प्रसाद साधक को मिलता है। शरणागत के लिये क्या उचित है, क्या अनुचित है, यह राम ही जानते हैं, जो सर्वज्ञ है और सर्वत्र है, साधक का यह अविचल विश्वास होना चाहिए कि जो होगा वह राम-कृपा से होगा और उसमें कल्याण अवश्य ही निहित होगा, अतः वह निष्काम रहता है। साधक के जीवन में भविष्य का केवल इतना ही स्थान है कि वह अपने कर्तव्य कर्म की योजना बनाकर उस पर चलता है। श्री महाराज जी अनेक दृष्टान्तों से 'कामना' और 'योजना' में अन्तर समझाया करते थे।

(४) सर्वशक्तिमान राम की शरण में रहते हुए किसी वस्तु व्यक्ति परिस्थिति का भय नहीं। "जब जानकी नाथ सहाय करे तब कौन बिगार सके नर तेरो", "जो राम भजत, उसे राम राखत" साधक अपने मूलभूत विश्वास के आधार पर निर्भर रहता है।

जीवन कला के सार तत्व – २

७. वाणी

(१) जब आवश्यक हो तब ही बोलना चाहिए। चुप रहने का बड़ा प्रभाव होता है। जब बोलना ही हो तब विचार करके बोला जाय, और थोड़ा बोला जाय।

(२) सत्य ही बोलना चाहिए। परमात्मा का रूप हैं, धर्म का मूल है, पुण्यों की जड़ है। वाणी में सत्य विचार में सत्य व्यवहार में सत्य। पूरे जीवन में सत्य। सत्य के बराबर कोई तप नहीं। सत्यवादी का स्वाभिमान सुरक्षित रहता है। सत्यवादी का हृदय से आदर होता है, ऊपर से भले ही न हो। *

** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी*

"वाणी को नहीं बदलना चाहिये। जो बात कह दी उसमें बदली करना चोरी करने के बराबर है। अपने वचन पर रहना चाहिये। दूसरों की निन्दा करना बहुत खराब है। अपनी बड़ाई का गोबर जमा नहीं करना चाहिये। जब भला आदमी गंदे आसन पर बैठना पसन्द नहीं करता तो भगवान हमारे राग द्वेष पूर्ण अन्तःकरण में कैसे बैठ सकेंगे।"

(३) शब्द जो बोले जाय वह प्रिय होना चाहिए, स्पष्ट होना चाहिए। गंभीरता से और कोमल स्वर में बोलना चाहिए। नम्रता से बोलना है, शिष्टता से बोलना है, मधुर बोलना है। शीतल वाणी बोलने वाले और सुनने वाले दोनों के लिए हितकर है, दोनों को प्रसन्न करती है।

(४) वाणी हितकर होना चाहिए। राम-संबंधी, साधना-संबंधी, कर्तव्य-संबंधी चर्चा, दूसरों के गुणों की चर्चा, उचित कार्यों में दूसरों का उत्साह बढाना यह सब हितकर वाणी है।

(५) साधक में परनिन्दा का दोष और स्वप्रशंसा का प्रमोद नहीं होना चाहिए। परनिन्दा अथवा स्वप्रशंसा करना, दुर्बलता और हीनता का द्योतक है। जो महान् होता है, वह दूसरों की निन्दा और अपनी प्रशंसा नहीं करता। अपनी निन्दा सुनने का साहस है तो निज के सुधार में बड़ी सहायता मिलती है। *

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"स्त्री पुरुषों की निन्दा करना अच्छा नहीं। रावण जैसे कार्य करो और राम बनना चाहो तो यह सम्भव नहीं। कोई काम किया हो तो उसे अच्छा करके बताओ। निन्दा को प्रशंसा से जीतना चाहिये।"

(६) साधक व्यर्थ चर्चा में अपना बहुमूल्य समय नष्ट नहीं करता। व्यर्थ की चर्चा और गप्पें करना, दुनिया भर की छोटी बड़ी बातें सुनना अथवा कहना सब प्रमाद है, और समय व सामर्थ्य का अपव्यय है। जिस चर्चा का अपनी साधना में कोई उपयोग नहीं, उससे समय बचाकर उपयोगी कार्य और नाम जप का रसास्वादन करना चाहिए। अकारण ही वाद-विवाद में उलझना मूर्खता है। जहां बोलना कर्तव्य नहीं हो, वहां हर बात के खण्डन करने का कोई अपना ठेका नहीं है।

८. न्याय

राम उपासक न्यायप्रिय होता है। जो जिसका अधिकार हो उसके अधिकार की रक्षा करनी चाहिए।

९. मर्यादा

साधक अपने कर्तव्य परायणता में, और प्रत्येक कर्म के सम्पादन शास्त्र, संविधान और विधि में बताई हुई मर्यादा का सदा ध्यान रखता हैं।

१०. उदारता

(१) चार प्राकृतिक बातें कभी नहीं भूलना है :-

(क)प्रत्येक व्यक्ति को सीमित योग्यता और सीमित सामर्थ्य मिली है।

(ख)अपनी सीमित बुद्धि और परिस्थिति के अनुसार सबके संकल्प, विचार और कर्म होते हैं।

(ग) सबका स्वभाव अलग-अलग होता है।

(घ) सबमें गुण भी हैं, दोष भी हैं।

(२) क्रोध के वेग को सहने से मानव देवता बनता है। दूसरों के संकल्प, विचार, कर्म मेरी इच्छानुसार हों, ऐसा चाहना अनाधिकृत है। हो सकता है दूसरे की बात ठीक है और मेरी ही भूल हो। क्रोध पाप का मूल है। *

श्री स्वामी जी महाराज की वाणी

"यदि किसी में क्रोध है और उसने क्रोध को नहीं जीता तो सत्संग में जाने का कोई लाभ नहीं।

गन्दे घर में रहना तुम भी पसन्द नहीं करते हो तो श्रीराम आपके मलिन हृदय में कैसे रह सकता है। जहां क्रोध होता है वहां मैल होता है। मैली आत्मा में राम कैसे आ सकता है? राम और क्रोध एकसाथ नहीं रह सकते। अन्तःकरण कपटरहित होना चाहिये।"

(३) क्षमा शान्ति का मूल है। किसी से भूल हुई हो तो क्षमा कर देना, और क्षमा का प्रदर्शन नहीं करना है। क्षमाशीलता बैरभाव को खा लेती है।

(४) विनम्रत्ता मानव का आभूषण है, भक्त का स्वभाव है, महानता का चिन्ह है। किसी को कुछ दे न सके, तो भी प्रसन्नता देने का तो प्रयास करना ही है। जहां तक बने किसी को अप्रसन्न नहीं होने देना है। *

** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी*

"मनुष्य को अपने जीवन को संयमी बनाना चाहिये। अहंकार को दूर रखना चाहिये। मान नहीं आने देना चाहिये। उससे साधना में बाधा आती है। विनय बहुत आनी चाहिये। मान को विनय से और क्रोध को प्रीति से जीता जा सकता है। मान और क्रोध को जीतने का और कोई तरीका नहीं है। जब तक विनय, प्रीति और सेवा नहीं तब तक साधना चलती नहीं, उसमें वह बाधक हो जाती है। अतः क्रोध को प्रीत से, मान अहंकार को विनय और सेवा से, जीतना चाहिये। सेवा घर का श्रृंगार और सत्संग की शोभा है। बड़ा वह है जो बड़ा सेवक हो। जो सेवक होगा वही निराभिमानी होगा। गोस्वामी जी में भक्ति सेवाभाव श्रीराम के जीवन से आया, जैसे भील भीलनी से मिलना, निषाद को गले लगाना, उनको सेवा स्वीकार करना आदि उनसे आया।"

(५) अपनी निन्दा को गंभीरता से सुनना और अन्तरावलोकन करना अपनी भूल सुधारने का सुअवसर है। अपनी भूल सुधारने और अपने प्रति न्याय करने में अपना ही उत्थान है।

(६) सबके कल्याण के लिए नित्य प्रार्थना करना चाहिए। दुःखी को देखकर सहज करुणित, और सुखी को देखकर सहज प्रसन्न होना चाहिए। राम ने जो मुझे योग्यता सामर्थ्य प्रदान की-वह लाखों को नहीं मिली है। किसी से कुछ न चाह कर सबके काम आना चाहिए। सुख देने की लालसा ही सुख की दासता से मुक्त करती है। परहित के समान धर्म नहीं है। किसी को पीड़ा पहुँचाने के समान नीचता नहीं है। देश-सेवा सर्वोपरि है। *

**** श्री स्वामी जी महाराज की वाणी***

"अपनी वृत्तियों को कोमल, मधुर, शान्त बनाना आचार है। जैसे कोई बाहरी चीजों से कुरूप को ढंकने से कोई अच्छे आचार वाला तो नहीं बन सकता ....साधक का जीवन निराला होना चाहिये। क्रोधी, झगड़ालू जीवन होवे तो विशेषता क्या रही? यदि घर में अनबन होवे तो वह औरों से मिलाप क्या करेगा? जिस स्त्री ने अपने सास-ससुर के पैर नहीं दबाये वह यह आशा करे कि उसकी पुत्रवधू उसके पैर दबाये तो यह तो मिथ्या हुआ ना? उसने अहंकार को क्या जीता? ....अन्तर में शीतलता हो। क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष की वृत्तियों से दूर हों तब आचार होता है। मनुष्य का जीवन अन्दर से शुद्ध होना चाहिये, आडम्बरों से नहीं। अपने पारिवारिक जीवन को अच्छा स्वरूप देना चाहिये, कोमलता, मधुरता पैदा होना चाहिए। .... सच्चा त्याग वही है जिसमें घृणा का त्याग है, बैर विरोध का त्याग है, अभिमान का त्याग है। दूसरे को सुख देने के लिये अपने प्राणों तक की ममता न करना सच्चा त्याग है। .... मैं यह पसन्द नहीं करता कि कोई डींग मारता फिरे कि मुझे यह सेवा-कार्य सौंपा गया है। बल्कि चुपके-चुपके यह सेवा-कार्य करे। मान की भूख न हो।"

॥ जय श्री राम ॥

आन्तरिक साधना

प्रेम किससे होता है? क्यों होता है? कब होता है?

यदि हम अपने ही जीवन का गम्भीरता से अध्ययन करें तो इन प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर मिल जाता है।

हमारे जीवन के आरम्भ से अब तक हमारी कुछ आवश्यकताएं रही है जो समय-समय पर बदलती रही हैं। बाल्यावस्था में सबसे पहले माता के दूध की, फिर खिलौनों की, भोजन की, वस्त्रों की, पुस्तकों की **आवश्यकता** रही। युवावस्था में स्वयं के लिये और परिवार के लिए भोजन, वस्त्र, घर और वाहन इत्यादि की **आवश्यकता** रही। अपनी आवश्यकताओं में हमारा अधिक ध्यान रहा। सोते-जागते, उठते-बैठते और काम-काज करते हुए भी अपनी **आवश्यकताओं** में हमारा ध्यान बना रहता है और तब तक बना रहता है जब तक उनकी हमें आवश्यकता रहती है।

हमारा ध्यान उन वस्तुओं में भी रहता है जिन वस्तुओं ने समय-समय पर हमारे मन को **आकर्षित** किया। पड़ोसी के पास या बाजार में देखकर या सुनकर जब किसी वस्तु से हमारा मन **आकर्षित** होता है तब उस वस्तु का हमारे मन में अवश्य ध्यान होता है। किसी को अंगूठी पहने देखकर या कैमरे से फोटो खींचते देखकर यदि हमारा मन **आकर्षित** हुआ तो हमारे मन में अंगूठी या कैमरे का अवश्य ध्यान होता है और तब तक ध्यान रहता है जब तक वह वस्तुएँ हमें **'आकर्षक'** रहती हैं।

संसार में लाखों-करोड़ों वस्तुएँ हैं परन्तु जिन वस्तुओं की न हमें **आवश्यकता** हुई, न हम **आकर्षित** हुए, उनका हमें ध्यान नहीं हुआ, नहीं होता।

इसी प्रकार जो व्यक्ति हमारे निकटवर्ती हैं (माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री इत्यादि) या जिनमें हमने अपनी **आवश्यकताओं** की पूर्ति करने की सामर्थ्य देखी, उनमें भी हमारा ध्यान बना रहा।

इसी प्रकार जिन व्यक्तियों ने समय-समय पर हमें अपने स्वभाव, गुण, कर्म, सेवा, सौन्दर्य आदि से **आकर्षित** किया, उनमें भी हमारा ध्यान रह है।

संसार में लाखों-करोड़ों व्यक्ति हैं परन्तु जिन व्यक्तियों से न तो हमारी **आवश्यकता** पूर्ति की अपेक्षा थी, न हम **आकर्षित** हुए, उनका हमें ध्यान नहीं हुआ।

इसी प्रकार जो परिस्थितियां हमारे लिये "**आवश्यक**" रहीं उनका और जो "**आकर्षक**" रहीं उनका भी सदा ध्यान रहा, परन्तु जिन परिस्थितियों की, न हमें **आवश्यकता** रही, न हम **आकर्षित** हुए, उनका हमारे मन में ध्यान नहीं रहा।

यह संसार क्या है? वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों का एक समूह। हमारे मन में "**आकर्षक**" और "**आवश्यक**" का ध्यान स्वतः 'होता' रहता है, "करना" नहीं पड़ता। यह मन के लिए प्राकृतिक है। अन्य वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों का ध्यान नहीं होता। जितनी अधिक वस्तुएँ, व्यक्ति या परिस्थितियां **आवश्यक** या **आकर्षक** होती हैं उतना ही हमारा ध्यान उनमें बंट जाता है, विभाजित हो जाता है। इस प्रकार हम संसार में उलझते हैं और उलझते रहे हैं।

हमारे जीवन में और है ही क्या? या तो आवश्यकताएँ या आकर्षण। इन दोनों में हमारा "ध्यान" रहता है। इससे सिद्ध है कि हमारा **'मन'** सदा ही सतत "ध्यान" करता है।

बुद्धि "चिन्तन" करती है और प्रत्येक वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति के सत-असत, उचित-अनुचित, आवश्यक-अनावश्यक का निर्णय करती है।

चित्त में हमारे स्वभाव की निधि रखी हुई है। चित्त उस वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति में "एकाग्र' होता है जिसे हम अपना मानते हैं या जिसे अपना करना चाहते हैं। हम जिसमें "अपनत्व" स्थापित कर लेते हैं उसमें "एकाग्रता" होती है।

विश्लेषण

अन्तःकरण के चार विभाग हैं, मन, बुद्धि, चित्त और अहं। मन से ध्यान, बुद्धि से चिन्तन, और चित्त से एकाग्रता होती है।

निज जीवन के उपर्युक्त विश्लेषण से ये निष्कर्ष निकलते हैं :–

१. आवश्यक और आकर्षक का मन में स्वतः "**ध्यान**" होता है। जो हमें आवश्यक या आकर्षक नहीं होते उनका ध्यान नहीं होता। जितनी अधिक वस्तुएँ, व्यक्ति या परिस्थितियां आकर्षक या आवश्यक होती हैं उतना ही उनमें ध्यान बंटा रहता है।

२. "**चिन्तन**" के द्वारा बुद्धि निर्णय करती है। चिन्तन से 'विवेक शक्ति' जागृत होती है। विवेक के आदर से वस्तुओं एवं परिस्थितियों का सदुपयोग होता है और व्यक्तियों की मर्यादानुसार सेवा होती है। इसके विपरीत विवेक के अनादर से वस्तुओं में ममता, व्यक्तियों में आसक्ति, एवं परिस्थितियों में मोह होता है।

३. जिस वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति को हम अपना मानते हैं या अपना बनाना चाहते हैं उसमें चित्त की "**एकाग्रता**" होती है

ठीक ऐसे ही, जब तक हमें राम की आवश्यकता नहीं होती या राम हमारे मन को आकर्षित नहीं करते, तब तक राम का ध्यान नहीं होता।

१. जब हमें राम की आवश्यकता होती है या उनमें हमारा मन आकर्षित होता है तब मन से राम का "**ध्यान**" होता है (मैडिटेशन)। राम का ध्यान होने से राम में **श्रद्धा** और **विश्वास** उत्पन्न होता है।
२. जब हम राम के नाम. रूप, गुण, लीला, स्वभाव इत्यादि का **'चिन्तन'** करते हैं (कन्टैम्पलेशन) तब हमारे मन में विवेक जागृत होकर हमें बताता है कि **'सब राम का है'** और **'सब राम के हैं'**। अतः **समर्पण** का भाव उदय होता है, पुष्ट होता है, दृढ़ होता है और अडिग होता है।
३. जब राम से अपनत्व की भावना जागृत होती है अर्थात् जब हम राम को अपना बनाना चाहते हैं या राम के हो जाना चाहते हैं तब **'एकाग्रता'** होती है (कन्सन्ट्रेशन)। चित्त राम में एकाग्र होता है। "**मैं राम का हूँ**" (**शरणागति**)। "**राम मेरा है**" **(प्रीति)**। राम में अपनत्व का नाम **प्रेम** है।

जैसे-जैसे संसार की वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों की आवश्यकता और आकर्षण कम होता है वैसे-वैसे उनमें से ध्यान हटता जाता है और **मन** में राम का **ध्यान** अधिक होने लगता है। जैसे-जैसे संसार का चिन्तन कम होता जाता है वैसे-वैसे **बुद्धि** राम का अधिक **चिन्तन** करती है। जैसे-जैसे वस्तुओं, व्यक्तियों या परिस्थितियों में अपनापन कम होता है वैसे-वैसे **चित्त** राम में अधिक **एकाग्र** होता है और राम में **प्रेम** बढ़ता जाता है, दृढ़ होता जाता है।

उपर्युक्त विश्लेषण हमारे इन प्रश्नों का उत्तर देता है कि हमारा मन राम में क्यों नहीं लगता? हमारा मन राम में एकाग्र क्यों नहीं होता? जब हम राम का ध्यान करने बैठते हैं तब मन यहां-वहां क्यों जाता है?

इन सब प्रश्नों का उत्तर यही है कि हमारा मन वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों में अधिक आकर्षित होता है, इसलिए उनमें ध्यान होता है, फिर चिन्तन होता है और फिर एकाग्रता होती है। राम में ध्यान कम लगता है, चिन्तन कम होता है, एकाग्रता कम होती है। यह निष्कर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण है और हर समय ध्यान में रखने योग्य है। यह निष्कर्ष साधना का मूल-मन्त्र है।

यहां पर हम एक बार फिर अपने जीवन का अध्ययन करें तो निर्विवाद सिद्ध होता है कि हमारे जितने दोष हैं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, द्वेष, ईर्ष्या इत्यादि) वे सब आकर्षण से सम्बद्ध हैं :

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात् संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥ (गीता २/६२)
चिन्तन विषय का संग विषयों में बढ़ाता है तभी ।
फिर संग से हो कामना, हो कामना से क्रोध भी ॥ ***(श्री हरिगीता)***

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥ ***(गीता २/६३)***
फिर क्रोध से है मोह, सुधि को मोह, करता भ्रष्ट है ।
यह सुधि गये फिर बुद्धि विनशे बुद्धि विनशे नष्ट है ॥ ***(श्री हरिगीता)***

इससे भी यह निष्कर्ष निकला कि हम अपने आकर्षण जितने कम करते जाएंगे उतना अधिक ध्यान, चिन्तन और एकाग्रता राम में होने लगेगी।

अखण्ड स्मृति

जब वस्तुओं, व्यक्तियों और परिस्थितियों में हमारा ध्यान, चिन्तन व एकाग्रता रहती है तब आत्मा में जो राम की अन्तर्निहित स्मृति है वह सोई हुई रहती है।

जब आकर्षक हट जाते हैं तब आत्मा में परमात्मा की एक स्मृति जागृत होती है। स्मृति के जागृत होते ही तल्लीनता होती है (तत् + लीनता) अखण्ड स्मृति होने पर आत्मा-परमात्मा का मिलन होता है। एकत्व होता है। यही साधना का पर्यवसान है।

जब यह है तो परमात्मा से आत्मा की दूरी कितनी है और मिलन में देरी कितनी है? इसका उत्तर सहज और स्पष्ट है। उतनी ही दूरी और देरी है जितनी कि आकर्षक से हटने में है। मन से आकर्षक के हटते ही राम आ जाते हैं। राम के आते ही विषय आकर्षक हट जाते हैं।

"जहां काम तहां राम नहीं, जहां राम नहीं काम ।
तुलसी कबहुं न रह सके रवि रजनी एक ठाम ॥"
"प्रेम गली अति सांकरी ता में दो न समाए ॥"

इस तत्व को सन्त-महात्माओं ने विभिन्न प्रकार से निरूपित किया है, यथा,

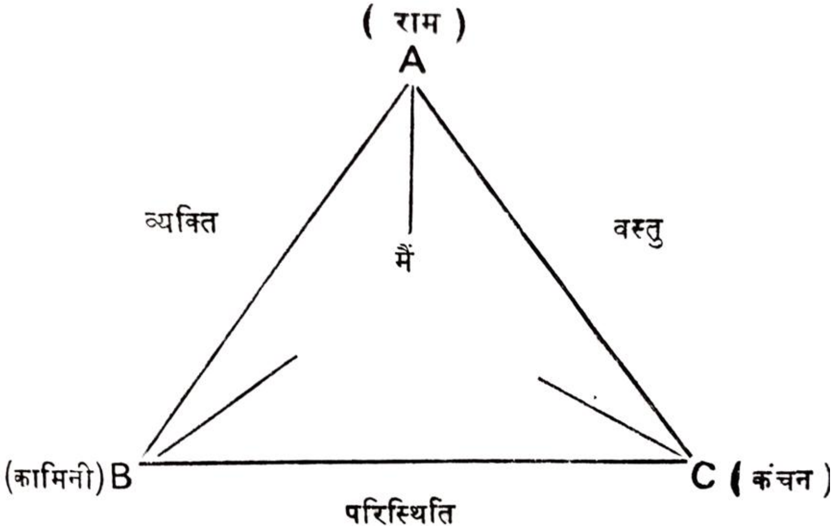
"यः स मामेति पाण्डव" ***गीता ११/५५***

मेरे लिये जो कर्म-तत्पर नित्य मत्पर भक्त है ।
पाता मुझे वह जो सभी से वैर हीन विरक्त है ॥ ***(श्री हरिगीता)***

जीवन दर्शन का एक रूपक

"यह" (जगत) एक विशाल त्रिकोण-भवन है। बहुत ऊंची-ऊंची तीन दीवारें हैं जो इस त्रिकोण की भुजाएँ हैं (वस्तु, व्यक्ति और परिस्थिति)।

नीचे चौक में "मैं" (जीव) खड़ा हूं। बाहर निकलने का कोई मार्ग नहीं है। हाँ, ऊपर सब खुला हुआ है। चढ़ सकूं, तो बाहर निकल सकूं।



इस त्रिकोण में तीन भुजाएं हैं।

१. एक दीवार (भुजा) में ऊपर से वस्तुओं की डोरियां लटक रही हैं परन्तु प्रत्येक वस्तु की डोरी एक घिर्री से बंधी है, इसलिये वस्तु तो मिल सकती है परन्तु उसे पकड़ कर ऊपर नहीं चढ़ सकते।

२. दूसरी दीवार (भुजा) में ऊपर से व्यक्तियों की डोरियां लटक रही हैं, डोरी पकड़ने से व्यक्ति से सम्पर्क तो हो सकता है, व्यवहार तो हो सकता है, परन्तु यह भी घिर्रियों से बंधी है इसलिए पकड़ कर ऊपर चढ़कर पार नहीं हो सकते।

३. तीसरी दीवार (भुजा) से परिस्थितियों को डोरियां लटक रही हैं। यह भी घिर्रियों से बंधी हुई है। इन पर चढ़कर भी पार होने का प्रयास व्यर्थ है।

इस त्रिकोण में तीन शीर्ष हैं: A (ए), B (बी), C (सी)। प्रत्येक शीर्ष से एक सुदृढ़ हुक में बंधी मोटी डोरी लटक रही है। "बी" शीर्ष पर "कामिनी" बैठी है, "सी" शीर्ष पर कंचन। यह दोनों डोरियां बहुत बलवती हैं। इनको पकड़ कर चढ़ते जाइये, चढ़ते जाइये।

"बी" शीर्ष से लटकने वाली डोरी का नाम है "काम", बड़ी चिपकने वाली डोरी है। जितना चढ़ते जाइए, उतना चिपकती जाती है। "सी" से लटकने वाली डोरी का नाम है "लोभ", यह भी बड़ी चिपकनी है। जितना चढ़ते जाइये उतना ही चिपकती जाती है।

इन दोनों डोरियों पर चढ़ते-चढ़ते उम्र बीत रही है। न तो शीर्ष "बी" पर पहुंच पाये, न कभी पहुंच पायेंगे और न शीर्ष "सी" पर पहुंच पाये, न कभी पहुंच पायेंगे।

हाँ, श्रीराम-कृपा से शीर्ष "बी" की डोरी अपने हुक "कामिनी" को लिए हुए धड़ाक से नीचे गिर सकती है। और इसी प्रकार "सी" की डोरी अपने हुक "कंचन" को लिए हुए धड़ाक से नीचे गिर सकती है।

शीर्ष "ए" पर "राम" हैं। इस हुक से जो बंधी हुई डोरी है, उसका नाम है "भक्ति" और वह तीन लड़ों से गुंथी हुई है (समर्पण, शरणागति और प्रीति)। यह डोरी बहुत ही सुदृढ़ है, परन्तु फिसलनी है। चढ़ने के लिये अत्यन्त सावधानी चाहिये।

केवल "ए" से लटकने वाली डोरी है जो पार लगा सकती है।

"बी" और "सी" से लटकने वाली डोरियों को छोड़ना होगा। "ए" डोरी पर सतत चढ़ने का नाम है "अखण्ड स्मृति"।

अखण्ड स्मृति की साधना

साधक वह है जिसमें चार बातें हों :

१. उसका एक "**साध्य**" हो जिससे एकत्व होना है, जिससे मिलन होना है।
२. उसे साधना के लिये उपलब्ध "**साधन**" (शरीर, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) की ठीक पहचान हो जिनके द्वारा साधना करनी है।
३. उसने अपना "**साधना**" पथ, निर्धारित कर लिया हो, और
४. उसमें साधना-पथ पर चलने की निष्ठा हो "**दृढ़ निश्चय**" हो।

आत्मा-परमात्मा की स्मृति हर समय यानी चौबीसों घण्टे रहे अर्थात् स्मृति अखण्ड रहने की व्यावहारिक कला भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को सिखाई है।

यह कला इतनी व्यावहारिक और सहज है कि प्रत्येक साधक इसको अपने दैनिक जीवन में चरितार्थ कर सकता है। शर्त यह है कि साधक में उपर्युक्त चार गुण हों।

चौबीसों घण्टे स्मृति अखण्ड रहने की कला यह (निम्न दिनचर्या) है :–

(१)

प्रातः ३ से ५ बजे तक "ध्यान" (मैडिटेशन) "चिन्तन" (कन्टैम्पलेशन) और "एकाग्रता" (कन्सन्ट्रेशन) करे।

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय |
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशय: ॥ ***गीता १२/८***

मुझमें लगा ले मन मुझी में बुद्धि को रख सब कहीं ।
मुझमें मिलेगा फिर तभी इसमें कभी संशय नहीं ॥ ***(श्री हरिगीता)***

ब्रह्म मुहूर्त में शक्ति और स्फूर्ति देने की शक्ति है और यह वह पावन बेला है जब ऋषि-मुनि-सन्त, महात्मा और साधक भगवान में तल्लीन होते हैं और तल्लीनता की तरंगें समस्त ब्रह्माण्ड में फैल कर वातावरण को पवित्र, ओजस्वी और शक्तिशाली बनाती हैं। उस समय जो कुछ भी किया जाता है उसमें सफलता अवश्य मिलती है।

भगवान डंके की चोट घोषित करते हैं - **"अत ऊर्ध्वं न संशयः"** यानी तू अवश्य, हाँ, अवश्य, ऊपर उठेगा, उन्नति करेगा, साधना में प्रगति होगी। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

आराध्य श्रीराम त्रिकुटी में ।
प्रियतम सीता राम हृदय में ।
श्री राम जय राम जय जय राम ।
राम राम राम राम रोम रोम में ।

यह ब्रह्म मुहूर्त की साधना प्रत्येक साधक को सुलभ है। सच तो यह है और अनुभव सिद्ध है कि चिन्तन और एकाग्रता आदि जो ब्रह्म मुहूर्त में होती है वह दिन के अन्य किसी समय में नहीं होती।

(२)

जब ध्यान करने में इधर-उधर मन भागता हो तो अभ्यास करो।

अथ चित्त समाधातु न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय ॥ गीता १२/९

मुझमें धनंजय! जो न ठीक प्रकार मन पाओ बसा ।
अभ्यास-योग प्रयत्न से मेरी लगा लो लालसा ॥ ***(श्री हरिगीता)***

पहला अभ्यास :

मनोनिग्रह करो :–

यतो यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥ गीता ६/२६

यह मन चपल अस्थिर जहां से भाग कर जाए परे ।
रोके वहीं से और फिर आधीन आत्मा के करे ॥ *(श्री हरिगीता)*

दूसरा अभ्यास :

नाम जप करो :–

प्रातः ५ बजे के बाद जब हम अपने दैनिक शारीरिक धर्म में लग जाते हैं-स्नान, कलेवा, इत्यादि, बालक-बालिकाओं के अध्ययन की व्यवस्था, परिवार की सेवा इत्यादि इत्यादि, उस समय चिन्तन और एकाग्रता तो नहीं बन पायेगी परन्तु फिर भी "स्मृति" अखण्ड रहे, उसकी कला भगवान ने बताई है : (नाम जप का) अभ्यास। नाम जप का अभ्यास चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते और काम-काज करते हुए कर सकते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम ।
राम राम राम राम राम मुख में ॥
श्रीराम जय राम जय जय राम ।
राम राम राम राम राम मन में ॥
श्रीराम जय राम जय जय राम ।
राम राम राम राम स्वांस स्वांस में ॥
श्रीराम जय राम जय जय राम ।
राम राम राम राम राम राम राम ॥

तीसरा अभ्यास :

सर्वत्र दर्शन करो :–

"सातवं सम मोहि भय जग देखा।"

"जड़ चेतन जग जीव जत सकल राम भय जानि।
बंदउँ सब के पद कमल सदा जोरि जुग पानि॥"

"सियाराम-भय सब जग जानी।
करहुं प्रणाम जोरि जुग पानी॥"

"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि सच मे न प्रणश्यति॥" ***गीता ६/३०***

जो देखता मुझमें सभी को और मुझको सब कहीं।
मैं दूर उस नर से नहीं वह दूर मुझसे है नहीं॥ ***(श्री हरिगीता)***

श्रीराम जय राम जय जय राम।
राम राम राम राम जन जन में।
श्रीराम जय राम जय जय राम।
राम राम राम राम कण कण में॥

(३)

फिर प्रातः ८ या ९ बजे से सायं तक, जब साधक अपनी आजीविका का कार्य या सेवा कर्तव्य कर्म करता है (जैसे डाक्टर रोगी की जांच करता है, विचार करता है, औषधि लिखता है : जज केस पढ़ता है, बहस सुनता है और निर्णय लिखता है : इंजीनियर अध्ययन-मनन करता है, पुल या भवन निर्मित करता है, इत्यादि)।

सब कार्य करते हुए भले ही चिन्तन न हो और एकाग्रता न हो, तब भी अखण्ड स्मृति बनाए रखने के लिए यह कला बताई है कि **जो कुछ करो उसे राम-काज समझते हुए करो।**

अपने ऊपर कृतत्व का बोझ मत लादो। जो कुछ होता है श्रीराम आज्ञा, श्रीराम-कृपा से होता है। राम के मंगलमय विधान से होता है।

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।

मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥ *गीता १२/१०*

अभ्यास भी होता नहीं तो कर्म कर मेरे लिये ।

सब सिद्धि होगी कर्म भी मेरे लिए अर्जुन किए ॥ *(श्री हरिगीता)*

(४)

इस प्रकार प्रतिदिन प्रातः से सायं तक अखण्ड स्मृति बनाए रखने की कला को चरितार्थ करते हुए जब सायं घर लौटे तो साधक पुनः नाम जप और सर्वत्र दर्शन का अभ्यास कर सकते हैं।

(५)

सोने के पहले दिन भर का सिंहावलोकन करके अन्य मनुष्य तो अपनी सफलता पर अभिमान करता और असफलता पर ग्लानि एवं क्रोध करता है, परन्तु साधक अपने सब कर्मों के फल को श्रीराम के चरणों में समर्पित करता है।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।

सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥ *गीता १२/११*

यह जब न हो तब आसरा मेरा लिये कर योग ही ।

कर चित्त-संयम कर्म-फल के त्याग सारे भोग ही ॥ *(श्री हरिगीता)*

साधक को दृढ़-विश्वास रखना चाहिए कि वह तो यंत्र-मात्र है।

"तुम हो यन्त्री, मैं यन्त्र,
काठ की पुतली मैं, तुम सूत्रधार।
तुम करवाओ, कहलाओ,
मुझे नचाओ निज इच्छानुसार॥

मैं करूँ, कहूँ, नित नाचूँ
परतन्त्र, न कोई अहंकार।
मन मौन नहीं, मन ही न पृथक्,
मैं अकल खिलौना, तुम खिलार॥"

इसी श्रद्धा विश्वास से साधक सर्व कर्म फल श्रीराम के चरणों में अर्पित करता है और पैर फैलाकर, चादर तानकर, निश्चिन्त होकर विश्राम करता है।

(६)

सोने के पहले किया हुआ जप रात्रि-भर स्वतः चलता रहता है, जिसे "अजपा जप" कहते हैं। जब आंख खुले और ऐसा लगे कि मैं जप कर रहा था तब समझना चाहिये कि जप सिद्ध हो गया।

यज्ञानां जपयज्ञोस्मि स्थावराणां हिमालयः। ***गीता १०/२५***

भगवान ने कहा : तमाम यज्ञों में मैं जप-यज्ञ हूँ।

इस प्रकार चौबीसों घण्टे अखण्ड स्मृति की साधना की कला भगवान श्रीकृष्ण ने निरूपित की और यह सर्वथा व्यावहारिक है। उसको अपने जीवन चरितार्थ न करने के लिए हम भले ही कोई बहाने ढूंढें अथवा अपने आपको अन्य प्रकार समझा कर धोखा देते रहें यह दूसरी बात है।

अखण्ड स्मृति के ही नाम है, तल्लीनता या तन्मयता या अनन्यता, जो मानव जीवन की पूर्णता है।

प्रार्थना

वृद्धि आस्तिक भाव की, शुभ मंगल संचार ।
अभ्युदय सद्धर्म का, राम नाम विस्तार ॥

卐

ॐ सर्वेषां स्वस्तिर्भवतु सर्वेषां शान्तिर्भवतु ।
सर्वेषां पूर्णं भवतु सर्वेषां मंगलं भवतु ॥

मेरे राम! सबका कल्याण हो । सबको शान्ति प्राप्त हो ।
सब में पूर्णता आये । सब सौभाग्यशाली हों ।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुखभाग्भवेत् ॥

मेरे राम! सब सुखी हों । सब योग्य हों ।
सब परस्पर एक-दूसरे का भला देखें ।
कोई भी दुःख से पीड़ित न हो ।

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!
भीतर शान्तिः! बाहर शान्ति!! सर्वत्र शान्ति!!!

स्तुति

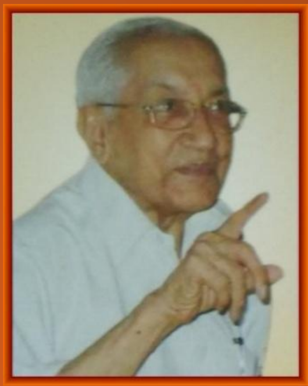
सर्व लोक में है रमा, तू मेरा भगवान् ।
ओंकार प्रभु राम तू, पावन देव महान् ॥ १ ॥
सब जन जिस में बस रहे, सो है तू मम राम।
तुझमें रमते योगिजन, है सार्थक सुनाम ॥ २ ॥
तेरी महिमा का प्रभु, कोई न पाये पार।
आदि अन्त से रहित तू, लीला रूप अपार ॥ ३ ॥
आया तेरे द्वार पर, दुःखी अबल तव बाल।
पावन अपने प्रेम से, करिये इसे निहाल ॥ ४ ॥
पावन तेरा नाम है, पावन तेरा धाम।
अतिशय पावन रूप तू, पावन तेरा काम ॥ ५ ॥
परम पवित्र सुध्यान है, परम पुण्यमय जाप।
पावन तेरा कीर्तन, नाशक पातक पाप ॥ ६ ॥
जिन जन मन में तू बसे, सो हो पावन रूप।
पतित पावन सुनाम जप, पाये परम स्वरूप ॥ ७ ॥
निश्चय अपने नाम का, भक्ति प्रेम प्रकाश।
दे निश्चय निज रूप का, अपना दृढ़ विश्वास ॥ ८ ॥
बाधा विघ्न विनाश हों, हो सब शुभ संचार।
जहाँ राम तव नाम का, गूंजे जय-जयकार ॥ ९ ॥
परमपिता परमात्मन्, तुझ तक मेरी दौड़।
यथा सिन्धु में काक को, पोत एक ही ठौर ॥ १० ॥
अपनी छाया में सदा, मुझे दीजिए स्थान।
शीतल छाया शान्त में, बैठ करूँ गुणगान ॥ ११ ॥
दीन हीन जन जानकर, शरण पड़े को तार।
पतित पावनपन प्रभो, अपना बिरद विचार ॥ १२ ॥

कर कृपा ऐसी प्रभु, प्रेम अमीरस घूंट।
किये पान मैं तो फिरूँ, निर्भय चारों कूट ॥ १३ ॥
तेरे जन के काम में, सदा रहूं मैं लीन।
तेरी भक्ति गंगा में, बन जाऊँ मैं मीन ॥ १४ ॥
तेरे पथ के प्रेम से, चले चित्त न चूल।
लाखों विघ्न विरोध पर, तुझे न जाऊँ भूल ॥ १५ ॥
उत्तम मेरे कर्म हों, राम इच्छा अनुसार।
तुझमें सब जन ही बनें, रत्न पिरोए तार ॥ १६ ॥
मार्ग सत्य दिखाइये, सन्त सुजन का पाथ।
पाप से हमें बचाइये, पकड़ हमारा हाथ ॥ १७ ॥
भक्ति प्रेम से सींचिए, करके दया दयाल।
अपनी श्रद्धा दान कर, सबको करो निहाल ॥ १८ ॥
तेरी जय-जयकार हो, दश-दिश चारों कूंट।
नाम अमीरस मधुर का, पान करे सब घूंट ॥ १९ ॥
जय जय तेरी बोल कर, तेरे गीत को गाय।
तेरा यश वर्णन करूँ, तेरा नाम जपाय ॥ २० ॥
निज निश्चय का तेज दे, प्रीति किरण के साथ।
साथ रहे शुभ कर्म में, मंगलमय तव हाथ ॥ २१ ॥
मुझे भरोसा राम तू, दे अपना अनमोल।
रहूं मस्त निश्चिन्त मैं, कभी न जाऊँ डोल ॥ २२ ॥
मनसा-वाचा-कर्मणा, से हूँ मेरे राम।
अर्पित तेरी शरण में, सहित कर्म शुभ काम ॥ २३ ॥

(श्री स्वामी जी महाराज कृत 'भक्ति प्रकाश' से एक चयन)

व्याख्या लेखक

न्यायमूर्ति श्री शिवदयाल जी श्रीवास्तव



श्री शिवदयाल श्रीवास्तव का जन्म २८ फरवरी, १९१६ को ग्वालियर में हुआ। आपके पिता श्री परमेश्वरदयाल श्रीवास्तव ग्वालियर के वरिष्ठ अधिवक्ता तथा ग्वालियर रियासत के दीवाने मजलिस व दीवाने कानून के सदस्य थे। जब आप तीन वर्ष के थे, आपकी माता श्रीमती गिरिजेश्वरी देवी ने श्री राम चरित मानस की चौपाइयां याद करा के आपमें आध्यात्म और भक्ति बीजारोपण किया।

आगरा कालेज, आगरा से एलएल. बी. डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् आपने हाइकोर्ट व सुप्रीमकोर्ट में प्रेक्टिस की। नवम्बर 1958 में हाइकोर्ट मध्य प्रदेश के जज बने। 1975 में मध्य प्रदेश हाइकोर्ट के चीफ जस्टिस का पद सुशोभित किया। रिटायर होने पर सुप्रीमकोर्ट में सीनियर एडवोकेट के रूप में कार्य करते रहे। आप विधि प्रकाशन समिति, भारत सरकार के अध्यक्ष भी रहे। 1989 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने आपको उच्चतम मानद उपाधि "विधि वाचस्पति" से विभूषित किया।

आप एक सच्चे कर्मयोगी थे और साथ ही श्री राम के अनन्य भक्त। दैनंदिन पूजा, भक्ति एवं जाप आपके नित्य कर्म और आध्यात्मिक उन्नति के मूल थे। आप विद्यार्थियों के सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास एवं माता पिता, शिक्षक और विद्यार्थियों में जागरूकता के लिए प्रयासरत रहे। आपने ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग को अपनी जीवन शैली में उतार कर एक आदर्श प्रस्तुत किया। पुस्तकें लिखना व संकलन कर प्रकाशित करना आपके जीवन का अभूतपूर्व अंग था। आपकी पुस्तकें विधि सम्बन्धी, धार्मिक एवं विद्यार्थियों के लिये थीं। तीनों विषयों पर आपके अनेक प्रकाशन हुए।

विधि संबंधी कृतियाँ: बी. परमेश्वर दयाल एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव डिक्शनरी (इंगलिश-हिन्दी), संविधान और विधियाँ (मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी), मध्य प्रदेश भू विधि (विधि प्रकाशन, भारत सरकार) **धार्मिक/आध्यात्मिक पुस्तकें:** शरणागति पथ, साधना पथ, मानस अमृत, गीता अमृत, गीता का सरगम, *'अमृतवाणी' की व्याख्या*, श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये, Sadhana Path (भारतीय विद्या भवन) **विद्यार्थियों के लिये शिक्षा:** बाल मानस, विकसित व्यक्तित्व, सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास (सस्ता साहित्य मंडल द्वारा तीन भाग में प्रकाशित), सुखी सार्थक जीवन

१ अक्तूबर, २००३ को ब्रह्ममुहूर्त में आपने शरीर त्याग दिया और आपकी पुण्य आत्मा श्री रामजी के चरणों में लीन हो गयी।